| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| परशुराममन्त्रादि | ६७० | १७ |
| परशुरामयन्त्रम् | ११४२ | २ |
| पशुदानविधिः | १०६४ | २० |
| पशुपक्ष्यादिदैवतानि | १०७८ | २ |
| पशुपाशविमोचनीगायत्री | १०६५ | १ |
| पशुपाशविमोचनीगायत्र्यन्तरम् | १०६५ | ९ |
| पशुभावः | ८६४ | २ |
| पश्वनुकल्पबलिः | १०६३ | ४ |
| पात्रभेदाः | २०१ | ६ |
| पात्रविशेषः | १९२ | १५ |
| पात्रस्थापनदिङ्नियमः | २७७ | १६ |
| पात्रासादनम् | १९२ | १० |
| ,, | २७७ | २ |
| पाद्यपात्रम् | १४८ | १५ |
| पाद्यपात्रस्थापनम् | ३३६ | २४ |
| पाद्यादिद्रव्याणि | १९६ | २ |
| पारिजातसरस्वतीमन्त्रादि | ८७१ | ९ |
| पाशुपतास्त्रमन्त्रादि | ७०७ | ५ |
| पाशुपतास्त्रयन्त्रम् | ११४५ | २१ |
| पितृदीक्षानिषेधः | ५१ | २४ |
| पितृदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५२ | १३ |
| पीठकुम्भे विशेषः | ३४५ | ११ |
| पीठनवशक्तयः | २६४ | १५ |
| पीठन्यासः | ३३१ | २ |
| पीठपूजा | ३४० | १४ |
| ,, | ३६० | ९ |
| पीठपूजाप्रकारः | २०९ | २४ |
| पीठपूजा वैष्णवे | ३६० | १३ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| पीठलक्षणम् | १४८ | ११ |
| पीठशक्तिपूजाप्रकारः | २११ | १५ |
| पीठस्थानानि | ४८२ | १५ |
| पीठस्थानोत्पत्तिः | ४८३ | ८ |
| पीठे कुम्भस्थापनम् | ३४२ | ३ |
| पुत्रिणो महाष्टमीव्रतनिषेधः | ९७७ | ७ |
| पुरश्चरणकर्त्तुर्भोजनानियमः | ५४४ | ४ |
| पुरश्चरणकर्त्तुर्भोजनपात्रम् | ५४४ | १६ |
| पुरश्चरणकर्त्तुः पेयजलम् | ५४४ | १५ |
| पुरश्चरणकालः | ४१६ | १९ |
| ,, | ५१९ | २० |
| पुरश्चरणदेशाः | ४२० | २० |
| पुरश्चरणपदार्थः | ४१३ | २ |
| पुरश्चरणपूर्वकृत्यम् | ४८४ | २२ |
| पुरश्चरणप्रयोजनम् | ४१३ | ५ |
| पुरश्चरणभेदाः | ५६३ | ७ |
| ,, | ५६८ | १८ |
| पुरश्चरणभावश्यकम् | ४१३ | १३ |
| पुरश्चरणम् | ५१५ | २० |
| पुरश्चरणस्वरूपम् | ४१४ | ४ |
| पुरश्चरणार्थं भूमिपरिग्रहः | ४७० | २३ |
| पुरश्चरणीयवस्त्वनुकल्पः | ७४४ | १८ |
| पुरश्चरणे आपन्नस्य साधनम् | ५१७ | १४ |
| पुरश्चरणे आसनविशेषः | ४२७ | १३ |
| पुरश्चरणे आसनानि | ४२६ | ७ |
| पुरश्चरणे नियमाः | ४२० | १५ |
| पुरश्चरणे निषिद्धदेशाः | ४२३ | १२ |
| पुरश्चरणे निषिद्धान्नानि | ४२५ | १७ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| पुरश्चरणे निषिद्धासनानि | ४२६ | २४ |
| पुरश्चरणे परान्नविचारः | ४२४ | १५ |
| पुरश्चरणे भक्ष्यनियमः | ४२३ | २१ |
| पुरश्चरणे महिषीदुग्धनिषेधः | ४२४ | १३ |
| पुरश्चरणे संकल्पपूर्ववाक्यम् | ५१५ | २२ |
| पुरश्चरणे संकल्पवाक्ययोजना | ५१६ | २ |
| पुरश्चरणे संकल्पार्थं दिशा | ५१५ | २७ |
| पुरश्चरणे सिद्धेरलाभे उपायः | ५५८ | २४ |
| पुरश्चरणे सूतकादौ विचारः | ५५० | ८ |
| पुरुषसूक्तपुरश्चरणम् | ९३५ | ३ |
| पुष्पप्रशंसा | २३८ | २५ |
| पुष्पभेदाः | २३१ | ३ |
| पुष्पाञ्जलिदानम् | ३५४ | १४ |
| पुष्पाभावे तत्प्रतिनिधिः | २३९ | १३ |
| पुस्तकलिखितमन्त्रजपनिषेधः | ४१ | ७ |
| पुंस्त्रीनपुंसकमन्त्राः | ७३ | ६ |
| पूजाद्यसक्तस्य पुरश्चरणम् | ४६४ | १० |
| पूजाद्रव्यसंस्कारः | ३२५ | १० |
| पूजान्ते जपः | ३५४ | १७ |
| पूजान्ते स्तुतिः | ११०६ | २ |
| पूजायन्त्रप्रमाणम् | ५१९ | ११ |
| पूजायन्त्रस्य न्यूनाधिक्ये फलम् | ५१९ | १४ |
| पूजायन्त्रे सुवर्णादिमानम् | ५१९ | १९ |
| पूजासामग्र्यभावे पूजनादि | ३५ | ७ |
| पूर्णपात्रनियमः | ३०७ | १५ |
| पूर्णाभिषेक आवश्यकः | ३९८ | २ |
| पूर्णाभिषेककलशः | ३९९ | ११ |
| पूर्णाभिषेककालः | ३९८ | ७ |
| पूर्णाभिषेकमाहात्म्यम् | ४१० | ९ |
| पूर्णाभिषेकविधिः | ३९८ | १६ |
| पूर्णाभिषेकः | ३९७ | १४ |
| पूर्णाभिषेकार्थं तीर्थजलानि | ४०१ | २३ |
| पूर्णाहुतिः | ३०७ | ४ |
| ,, | ३७९ | १७ |
| पूर्वादिकलशेषु पूजनम् | ३४५ | १६ |
| पूर्वादितः कलशस्थापनम् | ३४५ | १३ |
| पृथग्देवानां बलिः | १०५१ | ७ |
| प्रकृतितत्त्वानि | ३७८ | ४ |
| प्रणवध्यानपुरश्चरणादि | ९१३ | ६ |
| प्रणवाद्युच्चारणे शूद्रस्य चाण्डालत्वम् | ५६ | ८ |
| प्रणामभेदाः | २५९ | १२ |
| प्रत्यङ्गिराप्रकरणम् | ८७६ | ७ |
| प्रत्यङ्गिरायन्त्रम् | ११५७ | २१ |
| प्रमाणग्रन्थनामादि | १२२८ | १४ |
| प्रशस्तपशुलक्षणम् | १०६३ | २४ |
| प्रशस्तमासादि दीक्षायाम् | ७५ | ११ |
| प्राणप्रतिष्ठा | २२२ | १ |
| ,, | ३४८ | १८ |
| प्राणप्रतिष्ठामन्त्रः | १६८ | ११ |
| प्राणवायुः | ५२७ | २४ |
| प्राणशक्तिध्यानम् | ३४८ | १२ |
| प्राणशक्तिन्यासार्थं विनियोगः | ३४७ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| प्राणशक्तिन्यासे ऋष्यादिन्यासः | २४७ | ८ |
| प्राणस्थापनम् | ३२७ | ६ |
| प्राणादिपञ्चमुद्रा | २४९ | ५ |
| प्राणायामपुरश्चरणम् | ११९९ | ५ |
| प्राणायामभेदाः | १६३ | १५ |
| प्राणायामलक्षणम् | १६१ | १७ |
| प्राणायामेऽङ्गुलिनियमः | १६२ | २१ |
| प्रातःकालादिपरिभाषा | ९६७ | १३ |
| प्रातःकालादिविचारो दीक्षायाम् | ८३ | १३ |
| प्रातःकाले इष्टदेवाचिन्तनम् | ४८६ | २१ |
| प्रातःकृत्यम् | ४८५ | ९ |
| प्रोक्षणीपात्रस्थापनम् | ३३६ | १५ |

[ ब ]

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| बलराममन्त्रादि | ६८३ | १६ |
| बलरामयन्त्रम् | ११४५ | १ |
| बलिच्छेदनरीतिः | १०६७ | २० |
| बलिच्छेदनास्त्राणि | १०६८ | २ |
| बलिदातृनिर्णयः | १०६९ | ७ |
| बलिदानमन्त्रः | २५५ | १५ |
| ,, | १०६७ | २० |
| बलिदानसंख्या | १०६८ | १७ |
| बलिद्रव्याणि | २५५ | ५ |
| ,, | १०५० | १३ |
| बलिमस्तकपतनफलम् | १०७३ | ५ |
| बलिरक्तस्थापनपात्रम् | १०७२ | ११ |
| बलिविशेषे देवतृप्तिकालः | १०५९ | २ |
| बलिः | १०४९ | २२ |
| बल्यन्ते जपस्तत्समर्पणं च | ३५६ | २५ |
| बल्यन्ते दीपदानम् | १०७४ | २० |
| बल्यन्ते स्तुतिः | १०७६ | १५ |
| बहिर्मातृकान्यासः | १६९ | २० |
| बहिर्मातृकान्यासः संहारक्रमेण | १७० | २४ |
| ,, | ३३० | २ |
| बहिर्मातृकान्यासः सृष्टिक्रमेण | १६९ | २० |
| ,, | ३२७ | १२ |
| बहिर्मातृकान्यासः स्थितिक्रमेण | १७१ | ७ |
| ,, | ३२९ | १६ |
| बहिर्मातृकान्यासे विशेषः | १७१ | १४ |
| ,, | ३३० | १० |
| बालाप्रकरणम् | ८०४ | १४ |
| बालायन्त्रम् | ११५४ | १३ |
| बीजनामानि | १४३ | २५ |
| बीजवपनम् | १४३ | १७ |
| बीजसेचनम् | १४४ | ६ |
| बीजाङ्कुरादितः फलानि | १४५ | १३ |
| बीजे जातिविभागः | ५६ | २० |
| बीभत्सवाक्यैः क्रीडा मूर्तिचालनान्ते | ११२१ | ४ |
| बुद्धमन्त्रादि | ६९१ | १५ |
| बुद्धयन्त्रम् | ११४५ | २ |
| बुधमन्त्रादि | ८८७ | २३ |
| ,, | ९४४ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| बुधयन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| बृहदर्घपात्रम् | १४८ | १९ |
| बृहस्पतिमन्त्रादि | ८८८ | १३ |
| ,, | ९४४ | २२ |
| बृहस्पतियन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| बोधनकालः | ९६७ | १८ |
| ब्रह्मणो मानसपुत्रा ऋषयः | ७४६ | १८ |
| ब्रह्मदक्षिणा | ३०७ | १४ |
| ,, | ३६८ | १९ |
| ,, | ३८० | १६ |
| ब्रह्ममन्त्रादि | ९०२ | ११ |
| ब्रह्मयन्त्रम् | ११५८ | २० |
| ब्रह्मार्पणम् | ३०६ | १२ |
| ब्रह्मावरणम् | २७७ | ९ |
| ,, | ३६८ | २९ |
| ब्राह्मणभोजनम् | ३१५ | २० |
| ब्राह्मण्यादिभूमिः | ९७ | १४ |
| ब्राह्मीयन्त्रम् | ११५८ | २१ |
| ब्राह्म्याद्यष्टशक्तिमन्त्रादि | ११३० | ५ |
| **[ भ ]** | | |
| भगमालामन्त्रः | ६०४ | १३ |
| भद्रकालीध्यानादि | ७५४ | २२ |
| भवानी-(गौरी)यन्त्रम् | ११४६ | ४ |
| भस्मधारणम् | ५०१ | १२ |
| भस्मधारणं शूद्रस्य | ५०२ | ९ |
| भस्मनिर्माणम् | ५०१ | ८ |
| भस्मसंग्रहः | ५०१ | ६ |
| भस्मसंस्कारः | ५०१ | १७ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| भिक्षान्नानि | ४२४ | २३ |
| भुवनेश्वरीगायत्री | ५०६ | ८ |
| भुवनेश्वरीप्रकरणम् | ८०६ | १७ |
| भुवनेश्वरीभैरवीमन्त्रादि | ८१० | ७ |
| भुवनेश्वरीभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ५ |
| भुवनेश्वरीमातृकान्यासः | १७८ | ९ |
| भुवनेश्वरीयन्त्रम् | ११५४ | २० |
| भुवनेश्वर्यादिविहितपुष्पम् | २३७ | १३ |
| भूतबलिः | २५१ | ३ |
| ,, | २५७ | १० |
| ,, | ३५६ | ११ |
| भूतलिपिदर्शनम् | ११६१ | २४ |
| भूतलिपिध्यानम् | ११६२ | १० |
| भूतलिपिनिर्णयः | ११६१ | ८ |
| भूतलिपिपुरश्चरणम् | ११६३ | ३ |
| भूतशुद्धिप्रकारः | १६४ | २० |
| भूतशुद्धिः | ३२६ | ९ |
| भूतशुद्धेः संक्षिप्तप्रकारः | १६८ | ३ |
| भूतापसारणम् | ३२३ | २८ |
| ,, | १०१९ | १० |
| भूमिक्षमापनं प्रातःकृत्ये | ४९४ | २२ |
| भूमिपरीक्षा | ९६ | ९ |
| भूमिप्रार्थना वास्तुचक्रकोष्ठखनने | १२१ | २२ |
| भैरवक्रमः | ८४८ | १६ |
| भैरवतर्पणम् | ३३९ | १७ |
| भैरवनामान्तराणि | १४ | ६ |
| भैरवसाधनम् | १२०३ | १९ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| भैरवी-(त्रिपुराभैरवी)-प्रकरणम् | ८०८ | २० |
| भौममन्त्रादि | ८८६ | ६ |
| ,, | ९४३ | ९ |
| भौमयन्त्रम् | ११५८ | ४ |
| भ्रातृदीक्षानिषेधः | ५२ | १ |
| **[ म ]** | | |
| मङ्गलाचरणम् | १ | १ |
| मणिकर्णिकामन्त्रादि | ८८३ | १६ |
| मण्डपरचनासमयः | १२३ | ९ |
| मण्डपरचनार्थं दिग्ज्ञानम् | १२२ | १४ |
| मण्डपस्थलोच्छ्रायः | १२३ | २५ |
| मण्डपहस्तनियमः | १२३ | १२ |
| मण्डपे कलशादयः | १२७ | ५ |
| मण्डपे तोरणानि | १२५ | १० |
| मण्डपे द्वाराणि | १२५ | ५ |
| मण्डपे ध्वजाः | १२६ | २० |
| मण्डपे विघ्ननिवारणार्थं न्यग्रोधादिस्थापनमन्त्राः | १२५ | १८ |
| मण्डपे वेदीरचना | १२७ | २० |
| मण्डपे स्तम्भाः | १२४ | ४ |
| मत्स्यपुरश्चरणादि | ६४५ | २१ |
| मत्स्ययन्त्रम् | ११४१ | १० |
| मत्स्यभेदाः | १०५६ | १० |
| मधुपर्कपदार्थः | २०३ | ६ |
| मधुपर्कपात्रभेदाः | २०२ | २८ |
| मधुपर्कपात्रम् | १४८ | १८ |
| मधुपर्कपात्रस्थापनम् | ३३९ | १२ |
| मधुपर्कः | २२७ | १५ |
| मध्यमपूजा | ७६ | २१ |
| मनुष्यभेदः | १०५६ | ८ |
| मनुष्ये पशुत्वकरणम् | ५२२ | १८ |
| मनोहरासाधनम् | १२१२ | १७ |
| मन्त्रचैतन्यम् | ५२८ | १२ |
| मन्त्रजागृतिः | ९४ | २१ |
| मन्त्रदानम् | ३८२ | २१ |
| मन्त्रदानविधिः | ३०७ | २३ |
| मन्त्रपदार्थः | ४१ | १७ |
| मन्त्रप्रतिष्ठा अधिकारिभेदेन | ५२२ | १२ |
| मन्त्रमाहात्म्यम् | ४१ | २० |
| मन्त्रविशेषेषु देवताविशेषाणां शापाः | ८४ | १४ |
| मन्त्रशिखा | ५२८ | २ |
| मन्त्रशुद्धिलक्षणम् | १५३ | १ |
| मन्त्रशोधनप्रकारः | ९० | ९ |
| मन्त्रशोधनावश्यकचक्राणि | ५७ | १५ |
| मन्त्रसिद्धिदा देशाः | ४२१ | ९ |
| मन्त्रसिद्धिप्रकारः पुरश्चरणं विना | १२०० | ४ |
| मन्त्रसिद्धिप्रकारो दरिद्रस्य | ५४९ | १२ |
| मन्त्रसिद्धिमयान्याश्चर्याणि | ५५६ | १ |
| मन्त्रसिद्धिलक्षणम् | ५५३ | ४ |
| मन्त्रसिद्धेरुपायान्तराणि | ५६० | २ |
| मन्त्रसिद्धेर्विघ्नदः समयः | ५५५ | १५ |
| मन्त्रसिद्धेः सिद्धयः | ५५४ | १५ |
| मन्त्रस्नानविधिः | ४९९ | १० |
| मन्त्रस्य फलदातृत्वम् | ४१६ | १ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| मन्त्रस्य सूतकादिदोषाः | ५२६ | २० |
| मन्त्रस्य सूतकादिदोषापकृतिः | ५२७ | ४ |
| मन्त्रस्य स्वापप्रबोधौ | ५२७ | १५ |
| मन्त्राणां जननादिप्रकारः | ९२ | ९ |
| मन्त्राणां दशसंस्काराः | ९२ | ५ |
| मन्त्रार्थादिज्ञानमावश्यकम् | ५२६ | ११ |
| मन्त्रावयवाः | ५३६ | २३ |
| मन्त्रोत्पत्तिः | ७३ | २ |
| मन्त्रौषधम् | ६०७ | ६ |
| मन्वन्तरभेदेन राममन्त्राः | ६७८ | २४ |
| मल्लानियुद्धम् | ११२९ | २ |
| महाकालध्यानम् | ७५३ | १२ |
| महाकालपुरश्चरणम् | ७५३ | २४ |
| महाकालमन्त्रः | ७५२ | २२ |
| महाकालीमन्त्रध्यानादि | ७५४ | ५ |
| महागणपतिमन्त्रः | ४७४ | ८ |
| महागणपतिमन्त्रादि | ६३५ | १२ |
| महागणपतिमन्त्रेण हवनम् | ३७४ | ७ |
| महागणपतियन्त्रम् | ११४० | १६ |
| महाचीनक्रमः | ८४३ | ५ |
| महादेवप्रार्थनं प्रातःकृत्ये | ४८७ | १७ |
| महानवमीनिर्णयः | ९८५ | १६ |
| महाबलौ विशेषः | १०७० | २१ |
| महाभये आह्निकम् | ३६ | ७ |
| महारजक्रमः | ८५१ | ९ |
| महालक्ष्मीध्यानम् | ९५६ | २५ |
| महालक्ष्मीमन्त्रादि | ८३४ | १९ |
| महाष्टमीनिर्णयः | ९८१ | ११ |
| महासेतुः | ५३२ | २२ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| महिषबलिदाने विशेषः | १०६९ | १७ |
| महिषभेदौ | १०५६ | १९ |
| महिषमर्दिनीमन्त्रादि | ९५२ | २३ |
| महिषासुरोत्पत्तिः | ९९७ | १३ |
| महौषधी | १०१५ | १९ |
| माङ्गल्यद्रव्याणि | १००७ | ७ |
| मातङ्गीगायत्री | ५०६ | १९ |
| मातङ्गीप्रकरणम् | ८२७ | ७ |
| मातङ्गीप्रशस्तपुष्पम् | २३७ | १५ |
| मातङ्गीयन्त्रम् | ११५६ | २५ |
| मातामहदीक्षानिषेधः | ५१ | २४ |
| मातृकान्यासपुरश्चरणम् | ११६३ | ११ |
| मातृकान्याससमुद्रा | १८३ | ६ |
| मातृकान्यासार्थमृष्यादिन्यासः | १६९ | २० |
| ,, | ३२७ | १६ |
| मातृकान्यासार्थे संकल्पः | ३१७ | १२ |
| मातृकायन्त्रम् | ११४८ | २ |
| मातृदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५३ | ९ |
| मात्राकारलक्षणम् | १६१ | २१ |
| मानसस्नानविधिः | ५०० | ७ |
| मानसीदीक्षा | ३९० | ८ |
| मान्त्री दीक्षा | ३९१ | २४ |
| मार्गभेदेन गणेशवटुकादिक्रमः | २५७ | ६ |
| मार्गभेदेन दीक्षाकालः | ८३ | ६ |
| मार्गभेदेन पूर्णाभिषेकः | ४०८ | २३ |
| मार्गभेदेनाधिकारिभेदाः | २२ | १७ |
| मार्गविरोधे कर्त्तव्यम् | ३२ | २ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| मार्गव्यवस्था | २० | १४ |
| मार्जनम् | ५४६ | २३ |
| मार्तण्डभैरवमन्त्रादि | ६४२ | ७ |
| मालाकारः | ४४१ | १६ |
| मालाग्रथनकालः | ४३९ | ७ |
| मालाग्रथनप्रकारः | ४४० | ३ |
| मालाग्रथने सूत्रभेदाः | ४३९ | १४ |
| मालाग्रन्थिनियमः | ४४१ | १९ |
| मालातोऽविघ्नप्रार्थनमन्त्रः | ५३९ | १२ |
| मालानियमच्युतौ हानिः | ४४४ | १४ |
| मालानियमाः | ४४४ | २ |
| मालापूजनम् | ४४३ | १३ |
| मालाप्रार्थनमन्त्रः | ५३९ | ९ |
| मालाभङ्गे उपायः | ४४४ | २५ |
| मालाभेदाः | २३५ | १७ |
| ,, | ४३० | ११ |
| मालामन्त्रः | ५४३ | १३ |
| मालायन्त्रम् | ११५८ | २४ |
| मालायां जपेऽङ्गुलिनियमः | ४४५ | ७ |
| मालासंस्कारः | ४४० | १५ |
| मालासंस्कारोऽधिकारिविशेषे | ४४६ | १५ |
| मासफलं दीक्षायाम् | ७५ | ३ |
| माहेश्वरीमन्त्रादि | ११३० | २२ |
| मुक्तिभेदाः | १६ | २ |
| मुद्रानामानि | ४५० | १ |
| मुद्रापदार्थः | ४४९ | १० |
| मुद्राप्रदर्शनार्थमवसराः | ४४९ | २२ |
| मुद्रालक्षणानि | ४५१ | १६ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| मुद्रिका | १४८ | २९ |
| मुष्ट्यादिपरिमाणानि | ३०७ | २० |
| मूर्त्त्यादिचालनमन्त्रः | ११२० | १४ |
| मूलदेवतातर्पणम् | ३५२ | २३ |
| मूलदेवतापादुकार्चनम् | ३५२ | २० |
| मूलदेवतार्चनं प्रधानकलशे | ३४५ | २५ |
| मूलाधारे गणेशध्यानम् | ४९१ | ८ |
| मृगभेदाः | १०५६ | १३ |
| मृग्यादयस्तिस्रो मुद्रा हवने | २८२ | २३ |
| मृत्तिकाहरणम् | १४३ | २ |
| मृत्युञ्जयमन्त्रादि | ६९९ | २३ |
| मृदापहरणमन्त्रः | ४९६ | २१ |
| मृदुचूडासने | ७२९ | ६ |
| मृद्वासनाद्यनुकल्पः | ७२९ | १८ |
| मृन्मूर्त्तिदुर्गापूजनादि | १०२२ | १९ |
| [ य ] | | |
| यतिदीक्षानिषेधः | ५२ | ३ |
| यतिवानप्रस्थादीनां मातृकाक्रमः | १७१ | १५ |
| ,, | ३३० | १० |
| यन्त्रगायत्री | ५२१ | २३ |
| ,, | ११६० | १५ |
| यन्त्रपुरश्चरणानि | ११५९ | ८ |
| यन्त्रप्रतिष्ठाविधिः | ५२० | १९ |
| यन्त्रलिखनद्रव्याणि | ५२४ | १५ |
| यन्त्रविशेषार्थमष्टगन्धः | ५२३ | २३ |
| यन्त्रे ताम्रादिमये पूजावर्पाणि | ५२५ | ८ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| यन्त्रे ताम्रादिमये फलानि | ५२५ | १४ |
| यन्त्रे प्रस्ताराः | ५२५ | २० |
| यन्त्रे रेखा | ५२५ | २५ |
| यममन्त्रादि | ८९८ | २४ |
| यमयन्त्रम् | ११५८ | १७ |
| यववपनविधिः | ९७५ | १५ |
| युगभेदेन कल्पोक्तजपसंख्या | ५४५ | ८ |
| युगभेदेने मार्गभेदप्राधान्यम् | ३१ | १२ |
| युगभेदेनोपास्यदेवता | १६ | ८ |
| युगादितिथयः | ७९ | २ |
| योगफलं दीक्षायाम् | ७८ | २३ |
| योनिकुण्डम् | १२९ | १३ |
| [ र ] | | |
| रक्तपुष्पस्य विशेषता | २३४ | ६ |
| रतिप्रियासाधनम् | १२२५ | २२ |
| राजमातङ्गीमन्त्रादि | ८२८ | २३ |
| राजमातङ्गीयन्त्रम् | ११५७ | ५ |
| राजसीपूजा | ३७ | ३ |
| राजस्युपासना | ३७ | १४ |
| रात्रिसूक्तम् | ११७२ | २ |
| रामगायत्री | ६८२ | १८ |
| राममन्त्रपुरश्चरणम् | ५७७ | १२ |
| राममन्त्रादि | ६७१ | २५ |
| राममन्त्रार्थः | ६७३ | ७ |
| राममन्त्रो लक्ष्मणोपासितः | ६७८ | ७ |
| रामयन्त्रम् | ११४२ | ७ |
| रामस्य धारणयन्त्रे यन्त्रलिखनक्रमः | ११४२ | १८ |
| रामस्य शिवशक्त्यात्मकत्वप्रदर्शनम् | १८ | १६ |
| रामोत्पत्तिमासादि | ५७७ | ९ |
| राशिचक्रम् | ६६ | १ |
| राशिचक्रविचारः | ६४ | ८ |
| राहुमन्त्रादि | ८९० | १७ |
| ,, | ९४६ | २२ |
| राहुयन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| रुद्रगायत्री | ४४२ | १७ |
| रुद्रभैरवीमन्त्रादि | ८१३ | ४ |
| रुद्रभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | १२ |
| रुद्राक्षधारणप्रकारः | ४३८ | ९ |
| रुद्राक्षभेदास्तन्माहात्म्यं च | ४३६ | २ |
| रुद्राक्षस्यैकादिमुखभेदेन नामानि | ४३६ | १३ |
| रुद्राध्यायपुरश्चरणविधिः | ९१९ | ११ |
| रेवन्तादिपूजा | ११०८ | २३ |
| रोगार्त्तकर्तृकोपासना | ३५ | ७ |
| [ ल ] | | |
| लक्ष्मीगणेशमन्त्रादि | ६३१ | १९ |
| लक्ष्मीगणेशयन्त्रम् | ११४० | १२ |
| लक्ष्मीगायत्री | ५०७ | २ |
| लक्ष्मीनृसिंहमन्त्रादि | ६६२ | १६ |
| लक्ष्मीमातृकान्यासः | १७८ | २५ |
| लक्ष्मीयन्त्रम् | ११५७ | ११ |
| लाक्ष्मीवासुदेवपुरश्चरणम् | ६४४ | १४ |
| लक्ष्मीविद्याप्रकरणम् | ८३२ | २३ |
| लक्ष्म्याः प्रशस्तपुष्पाणि | २३७ | २२ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| लग्नफलं दीक्षायाम् | ७८ | ५ |
| लोकपालमुद्रा | २४३ | ५ |
| लोपामुद्राविद्यामन्त्रादि | ७९६ | १८ |
| [ व ] | | |
| वक्त्रैकीकरणम् | ३७५ | ८ |
| वक्रतुण्डगणेशमन्त्रादि | ६३३ | १८ |
| वगलामुखीगायत्री | ५०६ | २२ |
| वगलामुखीप्रकरणम् | ८२४ | २१ |
| वगलामुखीप्रशस्तपुष्पम् | २३७ | १४ |
| वगलामुखीयन्त्रम् | ११५६ | १८ |
| वज्रपुष्पस्य त्रैविध्यम् | २३४ | १२ |
| वज्रादिदशशस्त्रपूजनम् | ३५२ | १४ |
| वटुक-(वाल-)पूजनम् | १०८९ | १ |
| वटुकमन्त्रः | ४७४ | ४ |
| वटुकयन्त्रम् | ११४५ | २४ |
| वटुकादिवलिदानम् | २५५ | १५ |
| वटुकादिवलिदाने करादि-नियमः | २५४ | २१ |
| वनदुर्गामन्त्रादि | ९५४ | २० |
| वनदुर्गायन्त्रम् | ११५९ | २ |
| वराहमन्त्रादि | ६४७ | २१ |
| वराहयन्त्रम् | ११४१ | १६ |
| वरुणमन्त्रादि | ८९९ | २० |
| वरुणयन्त्रम् | ११५८ | १८ |
| वर्गचक्रम् | ६४ | ५ |
| वर्गचक्रविचारः | ६३ | ४ |
| वर्णभेदेन कुण्डभेदाः | १३६ | १० |
| वर्णमयी दीक्षा | ३८५ | ४ |
| वर्णमयी माला | ४३० | १७ |
| वर्णौषधिपुरश्चरणम् | ५८३ | २१ |
| वर्त्तिकाभेदाः | २४५ | २० |
| वश्यमातङ्गीमन्त्रादि | ८३१ | २२ |
| वश्यमातङ्गीयन्त्रम् | ११५७ | ६ |
| वस्तुविशेषेऽग्निध्यानम् | ३०० | ११ |
| वाग्मतीमन्त्रादि | ८८४ | ७ |
| वाग्मतीयन्त्रम् | ११५८ | १ |
| वाचिकी दीक्षा | ३९१ | १४ |
| वामनमन्त्रादि | ६६८ | २२ |
| वामनयन्त्रम् | ११४१ | २४ |
| वामनस्य षड्भेदाः | ६६९ | ५ |
| वायुमन्त्रादि | ९०० | ८ |
| वायुयन्त्रम् | ११५८ | १९ |
| वारफलं दीक्षायाम् | ७७ | ४ |
| वाराहीवीजम् | ४७४ | १३ |
| वाराहीमन्त्रादि | ११३३ | १८ |
| वाराहीयन्त्रम् | ११५८ | २२ |
| वासन्तीपूजा | ११२९ | ९ |
| वास्तुकोष्ठखननम् | १२१ | ११ |
| वास्तुकोष्ठखनितृदक्षिणा | १२१ | २१ |
| वास्तुकोष्ठखनितृपूजनमन्त्रः | १२१ | १५ |
| वास्तुचक्रकोष्ठखननार्थं कुद्दालपूजनमन्त्रः | १२१ | १२ |
| वास्तुचक्रोक्तदेवबलिमन्त्राः | ११५ | ४ |
| वास्तुदेवविसर्जनम् | १२१ | ७ |
| वास्तुध्यानम् | ११२ | ७ |
| वास्तुबलिमन्त्रः | ४७३ | ५ |
| वास्तुयागविधिः | १०५ | ८ |


४

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| वास्तुयागावश्यकत्वम् | १०४ | ८ |
| वास्तुयागोत्पत्तिः | १०४ | १७ |
| वास्तुशेषकृत्यम् | १२० | १० |
| विघ्नगणेशमन्त्रादि | ६३८ | ६ |
| विघ्नराजमन्त्रादि | ६३० | ४ |
| विघ्नराजयन्त्रम् | ११४० | ८ |
| विघ्नोत्सारणम् | १५२ | ५ |
| ,, | १५४ | २ |
| ,, | ३२३ | १० |
| विघ्नोत्सारणमन्त्रः | १५४ | १५ |
| ,, | ३२३ | ११ |
| ,, | ४७१ | २२ |
| विजयादशमीकृत्यम् | १११९ | १७ |
| विजयादशमीनिर्णयः | ९८८ | २७ |
| विधवादीक्षानिषेधः | ५३ | १२ |
| विप्रादिकर्तृकोपासनायां विशेषः | ७४५ | १६ |
| विभूतिधारणम् | ५०१ | ४ |
| विभूषणीसाधनम् | १२२१ | २० |
| विरिञ्चिगणनायकमन्त्रादि | ६३७ | ११ |
| विल्वपत्रार्पणे विशेषता | २३५ | ११ |
| विल्वाभिमन्त्रणम् | १००८ | ५ |
| विशुद्धचक्रे जीवात्मध्यानम् | ४९२ | ६ |
| विशेषार्घस्थापनविधिः | २०० | २१ |
| ,, | ३३६ | २८ |
| विष्टरलक्षणम् | १४८ | १३ |
| ,, | ७२९ | २४ |
| विष्टरसंस्कारः | ७३० | १५ |
| विष्णुपूजायां द्वारपूजनम् | ३२२ | २५ |
| विष्णुप्रतिमाप्रमाणम् | ५२३ | ८ |
| विष्णुमन्त्रादि | ६४३ | ३ |
| विष्णुयन्त्रम् | ११४१ | ७ |
| विष्णुरात्रिः | ९६१ | २५ |
| विसर्जनम् | १११९ | १९ |
| विहिताविहितपुष्पविचारः | २३९ | ८ |
| वीरदीक्षायां विशेषः | ३१६ | २५ |
| वीरपुरश्चरणम् | ५८४ | १६ |
| वीरपुरश्चरणे आसनम् | ५८७ | २० |
| वीरपुरश्चरणे पूजितशक्तिस्तवः | ५८६ | ५ |
| वीरपुरश्चरणे पूज्यशक्तयः | ५८५ | ६ |
| वीरपुरश्चरणे पूज्यशक्तिपूजा | ५८५ | १५ |
| वीरपुरश्चरणे शक्तिविचारः | ५८८ | २० |
| वीरभावः | ८५७ | १५ |
| वीररात्र्यादयः | ९५९ | २४ |
| वीरसाधनम् | ६२६ | ७ |
| वृत्तकुण्डम् | १३० | १ |
| वेदिकायां स्थाण्डिलादिनिर्माणम् | ३२४ | १२ |
| वैदिकतान्त्रिककुण्डयोर्भेदः | १३५ | ४ |
| वैदिकबलिः | १०५० | १३ |
| वैदिकब्राह्मणलक्षणम् | ५४ | २६ |
| वैदिकमृत्युञ्जयमन्त्रादि | ९१४ | ११ |
| वैश्वदेवहोमविधिः | २५० | १६ |
| वैश्वदेवहोमः | ३५४ | १९ |
| वैष्णवतत्त्वानि | ३०३ | ३ |
| ,, | ३७७ | २४ |
| वैष्णवभेदाः | २७ | १६ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| वैष्णवमन्त्रपुरश्चरणे विशेषः | ४१७ | १९ |
| वैष्णवादिभेदेन चक्रविचारो दीक्षायाम् | ५७ | ८ |
| ,, | ७२ | ४ |
| वैष्णवीमन्त्रादि | ११३१ | २५ |
| वैष्णवीयन्त्रम् | ११५८ | २१ |
| व्याघ्रभेदाः | १०५६ | २३ |
| व्याहृतिहोमः | २८३ | २२ |
| ,, | ३७१ | ९ |
| [ श ] | | |
| शक्तिगणेशमन्त्रादि | ६६१ | १३ |
| शक्रमन्त्रादि | ८९७ | १३ |
| शक्रयन्त्रम् | ११५८ | १६ |
| शङ्खस्थापनम् | ३३३ | ३० |
| शङ्खावश्यकता विष्णुपूजायाम् | १९७ | ३ |
| शतचण्डीमाहात्म्यम् | ११७७ | ४ |
| शतचण्डीविधिः | ११७२ | २६ |
| शतचण्ड्यादिदक्षिणा | ११७६ | १७ |
| शनिमन्त्रादि | ८८९ | २२ |
| ,, | ९४६ | ५ |
| शनियन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| शमीतरुप्रणाममन्त्रः | ११२८ | १६ |
| शयनदिङ्नियमः | २८९ | २५ |
| शयननियमः | ४६५ | ४ |
| शरभमन्त्रादि | ७०४ | १० |
| शरभः | १०५७ | ३ |
| शरीरस्थपीठे स्थानानि | ४९० | ९ |
| शल्योद्धारः | १०० | १३ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| शवसाधनम् | ६१८ | ५ |
| शाक्ततत्त्वानि | ३०३ | १६ |
| ,, | ३७८ | ६ |
| शाक्तपुरश्चरणे विशेषः | ४१८ | २ |
| शापितादयो मन्त्राः | ८५ | ३ |
| शाम्भवी दीक्षा | ३९२ | १९ |
| शाम्भवी मुद्रा | १११६ | १६ |
| शारदीपूजाफलम् | ११२३ | १ |
| शारदीयात्राप्रकारः | ११२४ | २२ |
| शारदोत्सवनिदानम् | ९९३ | १५ |
| शावरमन्त्रपुरश्चरणम् | ६११ | १० |
| शावरमन्त्राणां जागृतिः | ९५ | ९ |
| शास्त्री दीक्षा | ३९२ | ११ |
| शिवगायत्री | ५०३ | १९ |
| शिवनैवेद्यभक्षणनियमः | ३१६ | १८ |
| शिवप्रकरणम् | ६९७ | ३ |
| शिवमंत्रग्रहणमावश्यकं शाक्तस्य | १४ | १४ |
| शिवयन्त्रम् | ११४५ | ९ |
| शिवलिङ्गप्रमाणम् | ५२३ | १० |
| शिवस्नानम् | ५०० | १३ |
| शिवाबलिः | ११०२ | ६ |
| शिवास्तुतिः | ११०४ | २० |
| शिष्यलक्षणम् | ४६ | ६ |
| शिष्यस्य देवतासविधे नयनम् | ३०७ | २३ |
| ,, | ३८० | २५ |
| शिष्यस्य नामकरणम् | ३१३ | १७ |
| ,, | ४०९ | २० |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| शिष्यस्य यागस्थले प्रवेश-दिङ्नियमः | ३०१ | १५ |
| शिष्याचमनम् | ३११ | २५ |
| शिष्याध्वशोधनम् | ३०१ | १७ |
| शिष्याभिषेकः | ३८२ | १५ |
| शिष्यार्थं दन्तधावनम् | २८९ | ८ |
| शिष्यार्थं वरप्रार्थना | ३०९ | ६ |
| ,, | ३८१ | २५ |
| शिष्योपवेशनार्थमासनम् | ३११ | ४ |
| शिष्योपवेशनार्थं दिङ्नियमः | ३११ | ७ |
| शीतलापतिमन्त्रः | ११३९ | २४ |
| शीतलामन्त्रादि | ११३८ | २३ |
| शुक्रमन्त्रादि | ८८९ | ५ |
| ,, | ९४५ | १३ |
| शुक्रयन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| शुभस्वप्नाः | २९१ | १३ |
| शूकरभेदाः | १०५६ | १७ |
| शूद्रस्य पुराणादिपाठनिषेधः | ५५ | २३ |
| शूद्रस्य वेदश्रवणनिषेधः | ५६ | १ |
| शूद्रादिदीक्षादाननिषेधः | ५४ | २ |
| शूद्रादिलिखितसप्तशती-पाठनिषेधः | ११७१ | ९ |
| शूद्रादीनामध्वशोधननिषेधः | ३०४ | १९ |
| शूलिनीमन्त्रादि | ९५३ | २६ |
| शौचभेदाः | ३० | ११ |
| शौचमन्त्रः | ४९५ | ३ |
| शौचविधिः | ४९४ | २५ |
| श्मशानकालीमन्त्रादि | ७५७ | ११ |
| श्मशानकालीयन्त्रम् | ११५० | २१ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| श्मशानादिलक्षणम् | ७३२ | १४ |
| श्यामलामन्त्रादि | ११३४ | ७ |
| श्रीधरमन्त्रादि | ६९६ | १० |
| श्रीयन्त्रदर्शनफलम् | ११५२ | १६ |
| श्रीयन्त्रदानफलम् | ११५२ | २६ |
| श्रीयन्त्रपूजनफलम् | ११५२ | २३ |
| श्रीयन्त्रपादोदकमाहात्म्यम् | ११५३ | ३ |
| श्रीयन्त्रम् | ११५२ | ७ |
| श्रीयन्त्रोद्धारप्रकारः | ११५३ | ८ |
| श्रीविद्यापूजायां विशेषः | २५२ | २ |
| श्रीविद्याप्रकरणम् | ७९६ | ११ |
| श्रीविद्याप्रशस्तपुष्पाणि | २३६ | २१ |
| श्रीविद्यायां करमाला | ४४८ | ९ |
| श्रीसूक्तपुरश्चरणादि | ९४० | ८ |


[ ष ]


| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| षट्कूटाभैरवीमन्त्रादि | ८१२ | १७ |
| षट्कूटाभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ८ |
| षट्पदमातृकाचक्रम् | ७२ | १ |
| षट्पदमातृकाचक्रविचारः | ७१ | ४ |
| षडङ्गधूपौ | २४४ | ७ |
| षडस्रकुण्डम् | १३० | ३ |
| षष्ठीकृत्यम् | १००२ | २ |
| षष्ठीनिर्णयः | ९७७ | १६ |
| षोडशभुजादुर्गाध्यानम् | ९६४ | १७ |
| षोडशाङ्गधूपः | २४४ | १३ |
| षोडशीप्रकरणम् | ७९६ | २४ |
| षोढान्यासपुरश्चरणम् | ११६५ | १९ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| [ स ] | | |
| सकलीकरणम् | २१९ | १६ |
| ,, | ३४६ | १७ |
| सन्धिपूजनम् | १०४६ | ३ |
| सन्ध्यालोपप्रायश्चित्तम् | ५०८ | २३ |
| सन्ध्याविधिः | ५०२ | १५ |
| सन्निधापनम् | ३४६ | ९ |
| सन्निरोधनम् | ३४६ | ११ |
| सन्यासिदीक्षानिषेधः | ५२ | ३ |
| सप्तमीकृत्यम् | १००८ | ४ |
| सप्तमीनिर्णयः | ९७९ | २८ |
| सप्तविकीर्णद्रव्याणि | ३२३ | २५ |
| सप्तशती-ऋष्यादिन्यासः | ११६९ | २५ |
| सप्तशतीतः प्रश्नविधिः | ११९७ | १९ |
| सप्तशतीपाठक्रमः | १०४८ | ४ |
| ,, | ११७० | १३ |
| सप्तशतीपुरश्चरणम् | ११७२ | १० |
| सप्तशतीपुरश्चरणं नवरात्रे | ११७२ | १८ |
| सप्तशतीप्रथमचरित्रे मन्त्राः | ११८६ | २५ |
| सप्तशतीप्रयोगाः | ११८४ | ४ |
| सप्तशतीमध्यमचरित्रे मन्त्राः | ११८८ | १० |
| सप्तशतीमन्त्राः कात्यायनीयाः | ११९३ | ८ |
| सप्तशतीविधानम् | ११६९ | १६ |
| सप्तशतीहोमादौ विशेषः | ११९२ | ४ |
| सप्तशत्यभिषेकमन्त्राः | ११७६ | १३ |
| सप्तशत्याः ५अध्याये मन्त्राः | ११८९ | ६ |
| ,, ६ ,, | ११९० | ३ |
| ,, ७ ,, | ११९७ | ११ |
| ,, ८ ,, | ११९० | १६ |
| ,, ९ ,, | ११९० | २० |
| ,, १० ,, | ११९१ | १ |
| ,, ११ ,, | ११९१ | ९ |
| ,, १२ ,, | ११९१ | १८ |
| ,, १३ ,, | ११९२ | १ |
| सप्तास्रकुण्डम् | १३० | १९ |
| सम्पत्प्रदाभैरवीमन्त्रादि | ८११ | ८ |
| सम्पत्प्रदाभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ५ |
| सम्प्रदायः | ८६६ | ३ |
| सम्मुखीकरणम् | २१९ | ७ |
| ,, | ३४६ | १३ |
| सम्मोहनमातृकान्यासः | १७९ | १२ |
| सरस्वतीध्यानम् | ९५७ | १३ |
| सरस्वतीप्रकरणम् | ८६८ | ४ |
| सरस्वतीयन्त्रम् | ११५७ | १५ |
| सर्वभूतबलिमन्त्रः | ४७४ | २३ |
| सर्वमङ्गलाध्यानम् | ९६६ | ३ |
| सर्वविद्यानां प्रशस्तपुष्पाणि | २३७ | १९ |
| सर्वतोभद्रमण्डलकोष्ठरञ्जन-द्रव्याणि | १५६ | १० |
| सर्वतोभद्रमण्डलपूजनम् | ३४० | १० |
| सर्वतोभद्रमण्डलम् | १५५ | ३ |
| सर्वाम्नायपूजार्हा देवी | १३ | १२ |
| सर्वौषधिः | ३८४ | १० |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| सहस्रचण्डीविधानम् | ११७७ | १० |
| सहस्रचण्डीहोमविधिः | ११७८ | ९ |
| सहस्रदलकमले परमात्मध्यानम् | ४९२ | १६ |
| सहस्रनामस्तवकवचपुरश्चरणम् | ११६६ | ५ |
| संक्षेपदीक्षा | ३८४ | ५ |
| संक्षेपसन्ध्या | ५०९ | ३ |
| संस्कारानिषेधः सिद्धमन्त्रे | ५३ | १६ |
| संहारक्रमेण मातृकाध्यानादि | १७० | २५ |
| ,, | ३३० | २ |
| सात्त्विकी पूजा | ३७ | १ |
| सात्त्विक्युपासना | ३७ | १२ |
| सामान्यतत्त्वानि | ३०३ | १० |
| सामान्यपूजाभेदः | ३६ | १८ |
| सामान्यमन्त्रः | ५७ | २ |
| सामान्यार्घस्थापनम् | १५० | १८ |
| ,, | १९९ | १४ |
| ,, | ३२१ | १६ |
| साम्राज्यलक्ष्मीमन्त्रादि | ८३९ | २२ |
| सारसपक्षिदर्शनफलम् | ११२७ | १३ |
| सिद्धाद्यविचार्यमन्त्राः | ७२ | ११ |
| सिद्धिकालीमन्त्रादि | ७५६ | १६ |
| सिद्धिलक्षणानि | ५५३ | ४ |
| सिद्धिलक्ष्मीमन्त्रादि | ७५८ | ५ |
| सिद्धिलक्ष्मीयन्त्रम् | ११५१ | २ |
| सिन्दूरहारिणीसाधनम् | १२२३ | ५ |
| सिंहभेदाः | १०५७ | १ |
| सिंहिनीसाधनम् | १२२३ | १७ |
| सीतामन्त्रादि | ६८३ | ४ |
| सुदर्शनगायत्री | ५०४ | २० |
| सुन्दरीसाधनम् | १२१० | १७ |
| सुमुखीमन्त्रादि | ८३० | १२ |
| सुमुखीयन्त्रम् | ११५७ | ८ |
| सूतिककर्त्तृकोपासना | ३५ | २३ |
| सूर्यगायत्री | ५०४ | ५ |
| सूर्यग्रहणं विशिष्टं दीक्षायाम् | ८० | २ |
| सूर्यचन्द्रकला | २१५ | ८ |
| सूर्यचन्द्रग्रहणयोर्विशेषः | ९० | ८ |
| सूर्यतस्तीर्थप्रार्थनम् | ४९७ | ९ |
| सूर्यदेवीपूजयोर्द्वारपूजनम् | ३२३ | ५ |
| सूर्यमन्त्रस्त्र्यक्षरः | ५११ | ६ |
| सूर्यमन्त्रादि | ६२९ | २० |
| ,,[1] | ९४१ | २४ |
| सूर्ययन्त्रम् | ११४० | २३ |
| सूर्यराशिफलं दीक्षायाम् | ८० | १५ |
| सूर्यस्य द्वादश नामानि | ११ | ११ |
| सूर्यार्घदानमन्त्रः | १५९ | २० |
| ,, | ३२५ | ७ |
| ,, | ५०९ | २४ |
| ,, | ५११ | २० |
| सूर्यार्घदानमावश्यकम् | ५०९ | १९ |
| सूर्याम्नायः | ११ | ५ |
| सृष्टिक्रमेण मातृकाध्यानादि | १७० | ५ |
| ,, | ३२८ | ५ |


[1] अत्र ध्याने काचित् त्रुटिरस्ति तदर्थं शुद्धिपत्रं विलोक्यम् ।

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| सेतुः | ५३२ | १५ |
| सौभाग्यक्रमः | ८५४ | ४ |
| सौरतत्त्वानि | ३०३ | ७ |
| ,, | ३७८ | १ |
| स्त्रीदीक्षाविधिः | ५३ | ९ |
| स्त्रीनियमाः | ४६४ | १३ |
| स्त्रीशूद्रयोर्मन्त्रश्रावणानियमः | ३१२ | २२ |
| स्त्रीशूद्राणां मालासंस्कारः | ४४५ | १९ |
| स्त्रीशूद्रादिदेयमन्त्रविचारः | ५५ | १५ |
| स्थण्डिललक्षणम् | १३९ | २ |
| स्थानशुद्धिलक्षणम् | १५२ | २० |
| स्थानसाधकनाम्नोर्मित्रामित्रविचारः | ४८० | ५ |
| स्थितिक्रमेण मातृकाध्यानादि | १७१ | ४ |
| ,, | ३२९ | १६ |
| स्थिररेखायन्त्रप्रतिष्ठाकालः | ५१९ | २२ |
| स्नानविधिः | ४९६ | २ |
| स्पार्शी दीक्षा | ३९० | २६ |
| स्मर-(काम-)मन्त्रादि | ७२० | २३ |
| स्मरयन्त्रम् | ११४७ | २३ |
| स्मार्त्तबलिः | १०५० | ९ |
| स्मार्त्ती दीक्षा | ३९० | ३ |
| स्रुक्स्रुवसंस्कारः | २७९ | १२ |
| ,, | ३६९ | ७ |
| स्रुग्लक्षणम् | १३९ | ८ |
| स्रुवधारणप्रकारः | २७२ | ३ |
| स्रुवलक्षणम् | १४० | २५ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| स्वकर्त्तृकपत्न्यादिदीक्षाविचारः | ५१ | १७ |
| स्वदेहे पीठपूजनम् | ३४० | ३ |
| स्वप्ननिर्णयः | २९१ | १३ |
| स्वप्ननिवेदनम् | २९० | १० |
| स्वप्नफलपाकसमयः | २९१ | १८ |
| स्वप्नमानवमन्त्रः | २९० | २२ |
| ,, | ३७६ | ५ |
| स्वप्नवाराहीमन्त्रादि | ११३५ | ७ |
| स्वप्नवाराहीयन्त्रम् | ११५८ | २७ |
| स्वप्नादिलब्धमन्त्रसंस्कारः | ५३ | १६ |
| स्वलिखितसप्तशतीपाठनिषेधः | ११७१ | ९ |
| स्वाधिष्ठाने ब्रह्मध्यानम् | ४९१ | १३ |
| स्वामिदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५१ | २० |
| स्विष्टकृद्धोमः | २८३ | १४ |

[ ह ]

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| हनुमद्गायत्री | ५०८ | १५ |
| हनुमद्यन्त्रम् | ११४७ | २० |
| हनुमन्मन्त्रादि | ७१६ | ९ |
| हयग्रीवगायत्री | ५०४ | २३ |
| हयग्रीवमन्त्रादि | ६९२ | २४ |
| हयग्रीवादियन्त्रम् | ११४५ | ६ |
| हरिद्रागणेशमन्त्रादि | ६३४ | २२ |
| हरिहरमन्त्रादि | ७०७ | १८ |
| हवनम् | २८३ | ३ |
| ,, | ३७० | १० |
| हवनार्थमग्निः | २६४ | २३ |
| ,, | ३६१ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|---|---|---|
| हवने मृग्यादयस्तिस्रो मुद्राः | २८२ | २३ |
| हविष्यान्नानि | ४२३ | २४ |
| हेरम्बमन्त्रध्यानपुरश्चरणानि | ६३४ | ५ |
| हंसध्यानम् | ४८९ | १७ |
| हंसिनीसाधनम् | १२२४ | ६ |
| हीनब्राह्मणलक्षणम् | २४ | १२ |
| हुतशेषप्राशनम् | ३१६ | १३ |
| हुताग्नौ देवपूजनम् | ३७५ | ५ |
| होमद्रव्यप्रमाणानि | ९४९ | ८ |
| होमः स्त्रीशूद्राणां निषिद्धः | ५४९ | २७ |
| होमार्थं द्रव्यासादनम् | ३६८ | २६ |
| होमार्थं पात्रासादनम् | २७७ | २ |
| " | ३६८ | ८ |
| होमार्थमनुकल्पः | ५४८ | २२ |
| " | ५५० | २६ |
| होमार्थमनुकल्पो वर्णभेदेन | ५४९ | ५ |
| होमो दोषनिवारणार्थम् | ३२१ | ११ |
| हौत्री दीक्षा | ३९२ | ४ |

# पुरश्चर्यार्णवस्य शुद्धिपत्रम् ।

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| धावननिधि | धावनविधि | ६ | ५ |
| ब्राह्मादि | ब्राह्म्यादि | ९ | १४ |
| नैऋते | नैर्ऋते | १३ | ६ |

* वंशीधरं कृष्णदेहं चकार द्वापरे युगे ।
(तन्त्रराजेऽपि)
कदा चिदाद्या ललिता पुंरूपा कृष्णविग्रहा ।
वेणुनादसमारम्भादकरोद्विवशं जगत् ॥
अहं सदाशिवो देवः प्रकृतिर्विष्णुरुच्यते ।
त्रुटिः १७ ९

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| शैवतारा | सैव तारा | १७ | १८ |
| वगामखी | वगलामुखी | १९ | २१ |
| ऽस्त्विति | ऽस्त्विति | ३५ | १८ |
| मिर्माले | निर्माले | ३६ | १७ |
| ग्राह्यो | ग्राह्या | ३९ | २ |
| प्रतिमा | प्रतिभा | ४० | ७ |
| यस्य तुष्टा | यस्य तुष्टो | ४२ | ७ |
| ऽन्वयायज्ञं | ऽन्ववायाद्यं | ४६ | ८ |
| घातक्तं | घातकं | ४८ | १ |
| श्रोतसि | स्रोतसि | ५० | २० |
| कालद्विं- | कलिद्विं- | ७१ | १० |
| त्रेताऽसिय- | त्रेताऽसित- | ८१ | ११ |
| हूँकारो वा | हुँकारो वा | ८५ | १२ |
| वंशत्रयादितः | वर्णत्रयान्वितः | ८८ | ४ |
| षद्विंश- | षड्विंश- | ८९ | ५ |
| युक्तमण्डप- | युक्तमण्ड- | ९६ | ८ |
| सिध्यैः | सिध्यै | ९७ | १७ |
| भवन्मत्येव | भवन्त्येव | ९८ | ६ |
| कृतिका | कृत्तिका | ९९ | १ |
| पूर्वंषाढा | पूर्वाषाढा | ९९ | ७ |
| भूमिस्थं | भूमिष्ठं | १०२ | १४ |
| विदाइ | विदारी | ११० | ४ |
| सन्निरी- | संनिरी | ११३ | १७ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| भृङ्गाभो | भृङ्गाभो | ११४ | ९ |
| पुष्पदि- | पुष्पादि- | ११६ | ११ |
| हृद्यं | हृद्यं | ११७ | १४ |
| भूयांसेश- | भूयांशेऽंश- | १३० | ३ |
| वियोनीति | वियोनीनि | १३५ | ५ |
| अर्धचन्द्रम् त्र्यस्रम् | त्र्यस्रम्- अर्धचन्द्रम् | १३७ | १० |
| षडस्रम् | पञ्चास्रम् | १३८ | ३ |
| पञ्चास्रम् | सप्तास्रम् | १३८ | ३ |
| सप्तास्रम् | षडस्रम् | १३८ | ३ |
| कुण्डमेकविधं | कुण्डमेवंविधं | १३९ | २ |
| रापर्णम् | रार्पणम् | १४१ | ४ |
| दैर्घा- | दैर्घ्या- | १४२ | १४ |
| दीक्षादीनात् | दीक्षादिनात् | १४७ | २४ |
| रचयते | रचयेत् | १५० | १८ |
| नदी | नन्दी | १५१ | १६ |
| सस्नान- | संस्नान- | १५२ | १७ |
| भूतानि | भूतानि | १५४ | १६ |
| द्वितीयकम् | द्वितीयकम् | १५५ | १७ |
| भित्वा | भित्त्वा | १५७ | ५ |
| ह्रूँ ह्रूँ सः | ॐ ह्रूँ ह्रूँ सः | १५९ | २० |
| तावत्काला | तावत्कला | १६२ | २४ |
| येनैष | येनैव | १६४ | १० |
| अधिष्ठित- | अधिष्ठितं | १६४ | २२ |
| उँर्ध्वास्यं | ऊर्ध्वास्यं | १६९ | ४ |
| भ्रमध्ये | भ्रूमध्ये | १६९ | १५ |
| स्वरुपणी | स्वरूपिणी | १७१ | ९ |
| पूर्वंयुक्तेति | पूर्वंयुक्त्येति | १७१ | १६ |
| रात्मनं | रात्मानं | १८८ | १८ |
| स्रूचा | स्रुचा | १९० | ९ |
| स्रूवम् | स्रुवम् | १९० | १५ |
| प्रोषाण- | पाषाण- | १९२ | ११ |
| शङ्खयरी | शङ्खवटी | १९३ | २ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| प्रभाव्प | प्रभाव्य | ११४ | ३ |
| प्रोक्ष्यण्य- | प्रोक्षण्य | ११५ | ४ |
| व्रीहिर्वहु- | व्रीहिवहु | ११६ | १७ |
| शङ्खत्ररो | शङ्खवटी | २०२ | २८ |
| घटस्थान्ते | घटस्यान्ते | २०५ | ६ |
| स्थापनीयनि | स्थापनीयानि | २०५ | १२ |
| उंर्ध्वं- | ऊर्ध्वं- | २०७ | ३ |
| अवगन्तथाः | अवगन्तव्याः | २०८ | ७ |
| उंर्ध्वं | ऊर्ध्वं | २१० | १ |
| धारयन्तं | धारयन्तं | २१० | १० |
| क्रौँ चबीजं | क्रोमिँ च | २२२ | १४ |
| ताम्बुलानि | ताम्बूलानि | २२५ | १५ |
| सुधाणंवकृतः | सुधार्णवकृतः | २२७ | २२ |
| संम्प्रदानं | सम्प्रदानं | २२८ | ६ |
| द्रव्याद्यकृष्टः | द्रव्याद्राकृष्टः | २३० | ६ |
| प्रियस्वदा | प्रियंवदा | २३३ | १८ |
| उंढाया | ऊढाया | २३४ | १३ |
| वैकक्षिका | रैकक्षिका | २३५ | २१ |
| नरश्रेष्ट | नरश्रेष्ठ | २३८ | २ |
| समुद्धरेतू | समुद्धरेत् | २४१ | १२ |
| निर्ऋतिं | निर्ऋतिम् | २४२ | १ |
| प्रासमुद्रां | ग्रासमुद्रां | २४१ | ३ |
| प्रासं | ग्रासं | २४१ | ६ |
| ध्यत्वा | ध्यात्वा | २५१ | ८ |
| उंर्ध्वं निष्कले | ऊर्ध्वं निष्कले वा | २५६ | २ |
| पीठोपीठा- | पीठोपपीठा- | २५६ | ४ |
| हरेम् | हरेत् | २५६ | १० |
| प्रयक्ताम् | प्रयुक्तम् | २५७ | २१ |
| सर्षापा- | सर्षपा- | २६० | २१ |
| अक्षपाठनं | अक्षपाटनं | २६२ | ४ |
| इष्टां | इष्टं | २७१ | ११ |
| अतिरिक्ता | अतिरक्ता | २७४ | १९ |
| सुषुणमां | सुषुम्णां | २८२ | १ |
| प्रासन- | प्राशन- | २८४ | १३ |
| क्षुरकर्मसु | क्षुरकर्मसु | २८५ | ५ |
| इनि | इति | २८६ | १ |
| दद्याद्धि- | दद्याद्वृद्धि- | २८६ | २१ |
| ऋत्विकार्ट- | ऋत्विकर्त्तृं- | २८८ | १७ |
| दर्शन | दशन- | २८९ | २ |
| विशोध्यं यत्नेन | विशोधयेत् तेन | २८९ | १० |
| श्वरसी | श्वरसि | २९१ | ८ |
| गाहास्तीद्विजे- देवादेवर्ज्यं | गोहस्तिद्विजदे- वादिवर्जं | २९६ | २४ |
| सिद्धयेः | सिद्धयः | २९७ | २२ |
| तारावज्रनखं दंष्ट्रायुधा- य महासिं- हाय हुँफट् नमः | तारो वज्रनख- दंष्ट्राय महा- सिंहाय हूँफ- ट् नमः | २९८ | २० |
| दोतु- | होतु- | ३०१ | १ |
| सुधौतं दन्ताद्यं | सुधौतदन्ताद्यं | ३०१ | ११ |
| कुक्षित् कुक्षि- दष्टौ | कुक्षिः कुक्षयो- ऽष्टौ | ३०७ | २० |
| ऐशान्यां | ऐशान्यां | ३१० | १० |
| ददानि | ददामि | ३१० | १७ |
| र्णमानसः | पूर्णमानसः | ३१४ | ५ |
| क्षाद्यै- | अद्यै- | ३११ | १७ |
| दीक्षाक्रसः | दीक्षाक्रमः | ३१८ | १३ |
| वेचित्र्य- | वैचित्र्य- | ३१८ | १५ |
| दिव्यदृष्ट्याऽ- वलोकनान् | दिव्यदृष्ट्यव- लोकनात् | ३२३ | १० |
| बद्धाञ्जलिः | बद्धाञ्जलिः | ३२४ | ५ |
| नस्थित- | नसंस्थित- | ३२५ | ८ |
| ल्याग्रेषु | ल्यग्रेषु | ३२८ | ३२ |
| ॐ | डँः | ३२९ | ३१ |
| वत्मना | वर्त्मना | ३३२ | ११ |
| स्थापययामि | स्थापयामि | ३३३ | १५ |
| पूररणीय | पूरणीयम् | ३३७ | २३ |
| क्राथेन | क्वाथेन | ३४२ | ११ |
| एदर्थं | एतदर्थं | ३४२ | २१ |
| सनेपि | सनेयि | ३४२ | ३० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. |
|---|---|---|---|
| सूक्ष्माय | सूक्ष्मायै | ३४५ | ११ |
| घध्वा | वद्ध्वा | ३४६ | २६ |
| दावन- | दाचम | ३४९ | ११ |
| स्नातार्थं | स्नानार्थं | ३५० | ११ |
| दिवेच | निवेच | ३५० | २२ |
| मन्त्राते | मन्त्रान्ते | ३५० | २५ |
| पञ्चषड्रसं-युक्तं | पञ्चधा षड्रसो-पेतं | ३५३ | २७ |
| वलिवटुकाय | वलिर्वटुकाय | ३५५ | २२ |
| ३५६ | २५६ | ३५६ | २७ |
| पलये- | पलेपये | ३५८ | ८ |
| ष्ट.तृन् | ष्टातॄन् | ३६२ | २७ |
| ञ्जलिः | ञ्जलिः | ३६३ | ७ |
| वामकयां | वामकस्थां | ३६३ | २१ |
| वह्ने- | वह्ने | ३६४ | ६ |
| | | ,, | ७ |
| वेदिक | वैदिक | ३६४ | २१ |
| लोकिताक्ष | लोहिताक्ष | ३६८ | ३ |
| गणपये | गणपतये | ३७३ | १५ |
| वध्वा | वद्ध्वा | ३७६ | १ |
| दूर्णेश- | दूर्गाणेश- | ३७७ | २३ |
| -ड्विधिमद- | -ड्विधमिद- | ३७८ | २७ |
| मात्मानि | मात्मनि | ३८५ | ११ |
| आग्नेज्यां | आग्नेय्यां | ३८७ | २४ |
| चंतान् | चंनातू | ३८९ | ११ |
| -मस्तास्तु | -मस्तासु | ३८९ | १८ |
| शक्तिशङ्ग- | शक्तिसङ्ग | ३९४ | ४ |
| घत्वा | ध्यात्वा | ४०० | २ |
| खण्डव- | षण्णव- | ४०० | १८ |
| पावर्ति | पार्वति | ४०१ | १ |
| देवेभ्यः | वेदेभ्यः | ४०१ | १५ |
| चर्मन्व- | चर्मण्व- | ४०२ | २ |
| इशाने | ईशाने | ४०३ | २० |
| वोपरि | स्वोपरि | ४११ | १७ |
| कौणिन्या- | कौण्डिन्या- | ४१७ | २१ |
| विषिद्ध- | निषिद्ध- | ४१७ | २२ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. |
|---|---|---|---|
| नियभन | नियमेन | ४१७ | २८ |
| प्रसूतो | प्रसुप्तो | ४१७ | ३० |
| गणशा | गाणेशा | ४१८ | २७ |
| वध्वा | वद्ध्वा | ४२७ | ११ |
| कुर्परे | कूर्परे | ४२९ | २ |
| | | ,, | ५ |
| व्यात- | व्यात्त- | ४२९ | १८ |
| विजनामि | विजानामि | ४३० | १ |
| मुक्त्यार्थं | मुक्त्यर्थं | ४३१ | २२ |
| सर्वतन्त्रेषु | सर्वमन्त्रेषु | ४३४ | १३ |
| नाशिते | नाशिनी | ४३५ | ७ |
| -र्दशगुणैः | -र्दशगुणं | ४३५ | ११ |
| स्फादिकं | स्फाटिकं | ४३५ | १३ |
| स्काटिके | स्फाटिके | ४३५ | २२ |
| पितृणा- | पितॄणा- | ४३७ | १५ |
| कुर्परे | कूर्परे | ४३८ | १० |
| वद्मसूत्रै- | पद्मसूत्रै- | ४३९ | १५ |
| श्रेष्ठाय | श्रेष्ठाय | ४४२ | १० |
| त्रुद्यति | त्रुट्यति | ४४४ | ४ |
| -न्निषिद्धं सं | -न्निषिद्धसं | ४४४ | ८ |
| संत्रुद्यते | संत्रुट्यते | ४४४ | २२ |
| कनिष्ठादित | कनिष्ठादि | ४४७ | १८ |
| अङ्गुष्ठा | -अनङ्गुष्ठा | ४५१ | १६ |
| तलान्तनिलि- | तलान्तर्मिलि | ४५२ | १४ |
| गोयनीया | गोपनीया | ४५३ | १२ |
| सधिानी | साधिनी | ४६० | ८ |
| मन्त्रजपा- | मन्त्रचित्ता | ४६४ | ११ |
| गूढयानो | गूढपादो | ४६८ | १६ |
| वणर्त्तु- | वर्त्तुं- | ४७४ | ११ |
| ईन्द्र- | इन्द्र- | ४७५ | १४ |
| ओंघाम्बुरोष-धीशो- | ओघाम्बुरोष-धीशो | ४७५ | १६ |
| षकारेण | खकारेण | ४८० | ८ |
| शकारेण | सकारेण | ४८९ | ९ |
| विधानः | विधानतः | ४९४ | १३ |
| प्रार्थतित्वा | प्रार्थयित्वा | ४९४ | २१ |

| अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. | अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| -ऽन्तस्थिति | -न्तस्तिथि- | ४३५ | ११ | मन्त्रस्त्रान- | मन्त्रस्नान- | ४११ | १६ |
| शाक्तेद्वयं वाद्य- | शक्तेर्द्वयं चाद्य- | ४३६ | ११ | प्रजापते | प्रजायते | ५०१ | १५ |

त्रुटिः ५०५ पृ. ६ प.

(सिद्धान्तसंग्रहे)

अथास्याः संप्रवक्ष्यामि ऋष्यादीन् भैरवोदितान् ।
श्रीकृष्णस्तु ऋषिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ॥
शिवशक्त्यात्मिका काली देवता परिकीर्त्तिता ।
पदैः सदीर्घैरङ्गानि कृत्वा ध्यायेज्जगन्मयीम् ॥
श्मशानस्थां महाकालीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥
दक्षिणोर्ध्वे धनुर्वामे करपद्मे तथा शरान् ।
अधः पाशं च खड्गं च धारयन्तीं क्रमेण च ॥
नीलमेघप्रभादीप्तां महाकालसमन्विताम् ।
प्रातस्तु संस्मरेदेनां मूलचक्रकृतालयाम् ॥
मध्याह्नेऽनाहते चक्रे सायं व्योमाम्बुजस्थिताम् ।

| अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. | अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| पराक्षिणा- | पराक्षिना- | ५०५ | ८ | भ्यीं सिता | भ्यां शिता | ५७५ | १३ |
| सवार्थे | सर्वार्थे | ५१४ | ८ | उभयास्तं | उदयास्तं | ५७६ | १४ |
| -दित्यहुः | -दित्याहुः | ५१५ | १५ | साधनमुच्चये | साधनसमुच्चये | ५७७ | २ |
| दर्पणैः | तर्पणैः | ५२२ | १ | कन्यारुप- | कन्यारूप- | ५८५ | १ |
| घधाशक्त्या | -यथाशक्त्या | ५२७ | ४ | बहिस्कृते | बहिष्कृते | ५८६ | २१ |
| इत्याभि- | इत्यभि- | ५२८ | १ | तदन्तं | तदन्नं | ५९१ | ५ |
| सेनदशस्वराः | सेनदशः स्वराः | ५३७ | ११ | अलिस्यन्द- | अलिस्पन्द- | ५९५ | १४ |
| हिरण्मम् | हिरण्मयम् | ५३१ | १६ | मञ्चकाग्रेषु | मञ्चकाङ्गेषु | ५९६ | ११ |
| संशुद्धे | सुशुद्धे | ५४४ | १८ | पुजयीच्छेवे | पूजयेच्छिवे | ६०३ | २३ |
| एषां | येषां | ५४५ | १४ | प्रतिघाता- | प्रतिघाता- | ६०५ | १८ |
| प्रायश्चित- | प्रायश्चित्त- | ५४८ | २० | तस्याहिर्जा- | तस्मिन् हि जा- | ६०७ | ३ |
| -भ्रुवाश्च | भ्रुवां च | ५४९ | १० | धराणी | धरणी | ६०८ | ६ |
| जाप्पयोः | जाप्यपोः | ५५० | १३ | जगदे | यजने | ६११ | ६ |
| देवीतर्प- | देवि तर्प- | ५५१ | ३ | प्रक्षातिलां | प्रक्षालितां | ६१४ | ४ |
| नीरूप- | निरूप- | ५५३ | १ | ीरादंने | वीरार्दनेन | ६१६ | ११ |
| बौद्धायनः | बौधायनः | ५५७ | १ | सितवाघा- | सितवाधा- | ६१६ | २१ |
| सिद्धुपा- | सिद्ध्युपाया- | ५६२ | २५ | त्रन्द्रिका | चण्डिका | ६१८ | १ |
| दुग्धेनाशव- | दुग्धेनाश्व- | ५६७ | १३ | संस्थाये | संस्थापये | ६१८ | १० |
| कुमुमै- | कुसुमै- | ५७१ | २ | ङेऽन्तम् | ङेऽन्तकम् | ६२७ | १६ |
| हेदी- | -हेवी | ५७४ | ११ | सुराशवैः | सुरासवैः | ६२८ | २० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. |
|---|---|---|---|
| -णाढ्यं | णाद्यं | ६३५ | १ |
| ह्युर्ध्वं- | ह्यूर्ध्वं- | ६३७ | १९ |
| -मीक्य- | -मणिक्य- | ६४० | २२ |
| नमःसास्त्रं | नमसाऽस्त्रं | ६४४ | १९ |
| शुकं धानां | शुकं दधानां | ६४१ | २४ |
| जाम्बुनद- | जाम्बूनद | ६५४ | ७ |
| रुपंदंष्ट्र- | रुदग्रदंष्ट्र- | ६६२ | ६ |
| नृसिंहोऽय- | ह्नृसिंहो य- | ६६४ | ९ |
| तमो | नमो | ६६८ | १६ |
| रामन्त्र | राममन्त्र | ६८३ | १५ |
| प्रीयम् | प्रियम् | ६८३ | २० |
| सत्यत्वा- | शसत्वा- | ६९१ | १६ |
| मिश्रि | मिश्र | ६९२ | ६ |
| त्रीलसमा | त्रीलहया | ६९२ | १२ |
| च भयं | चाभयं | ६९३ | ७ |
| वामचारेण | वामाचारेण | ७१६ | ४ |
| हृष्ट्वा | दृष्ट्वा | ७२० | ५ |
| चित्र | चित्र्य | ७२१ | २० |
| मृद्धि | मृदु | ७२९ | ६ |
| भावे तु कल्प- | भावेऽनुकल्प- | ७२९ | १७ |
| चापे | चाण्डे | ७३० | ३ |
| विस्तर- | विष्टर- | ७३१ | १२ |
| शूद | शूद्र | ७४० | १ |
| जयेत् | जपेत् | ७४२ | १० |
| स्यु | स्युः | ७४३ | ११ |
| तिष्ठत्सु | तिष्ठत्सु | ७४५ | १६ |
| भ्रंसयि- | भ्रंशयि- | ७६७ | १५ |
| फड- | फडि- | ७५१ | ११ |
| चर्यां | चर्यां | ७५९ | १९ |
| दंष्ट्राग्र | दंष्ट्राग्र | ७६६ | १४ |
| समुण्ड | सुमुण्ड | ७६८ | ५ |
| यावन्त्यः | यावत्यः | ७७६ | ३ |
| ललानं | लालनं | ७७८ | ९ |
| फ्रोमिति | स्फ्रोमिति | ७७९ | २० |
| द्वारण- | द्वार | ७८१ | १ |
| अनन्तरं | अनुत्तरम् | ७८१ | १७ |
| कारान्तौ | कारान्तो | ७८१ | २५ |
| डित्ययि | डित्यपि | ७८४ | १६ |
| स्थ्यालङ्कार | स्थ्यलङ्कार | ७८५ | १८ |
| आलाढा | आलीढा | ७८९ | २ |
| चन्द्रर्धं- | चन्द्रार्धं- | ७९१ | १ |
| असां त्रयाणां | आसां तिसृणां | ७९१ | ९ |
| वृत्या | वृत्त्या | ८०५ | १० |
| सक्तै- | शक्तैं- | ८१५ | २२ |
| षड्वर्णैं- | षड्वर्णैं- | ८२२ | २ |
| गौयंषे | गौयंषे | ८२८ | २५ |
| वाशा | वासा | ८३६ | २१ |
| योन्यत्मक | येन्यात्मक | ८५७ | २१ |
| कौलेयस्तस्मा- | कौले यस्तस्मा- | ८६३ | २० |
| वरंहसित | वरभसित | ८७१ | १८ |
| क्षस्त्रीँ | क्षस्त्रा | ८७२ | ७ |
| मन्त्रदेवीँ- | मन्त्रदेवाँ- | ८७६ | १६ |
| ह्रौँ | ह्रौँ | ८७८ | १३ |
| व्यापकन्त | व्यापकं तु | ८७८ | १८ |
| भीषाभां | भोषणां | ८७८ | २० |
| येश्या | ध्येया | ८८१ | ७ |
| तरो | तारो | ८८३ | १६ |
| श्वेतम्वरां | श्वेताम्बरां | ८८४ | १२ |
| हूनेत् | हुनेत् | ८८४ | १९ |
| प्रकर्त्तिताः | प्रकीर्त्तिताः | ८८६ | ७ |
| प्रकर्त्तितम् | प्रकीर्त्तितम् | ८८७ | ८ |
| भौममन्त्रः | बुधमन्त्रः | ८८७ | २१ |
| सिध्यते | सिध्यति | ८९१ | ६ |
| तदोर्भि- | दोर्भि- | ८९१ | ८ |
| द्विजोतमान् | द्विजोत्तमान् | ८९८ | १९ |
| यमन्त्रः | यममन्त्रः | ८९८ | २३ |
| अदित्य- | आदित्य- | ९०३ | १८ |
| घमानसः | घतमानः | ९०७ | २ |
| प्रभाती | प्रभावती | ९०८ | १९ |
| स्याहृषीणां | स्य व्याहृतीनां | ९११ | ७ |
| प्रीणिजाता- | प्राणिजाता- | ९११ | १५ |
| बृहत्वा | बृहत्त्वा | ९१२ | २० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| ज्यैं हि | ज्यैर्हि | ९१४ | १ |
| मकुटं | मुकुटं | ९१४ | २३ |
| ब्रह्माण्डपावि- स्फुरज्ज्यो- तिस्फा- | ब्रह्माण्डमाविस्फु- रज्ज्योतिः- स्फा- | ९१६ | ९ |
| तिष्टते | तिष्ठते | ९२० | १४ |
| पशिरिष्टं | परिशिष्टं | ९२३ | १ |
| श्रेष्टत्व- | श्रेष्ठत्व- | ९२३ | २२ |
| किलासश्वित्र- | किलातश्वित्र- | ९२४ | १२ |
| हुनेद्गोसफ | हुनेद्गोशफ | ९२५ | १५ |
| दक्षिणमूर्त्तिं- | दक्षिणामूर्त्तिं | ९२६ | ८ |
| तिष्टते | तिष्ठते | ९२६ | २० |
| उर्णा | ऊर्णा | ९२७ | २ |
| आनुष्टुवस्य | आनुष्टुभस्य | ९३५ | २ |
| दाद्यात् | दद्यात् | ९३६ | १३ |
| यथाशर्क्ति | यथाशक्ति | ९३६ | २३ |

त्रुटि ९४२ पृ. ८ प. ।

सप्ताश्वं सप्तखड्ग च जातं देशे कलिङ्गके ।
विश्वामित्रार्षकं त्रिष्टुप् छन्दः काश्यपगोत्रजम् ॥
रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणैरुपशोभितम् ।
रक्तगन्धनुलेपाङ्गं रद्धध्वजपताकिनम् ॥
किरीडिनं सकेयूरं मणिगं रक्तच्छत्रिणम् ।

| अशुद्धम् | शुद्धम् | पृ. | प. |
|---|---|---|---|
| चात्रेयर्षं | चात्रेयार्षं | ९४३ | २ |
| आसुवदुती | आभुवदूती | ९४६ | २४ |
| तिन्दोऽक्षश्च | तिन्दुकोऽक्षश्च | ९५० | ११ |
| पोदशभि | पोडशभि | ९५० | १६ |
| वेदपावराणाय | वेदपारायणाय | ९५९ | १९ |
| शिरश्चेदो | शिरश्छेदो | ९६४ | १० |
| कञ्चुकोपेवा | कञ्चकोपेता | ९६५ | १९ |
| किरिष्ये | करिष्ये | १००९ | ९ |
| हुता | हुना | १०१० | ९ |
| सिन्वुभरैव | सिन्धुभैरव | १०१३ | २३ |
| स्नपयेद् | स्नापयेद् | १०१४ | १३ |
| स्नपतन्तु | स्नापयन्तु | १०१७ | ८ |
| गीतवद्या | गीतवाद्या | १०२० | ५ |
| व्रीहिने | व्रीहिणे | १०२१ | ३ |
| समागच्छ॰ | समागच्छ | १०३५ | १ |
| विचीनां | विचीनां | १०५३ | ३ |
| सम्बूको | शम्बूको | १०५३ | ६ |
| परिकल्पते | परिकल्प्यते | १०५७ | ९ |
| प्राग्वुपाकेन | प्राड्वुपाकेन | १०५७ | १७ |
| पापर्नेणेन | पार्पणेन | १०५९ | १९ |
| गात्र्यन्तर- | गायत्र्यन्तर- | १०६५ | ७ |
| यदैवतम् | यमदैवतम् | १०७१ | ५ |
| प्रकत्तिंतम् | प्रकीर्त्तितम् | १०७९ | १४ |
| सङ्ख्यान | सङ्ख्याने | १०८९ | १८ |
| राङ्कुरे | राङ्कवे | १०९५ | ९ |
| उग्रचण्डा च | उग्रचण्डा | ११०७ | ४ |
| ऽश्विभ्यां | ऽश्विभ्यां | ११११ | १४ |
| भूम्यर्थेनृत- | भूम्यर्थेऽनृत- | १११३ | १६ |
| समारभ्य | समारभ्य | १११४ | १० |
| गजपुजा | गजपूजा | १११४ | ११ |
| मुंहूरुदर | मुंहुरुदर | १११६ | १५ |
| न.सारन्ध्रं | नासारन्ध्रं | १११६ | १७ |
| भासं | मांसं | १११७ | १२ |
| कूर्चास्त्रानल- | कूर्चास्त्रानल- | ११२१ | ३ |
| उष्णाषी | उष्णीषी | ११२५ | २ |
| गान्धर- | गान्धार- | ११२५ | ३ |
| वाभवम् | वाग्भवम् | ११३४ | ९ |
| क्षिप्रसाद- | क्षिप्रप्रसाद- | ११४० | १४ |
| त्रायवृतम् | त्रयावृतम् | ११४० | १८ |
| विंद्वेषे | विंद्वेषे | ११४६ | २४ |
| स्फुरत्कशरं | स्फुरत्केशरं | ११४८ | २ |
| त्रिकोण | त्रिकोणम् | ११४९ | १ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| उतरान्तं | उत्तरान्तं | ११५० | २३ | कमाना | कामना | ११८५ | २६ |
| न्मत्रबर्णां | न्मन्त्रवर्णां | ११५६ | ३ | द्विनम्र- | द्विनम्र- | ११८९ | ८ |
| वुधादोनां | वुधादीनां | ११५८ | १४ | उचुस्ततः | ऊचुस्ततः | ११९४ | २१ |
| मालामन्त्रं | मालायन्त्रं | ११५८ | २३ | प्रोको | प्रोक्तो | ११९५ | १३ |
| प्रयोदयात् | प्रचोदयात् | ११६० | १५ | स्तम्भनिर्भयः | स्तम्भं निर्भयः | १२०८ | २१ |
| ध्यायै | ध्याये | ११६२ | १० | लक्षे | लक्षं | १२१५ | ११ |
| रीत्यत्येर्थः | रीत्येत्यर्थः | ११६४ | १४ | मालिका | मालिकाम् | १२१७ | २० |
| त्रिष्टूप् | त्रिष्टुप् | ११७० | ७ | समागात्य | समागत्य | १२२५ | १६ |
| गीवत् | गीतवत् | ११७० | २३ | लिङ्गनादाभिः | लिङ्गनादिभिः | १२२६ | ९ |
| पुरश्चर- | पुरश्चरण- | ११७२ | १७ | शैवागमं | शैवागमं | १२२९ | १५ |
| संखया | संख्यया | ११८३ | १७ | सिंहताम् | संहिताम् | १२३० | १ |

# दशमहाविद्यास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च प्रदर्श्यन्ते ।

तथा च (मुण्डमालायाम्)

कालो तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥
वगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका ।
एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्त्तिताः ॥

तत्रादौ प्रथमविद्या प्रोक्ता (कुमारीतन्त्रे)

भैरव उवाच ।

अस्ति गुह्यतमं ह्येतज्ज्ञानमेकं सनातनम् ।
अतीव हि सुगोप्यं च कथितुं नैव शक्यते ॥
अतीव मत्प्रियाऽसीति कथयामि तव प्रिये ।
सर्वं ब्रह्ममयं ह्येतत् संसारं स्थूलसूक्ष्मकम् ॥
प्रकृतिं तु विना नैव संसारमुपपद्यते ।
तस्माच्च प्रकृतेर्मूलकारणं नैव दृश्यते ॥
रूपाणि बहुसङ्ख्यानि प्रकृतेरस्ति भामिनि ।
एषां मध्ये महेशानि कालीरूपं मनोहरम् ॥
विशेषतः कलियुगे नराणां भुक्तिमुक्तिदम् ।
तस्या उपासकाश्चैव ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥
इन्द्रः सूर्यश्च वरुणः कुवेरोऽग्निस्तथाऽपरः ।
दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयो बृहस्पतिः ॥
बहुना किमिहोक्तेन सर्वे देवा उपासकाः ।

कालिकायाः प्रसादेन भुक्तिमुक्त्यादिभागिनः ॥
तस्या मन्त्रं प्रवक्ष्यामि यतो रक्षेज्जगत्त्रयम् ।
ककारं वह्निसंयुक्तं रतिविन्दुसमन्वितम् ॥
त्रिगुणं च ततः कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।
दक्षिणे कालिके चेति पूर्वबीजानि चोच्चरेत् ॥
वह्निजायावधिः प्रोक्तो कालिकाया मनुः शिवे ।
द्वाविंशत्यक्षरी विद्या सिद्धिविद्येयमीरिता ॥

मन्त्रार्थमाह (संकेततन्त्रे)

ककाराद्विश्वमुत्पन्नं तेन सृष्टिस्वरूपिणी ।
रेफः कालाग्निरुद्रात्मा तेन संहाररूपिणी ॥
ईकारश्च महालक्ष्मीर्लोकत्रयविभाविनी ।
तेनेयं पालिनी शक्तिः सामरस्यं च विन्दुना ॥

(कालीतन्त्रे)

ककाराच्छिवरूपत्वात् सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ।
ज्वलनार्णसमायोगात् सर्वतेजोमयी शुभा ॥
विन्दुमाली केवलं तु सर्वतत्त्वप्रकाशिका ।
विन्दुना निष्कलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी ॥
कूर्चबीजं केवलं तु सर्वबोधप्रकाशकम् ।
चैतन्यरूपं संसारभीषणं मुक्तिदायकम् ॥
व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना ।
तयोर्विसर्ग ईकारो विन्दुना* तान्त्रिकी मता ॥
दक्षिणा सिद्धसाध्यादिरहिता क्षिप्रसिद्धिदा ।

* विन्दुनादात्मिका इति ४ पु० पा० ।

कालसंकलनात् काली कालग्रासं करोत्यतः ॥
स्वाहेति विषयाः सर्वे देवतायां समर्पिताः ।
एवं समस्तरूपेण केवलं चित्कलाऽपरा ॥
सर्वदेवमयी साक्षाच्छब्दब्रह्मस्वरूपिणी ।
एवं ध्यायेद्विशुद्धात्मा जीवन्मुक्तः स्वयं शिवः ॥

विद्यामाहात्म्यमाह (भैरवीतन्त्रे)

नात्र चित्ताविशुद्धिः स्यान्नारिमित्रादिदूषणम् ।
न वा प्रयासबाहुल्यं समयासमयादिकम् ॥
न वित्तव्ययबाहुल्यं कायक्लेशकरं न च ।
देवैर्देवत्वविधये सिद्धैः खेचरसिद्धये ॥
पन्नगै राक्षसैर्मर्त्यैर्मुनिभिश्च मुमुक्षुभिः ।
कामिभिर्धर्मिभिश्चार्थमीप्सुभिः सेव्यते सदा ॥
य एनां चिन्तयेन्मन्त्री सर्वकामसमृद्धिदाम् ।
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्न संशयः ॥
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ।
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ॥
वह्नेः शैत्यं जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः ।
दिवारात्रिव्यत्ययं च स कर्त्तुं भवति क्षमः ॥
अन्ते च लभते देव्या गणत्वं दुर्लभं नरः ।
चन्द्रसूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि ॥
न तस्य दुर्लभं किंचिद्यः स्मरेद्घोरकालिकाम् ।

(कालीतन्त्रे)

अस्याः स्मरणमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ।

एवं समस्तविद्यानां राज्ञी स्तोतुं न शक्यते ॥
वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
सर्वसिद्धिप्रदा देवी अनिरुद्धसरस्वती ॥
तस्मादस्या ज्ञानमात्रात् सिद्धयः संभवन्ति हि ।

तथा ।

अपि चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समो मन्त्रः सदा भवेत् ॥

तन्त्रान्तरे ।

कलौ काली कलौ काली कलौ काली तु केवला ।
साधिता कालनाथेन प्रत्यक्षा कालिका कलौ ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिन्मोक्षकामुकः ।
स भोजनं विना नूनं क्षुन्निवृत्तिमभीप्सति ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिच्छान्तिमिच्छति ।
स हि शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चित् काव्यमिच्छति ।
स तु दुःखनिवृत्त्यर्थं पापानि कुरुते सदा ॥
श्रीमहाकालिका विद्या कलौ पूर्णफलप्रदा ।
कलिर्हि यस्या दासस्य पादपूजां करोति हि ॥
अज्ञानाज्ज्ञानतो वाऽपि सलीलं वा सहेलया ।
स्मृताऽपि सिद्धिदा काली सकृदेव महेश्वरि ॥
महाविद्या सिद्धिविद्या विद्याभेदैः प्रतिष्ठिता ।
उपविद्यादिभेदैश्च कालिका संस्थिता भुवि ॥
ताराद्याः सकला विद्याः कालिकायाः प्रजज्ञिरे ।
सर्वा विद्याः कालिकायां संस्थिता एव पार्वति ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (कालीतन्त्रे)

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक्छन्द उदाहृतम् ।
देवता कालिका प्रोक्ता लज्जाबीजं तु बीजकम् ॥
शक्तिस्तु कूर्चबीजं स्यादनिरुद्धसरस्वती ।

(कालीक्रमे)

कीलकं चाद्यबीजं तु चतुर्वर्गार्थसिद्धिदम् ।

(कालीतन्त्रे)

कवित्वार्थे नियोगः स्यादेवमृष्यादिकल्पना ।
अङ्गन्यासकरन्यसौ यथावदभिधीयते ॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

(वीरतन्त्रेऽपि)

दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

न्यासान्तराणि तत्रैव द्रष्टव्यानि ।

अथ ध्यानं (मेरुतन्त्रे)

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषणाम् ॥
खड्गाभयवराँश्छिन्नं मुण्डं च दधतीं करैः ।
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ॥
कण्ठावसक्तमुण्डालीं गलद्रुधिरचर्च्चिताम् ।
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मविराजिताम् ॥
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ।
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥
सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविच्छुरिताननाम् ।
घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तलम्बकचोच्चयाम् ।

शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालसमायुक्तां शवोपरिरतान्विताम् ॥
सुखप्रसन्नवरदां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं संचिन्तयेत् कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥

तथा ।

कपिलारत्नसम्पूर्णपृथ्वीदानस्य यत् फलम् ।
कोटिहोमसहस्रस्य देव्या ध्यानेन तत् फलम् ॥
एतन्मन्त्रजपान्मन्त्री मुच्यते ब्रह्महत्यया ।
पितृमातृवधाद्यैश्च किमन्यैः *क्षुद्रघातकैः ॥

अथ शापोद्धारस्तत्रान्तरे ।

शापोद्धारं प्रवक्ष्यामि वशिष्ठमुनिना कृतम् ।
चतुर्विंशतिलक्षाणि जप्त्वा कोपेन शप्तवान् ॥
अद्य प्रभृति देवेशि कालिके कालरूपिणि ।
तव मन्त्रेषु संसिद्धिः कष्टेनैव भविष्यति ॥
इति श्रुत्वा महादेवी प्रादुर्भूता प्रसाद्य तम् ।
उवाच पुत्र किमिदं शापदानं वृथा कृतम् ॥
एवं फलं यथा न स्यात् तथा कुरु मुनीश्वर ।
ज्ञानं दत्तं दुराराध्यं दुर्लभं यत् सुरैरपि ॥
ततः प्रीत्या वरं लब्ध्वा ज्ञानविज्ञानसंयुतम् ।
उवाच प्रीतमनसा शापान्तं मन्त्रसङ्कटे ॥
मातः क्रोधेन कथितं तत्रोपायमहं ब्रुवे ।
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य घोररूपे च दक्षिणे ॥

* क्षुद्रपातकैरिति २, ३, ४, ५, पु० पा० ।

सिद्धिं कुरुद्वयं प्रोच्य कालिकेति पदं ततः ॥
ममाभीष्टफलं शीघ्रं देहि द्रविणसम्पदम् ।
जपादौ मन्त्रमुच्चार्य जपान्ते च पुनः पठेत् ॥
भविष्यति ततः सिद्धिरचिरात् परमेश्वरि ।

अथासनभेदा उक्ता मत्स्यसूक्ते ।

मृद्वच्चूडकमासीनश्चान्येषु कोमलेषु च ।
विष्टरे वा समास्तृत्य साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम् ॥

एषां लक्षणानि तत्रैव ।

अर्वाक् षण्मासतो गर्भच्युतमाहुर्मृदं बुधाः ।
चूडोपनयनैर्हीनमेतच्चाचूडकं विदुः ॥
निवृत्तचूडको बालो हीनोपनयनः पुमान् ।
यो मृतः पञ्चमे वर्षे तमेव कोमलं विदुः ॥

तथा ।

मृतासनं विना देवि यो जपेत् कालिकां नरः ।
तावत् स नारकी ज्ञेयो यावदाहूतसंप्लवम् ॥

यो वीर इत्यर्थः । पशोस्तु तादृशासननिषेधात् ।
मृद्वासनाद्यभावे ऽनुकल्प उक्तो (वीरतन्त्रे)

शवाभावे विष्टरं तु शवरूपं प्रकल्पयेत् ।
पञ्चाशद्भिर्भवेद्ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरम् ॥

(कालीतन्त्रादौ)

मृताभावे कुशरूपं विष्टरं परिकल्पयेत् ।
विष्टरः साधकस्याथ कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ॥
भूतपत्राणि यस्मिन् वै स कुशेत्यभिधीयते ।
हस्ते पादे दश दशमिता दिग्युगं हृत्सरोजे

विंशत्सङ्ख्याः सकलवरदे मस्तके कीर्त्तिताश्च ।
गुह्ये जिह्वावदनरदने घ्राणकर्णस्तनेषु
लिङ्गे चाण्डे युगपरिमिता योजनीयाः कुशाश्च ॥
इत्येष विष्टरः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
कुशैर्वा बन्धनं कार्यं नाड्या वा परमेश्वरि ॥
रक्तमिश्रितसूत्रेण पट्टसूत्रेण वा पुनः ।
विष्टरं परिकल्प्याथ तस्योपरि जपं चरेत् ॥
विधिविष्टरपद्मस्य विधिः प्रोक्तो मया तव ।
शवरूपं प्रकल्प्याथ कविर्वाग्मी भवेन्नरः ॥
स्वयम्भुवाक्तं सूत्रं च कर्त्तव्यं सर्वसिद्धये ।
शवाभावे विष्टरस्तु शवरूपः प्रकीर्त्तितः ॥
विष्टरः शिवरूपः स्यात् स्वस्य शक्तित्वकल्पना ।
शिवशक्तिसमायोगात् किं न सिद्ध्यति भूतले ॥

अथ विष्टरसंस्कारः (शक्तिसङ्गमे)

गायत्र्या त्रोटनं कार्यं मूलेन ग्रथनं चरेत् ।
कृतसङ्कल्पको मन्त्री कोमलं वामपाणिना ॥
कूर्चबीजेन सङ्गृह्य अस्त्रमन्त्रेण प्रोक्षणम् ।
प्रणवं भुवनेशीं च समुच्चार्य तु तं वदेत् ॥
शवरूप महाप्रेत चाष्टसिद्धिं प्रयच्छ मे ।
इति स्तुत्वा तु तं सम्यक् कुशमध्ये निधापयेत् ॥
तस्य देहे त्रिकोणं तु रक्तचन्दनकेन वै ।
मायां तन्मध्यगां लिख्य बहिर्मण्डलकं चरेत् ॥
प्रणवम्-आः सुरेखे च वज्ररेखे ततःपरम् ।

कूर्च्चं चास्त्रं वह्निवधूरयं च मण्डले मनुः ॥
आँकारं च ततो मायां क्रौँकारं हंस एव च ।
वह्निजायां समुच्चार्य शवप्राणाः पदं वदेत् ॥
इह प्राणाः पदं चोक्त्वा शवजीव इह स्थितः ।
शवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुरेव च ॥
श्रोत्रघ्राणानीहागत्य सुखं च चिरमेव च ।
तिष्ठन्तु स्वाहया युक्तः प्राणसंस्थापने मनुः ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्याधारशक्तिपदं ततः ।
कोमलासनपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तेन तमर्च्चयेत् ॥
प्रणवं कामपीठाय नमः शब्दान्नमस्क्रिया ।
स्वर्णैर्माषत्रयैः पट्टे कार्या मूर्त्तिः शवस्य तु ॥
संस्थाप्य विस्तरस्यान्ते सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

मृताभाव इति वचनात् पशोः शवानुकल्पकुशपुत्तलमपि नास्ति मुख्येऽधिकारिण एवानुकल्पेऽधिकारादिति सुधार्णवकृतः ।

आसनान्तरसंस्कारोऽप्युक्तो (भैरवतन्त्रे)

कुशं व्याघ्राजिनं वाऽपि कम्बलं लोहितं तथा ।
कोमलाद्यासनं वाऽपि पीतवस्त्रेण वेष्टयेत् ॥
आसनं सम्यगापाद्य ततः शोधनमाचरेत् ।
कल्पोक्तेन विधानेन पूजां सम्यक् समाचरेत् ॥
पूजार्थमासनमहं शोधयामि महेश्वरि ।
देव्याज्ञामेवमादाय मूलहृन्मनुनाऽपि च ॥
जलेनासनमभ्युक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्य च ।
अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य सदाशिवनिभं स्मरेत् ॥
तत्र पीठमनुं भक्त्या जपेदष्टोत्तरं शतम् ।

यथा विभवसम्भारैः पूजयित्वा सदाशिवम् ॥
सिद्धीश्वर महादेव सर्वसिद्धिप्रदायक ।
देहि मेऽभीष्टसिद्धिं त्वमेतदासनरूपतः ॥
इदं मन्त्रं समुच्चार्य उपविश्यासने ततः ।
यथाविधि विधायाथ गुरवे दक्षिणां ददेत् ॥

इत्यासनसंस्कारः ।

अथ देशाः (फेत्कारिणीये)

एकलिङ्गे श्मशाने च शून्यागारे चतुष्पथे ।
तत्रस्थः साधयेद्योगी विद्यां त्रिभवमोचिनीम् ॥

एकलिङ्गलक्षणमुक्तं तत्रैव ।

पञ्चक्रोशान्तरे यत्र न लिङ्गान्तरमीक्षते ।
तदेकलिङ्गमाख्यातं तत्र सिद्धिरनुत्तमा ॥

श्मशानादिलक्षणमुक्तं (त्रिशक्तिरत्नाकरे)

दह्यन्ते व्यसवो यत्र शवकीलकसंकुले ।
गृध्रगोमायुकाकाद्यैर्मांसलुब्धैर्यदावृतम् ॥
तत् श्मशानमिति ख्यातं पिशाचगणसेवितम् ।
काकादिनीडसंयुक्तं कृत्तिच्छत्रादिसंयुतम् ॥
नागरैर्दूरनिर्मुक्तं साध्यसोद्वेगकारकम् ।
सौधसंरूढघासाढ्यं शून्यागारं तदुच्यते ॥
चतुर्णां च यथा यत्र संयोगो युगपद्भवेत् ।
तच्चतुष्पथमित्युक्तं रजन्यामिष्टदायकम् ॥
पूर्वपूर्वमिदं शस्तं जघन्यश्चोत्तरोत्तरम् ।
उज्जटे पर्वते वाऽपि निर्जने वा चतुष्पथे ॥
देवागारे देवशून्ये विल्वमूले नदीतटे ।

स्वगृहे निर्जनारामे तथा चाश्वत्थसन्निधौ ॥

(कुमारीतन्त्रे)

तदभावे दिव्यगेहे सिन्दूरादिभिरङ्किते ।
खड्गशूलगदाकर्त्रीचामरव्यजनादिभिः ॥
वितानधूपसङ्कीर्णे कृष्णागुरुसुवासिते ।
युवतीनां सुरापीनां वेश्यानां लास्यशोभिते ॥
शङ्खघण्टारवाकीर्णे दीपावलिविराजिते ।
एवम्भूते गृहे पूजा कालिकायाः सुशोभना ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वीरतन्त्रे)

आदौ मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं पुरश्चरणमाचरेत् ।
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥

(स्वतन्त्रतन्त्रे)

दिवा लक्षं शुचिर्भूत्वा हविष्याशी जपेन्नरः ।
ततस्तु तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ॥
तर्पयेत् तीर्थतोयेन पयसा सर्पिषाऽपि वा ।
मधुना वा सितामिश्रतोयेन परमेश्वरीम् ॥
देवीं चाभिषिञ्चेत् तोयैस्तर्पणस्य दशांशतः ।
तद्दशांशं हविष्यान्नैर्भोजयेद्भक्तितः प्रिये ॥
कालीमन्त्रविदो विप्रान् दक्षिणां गुरवे ददेत् ।
पाशवं कठिनं कल्पं शृणु वैरं ततः प्रिये ॥
रात्रौ मांसाशवैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।
ततो नग्नां स्त्रियं नग्नो रमन् क्लेदयुतोऽपि वा ॥
जपेल्लक्षं ततो देवीं होमयेज्ज्वलितेऽनले ।
योनिकुण्डे स्थिते सर्पिर्मांसमद्ययुतं तथा ॥

दशांशं तर्पयेन्मद्यैर्मांसमिश्रैस्तु साधकः ।
तर्पणस्य दशांशेन अभिषिञ्चय जगन्मयीम् ॥
दशांशं भोजयेत् साधु साधकं कालिकाप्रियम् ।
मद्यं मांसं च मत्स्यं च चर्वणं च प्रदापयेत् ॥
ततस्तु तोषयेद्भक्त्या गुरुं स्वर्णादिभिः प्रिये ।
एतत्कल्पद्वयाद्देवि मन्त्रः सिध्यति वै ध्रुवम् ॥

(कालीतन्त्रे)

आदौ पुरस्क्रियां कुर्यान्नियमेन यथाविधि ।
लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ॥
रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगार्हो न चान्यथा ॥

(साधनसमुच्चये)

नित्यकर्म दिवा कृत्वा रात्रौ पूजां समाचरेत् ।
पूजान्ते तु जपं कुर्यात् कारणास्वादमोदितः ॥
जपेन लक्षमात्रेण काली विद्या प्रसिध्यति ।

(भैरवतन्त्रे)

लक्षं जपेद्धविष्याशी दिनेनैव जितेन्द्रियः ।
ब्रह्मचर्यपरो भूत्वा पुरश्चरणकर्मणि ॥
तथा रात्रौ जपेल्लक्षं मन्त्री मैथुनतत्परः ।
कृत्वाऽऽचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ॥
विधानेनाथ सिद्धिः स्यान्मनुरेव न संशयः ।

(भैरवयामले)

दीक्षाविधानमधिगम्य गुरोः सकाशा-
ल्लब्ध्वा मनुं जपति लक्षमितं दिवा यः ।

रात्रौ हविष्यभुगमत्सरकामकोप-
लोभाद्यचञ्चलमनाः स तु साधकेन्द्रः ॥
लक्षं निशि स्ववनितासु रतावसाने
नग्नो विमुक्तचिकुरस्त्वयि दत्तचित्तः ।

(महाकालस्तुतौ)

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
दिवा मातर्युष्मच्चरणयुगलध्याननिरतः ।
परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं
जपो लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥

(मेरुतन्त्रे)

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।
अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥
दशांशं होमयेदाज्यैस्तर्पयेदभिषेचयेत् ।
होमं च तर्पणं पूजा कर्त्तव्या तु विशेषतः ॥
ततः प्रयोगान् कुर्वीत काम्यानिष्टफलाप्तये ।

(वीरचूडामणौ)

साधनस्य विधिं वक्ष्ये संकेतपरमाद्भुतम् ।
येन विज्ञातमात्रेण खेचरत्वं च जायते ॥
होमं कुर्यात् प्रयत्नेन पायसेन तिलेन वा ।
स्नातः शुक्लाम्बरधरो नित्यकर्मदिवाशुचिः ॥
रात्रौ पूजां प्रकुर्वीत पञ्चमुद्राविधानतः ।
अनेनैव विधानेन लक्षमेकं जपेद्बुधः ॥
स्वस्वकर्म पुरस्कृत्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
हावभावादिकं कुर्यान्महाचीनलतां हरेत् ॥

(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्रे)

तेनैव तर्पणं कुर्यात् स्नानपानादिकं सदा ।
दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ॥
कल्पद्वयं समाश्रित्य मन्त्रः सिध्यति सत्वरम् ।
गुरोराज्ञां समादाय स्नातः शुक्लाम्बरः शुचिः ॥
दिवा लक्षं जपेद्विद्यां ब्रह्मचर्यं समाश्रितः ।
रात्रौ च देवदेवेशीमिष्ट्वा वामोपचारकैः ॥
शक्तीः संपूज्य विधिवत् कृत्वा निधुवनोत्सवम् ।
कोमलाद्यासनासीनो मुक्तकेशो दिगम्बरः ॥
ताम्बूलपरिपूर्णास्यः सिन्दूराङ्कितभालकः ।
रहस्यमालामादाय जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥
कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेषः प्रकीर्त्तितः ।

अत्र ब्राह्मणस्य पशोर्वा दक्षिणोपचारेण दिवैकलक्षजपः । शूद्रस्य वीरस्य च रात्रौ वामोपचारेणैकलक्षजप इति राघवभट्टादयः ।

तेषामयमाशयः ।

भैक्ष्यादिनियमाहारः सकृद्रात्रौ विधीयते ।
दिवा चैव जपं कुर्यात् पौरश्चरणिको द्विजः ॥

इति (फेत्कारिणी-)तन्त्रवचनात् ।

स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः प्रयतमानसः ।
दिवा सर्वं प्रकर्त्तव्यं धर्मकामार्थसिद्धये ॥
द्विजानामत्र सर्वेषां विधिरेषः प्रकीर्त्तितः ।

इति (मेरुतन्त्र-)वचनाच्च विप्रादिकर्तृकपुरश्चरणे ।

त्रिसन्ध्यं देवपूजां च त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ।
रात्रौ मन्त्रं च मालां च स्पृशेन्नैव कदा चन ॥

इति पशुभावप्रकरणीय-(भावचूडामणि-)वचनात् । पशुकर्त्तृकपुरश्चरणे च दिवस एव कालः ।

एवं च ।

द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहोच्यते ।
शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनोत्तरार्धात् ।
शूद्रकर्त्तृकपुरश्चरणे ।

गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि ।
निशायामेव जप्तव्यं रात्रिशेषे जपेन्न च ॥

वीरपुरश्चरणप्रकरणीय-(मुण्डमाला-)वचनाद्वीरकर्त्तृकपुरश्चरणे च रात्रिरेव काल इति व्यवस्थितेः ।

पशुर्गुरुमुखाल्लब्धां विद्यां कालघनप्रभाम् ।
पाशवेन तु कल्पेन लक्षं जपति साधकः ॥
दिव्यगुरुमुखाल्लब्ध्वा कालिकां दिव्यरूपिणीम् ।
लक्षं जप्यात् सदा मन्त्रं वीरकल्पेन साधकः ॥

इति (कालीकुलार्णव-)वचनात् ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।
दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपं चरेत् ॥

इति (कालीक्रम-)वचनाच्च सर्वेषामेकलक्षजपात्मकमेव पुरश्चरणं सिध्यतीति ।

अस्मिन् मते ।

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ॥
एवं लक्षद्वयं जप्त्वा तद्दशांशेन मन्त्रवित् ।
अयुतं होमयेद्देवि दिवारात्रिप्रभेदतः ॥

इति सर्वेषां भिन्नभिन्नेति कर्त्तव्यताकसमुचितलक्षद्वयजपात्मकपुरश्चरणविधायक-(कुमारीतन्त्र-)विरोधो दुर्वारः ।

(निरुत्तरतन्त्रेऽपि) लक्षद्वयपरिमित एव जप उक्तः ।

लक्षद्वयं जपेद्विद्यां दिवारात्रिप्रभेदतः—इति ।

सुधार्णवकृतस्तु—

'एवं लक्षद्वयं जप्त्वा' इत्यादि-(कुमारीतन्त्रा-)दिवचनाद्दिवारात्र्योर्भिन्नभिन्नाचारेणैकैकलक्षजपात्मकसमुचितलक्षद्वयजपः सर्वस्यैव प्राप्तः ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।
दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपं चरेत् ॥

इति (कालीक्रम-)वचनेनापवाद्यते ।

एवं च वीरब्राह्मणस्यापि रात्रौ मैरेयाद्युपादानपुरःसरः ।

ब्राह्मणो मदिरां दत्वा ब्राह्मण्यादेव हीयते ।

इत्यादिवाक्यविरुद्धो वीरभावप्रकरणीयब्राह्मणकर्तृकशीरोपादानविधायक-(भावचूडामणि-)विरुद्धश्च जपः प्राप्तः ।

तत्र

द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहेष्यते ।

इत्यपवादकं वाक्यम् । तेन वीरस्यापि ब्राह्मणस्य मैरेयाद्युपादानपूर्वकं दिवालक्षजपः पर्यवसन्नो भवति ।

एवं च राजन्यवैश्ययोरपि रात्रिमात्रजपापवादकम् ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।

इत्युत्तरार्धम् । तेन (कुमारीकल्प-)वचनं राजन्यवैश्यविषयं पर्यवस्यति ।

अपवादविषयपरिहारेणोत्सर्गस्य व्यवस्थितेः पशूनां रात्रिजपश्च पशुभावप्रकरणीय-(भावचूडामणि-)वचनपरास्त एवेति सर्वमनवद्यम् ।

वस्तुतस्तु—

'पशुर्गुरुमुखाल्लब्ध्वा' इत्यादि(कालीकुलार्णव-)वचनात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य पशुभावेन वीराल्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन च साधने एकलक्षजपो वैपरीत्ये च लक्षद्वयजप इत्याहुः । अत्र वैपरीत्ये (कुमारीतन्त्रो-)क्तरीत्या लक्षद्वयजपस्य कर्त्तव्यतया वीराल्लब्धमन्त्रस्य पशुभावेन साधनासम्भवात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन साधनमेव वैपरीत्यमिति ध्येयम् ।

अत्र कृष्णभट्टपादाः ।

'एवं लक्षद्वयं जप्त्वा' इत्यादि-(कुमारीतन्त्रा-)दिवचनात् सर्वेषामपि लक्षद्वयपरिमित एव जपः । पशुदिव्यवीराणामेकैकलक्षजपविधायक-(कालीकुलार्णवकालीक्रमा-)दिवचनं तु सिद्धमन्त्रविषयम् ।

अत एवोक्तं (यामलादौ)

गुरुणा साधितो मन्त्रो यदि भाग्येन लभ्यते ।
लक्षमात्रं तदा जप्त्वा सर्वकर्माणि साधयेत्—इति ॥

तत्र विशेषस्तु ।

रात्रौ मांसासवैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।
ततो नग्नां स्त्रियं नग्नो रमन्—इत्यादि(स्वतन्त्रतन्त्रा—)दिवचनात् ।

ब्राह्मणो मदिरां दत्त्वा—इत्यादिमहाकालोक्तविरुद्धमैरेयदानादिकम् ।

अज्ञानात् स्वस्त्रियं गत्वा—इत्यादिसामान्यपुरश्चरणप्रकरणीय—(सिद्धान्तसम्प्रदाया)—दिवचनविरुद्धरात्रिजपप्राक्कालीनसुरतादिकं च ब्राह्मणस्यापि प्राप्तम् ।

तदुभयमपि ।

द्रव्येण सात्त्विकेनैव ब्राह्मणः पूजयेच्छिवाम् ।
स्वकीयां परकीयां वा सामान्यवनितां तथा ॥
जपेयुस्ताः समाकृष्य क्षत्रविट्शूद्रजातयः ।

इति (महाकालसंहिता)-वचनेनापवाद्यते ।

एवं च ।

स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ।
स्पृष्ट्वा तथा समाघ्राय पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥
ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ।

इत्यादिभिः पशुभावप्रकरणीय—(भावचूडामणि—)वचनैर्विप्रेतरपशोरपि तदुभयं निरस्तमेव ।

पशुमात्रस्य रात्रिजपनिषेधक—(भावचूडामणि—)वचनं तु एतद्देवताद्यतिरिक्तदेवतोपासकपशुपरम् ।

रात्रावपि जपेत् तावत् प्रत्यवायोपशान्तये ।

इति पशुकर्त्तृककाम्यप्रकरणीय—(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र)—वचनेन एतद्देवतोपासकपशो रात्रिजपस्यापि विहितत्वात् ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।

इति वचनं तु शूद्राणां रात्रिजपे फलातिशयबोधकं न तु शूद्रकर्त्तृकदिवातनजप-प्रतिषेधकम् ।

तथा च ।

वीरदिव्ययोर्दिवा पाशवकल्पेनैकलक्षजपो वीरकल्पेन रात्रावेकलक्षजपस्तत्रापि सा-क्षान्मैरेयाद्युपादानं शूद्रस्यैव न तु वीरस्यापि त्रैवर्णिकस्य तदुपादानम् ।

क्षीरेण ब्राह्मणैस्तर्प्या घृतेन नृपवंशजैः ।
माक्षिकैर्वैश्यवर्णैस्तु आसवैः शूद्रजातिभिः ॥

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

अत एवोक्तं (महाकालसंहितायाम्)

श्रूयते यत् फलाधिक्यं तत्रादौ मद्यदानतः ।
तद्धि शूद्रपरं ज्ञेयं न तु द्विजपरं प्रिये—इति ॥

परोक्तस्तु दक्षिणाचारेण दिवैकलक्षजपस्तेनैवाचारेण रात्रावेकलक्षजप इति सर्वेषा-मपि लक्षद्वयजपात्मकमेव पुरश्चरणं पर्यवसन्नमिति प्राहुः ।

मम त्वेवं प्रतिभाति ।

दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ।

इत्यादि (श्रुतिसिद्धान्त-) तन्त्रवचनाद्दक्षिणमार्गिणः पाशवकल्प एव वाममा-र्गिणो वीरकल्पएवाधिकारित्वे सिद्धे पाशवकल्पेन वीरकल्पेन च पुरश्चरणमुक्त्वा—

कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेष प्रकीर्त्तितः ।

इति तत्रैवोक्तत्वात् ।

कुलाचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ।

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

दक्षवामक्रियायुक्तः कौलश्चोभयमिश्रितः ।

इत्याद्य प्रकरणीय-(वाडवानल)-वचनाच्च एतत्कल्पद्वयाश्रयणे कौलिकस्यैवा-धिकारः प्रतीयते ।

तथा च ।

पाशवकल्पेन दिवैकलक्षजपरूपपुरश्चरणं दक्षिणमार्गिणः । वीरकल्पेन रात्रावेकल-क्षजपरूपपुरश्चरणं वाममार्गिणः । एतदुभयात्मकपुरश्चरणं कौलिकस्येति मार्गभेदेन पुर-श्चरणस्यापि भेदः ।

द्विजानां चैव सर्वेषाम्—इत्यादौ द्विजपदं पशुपरं न तु विप्रमात्रपरम् । तस्य त्रैवर्णिकवाचकत्वात् । अत एव क्षत्रियवैश्ययोः संग्रहाय सर्वेषामिति पदमुपात्तम् । उत्तरार्धे तु नोपात्तम् । अन्यथा राजन्यवैश्यविषयकाकाङ्क्षाया अनिवृत्तिप्रसङ्ग इति तु सुधार्णवकृतैवोक्तम् । पशुश्च दक्षिणमार्गी । एवमुत्तरार्धे शूद्रपदं वाममार्गिपरम् ।

अत एवोक्तं (मेरुतन्त्रे)

शूद्रादियवनान्तानां सिद्धिर्वामपथे स्थिता—इति ।

दिव्यो गुरुमुखात्—इत्यत्र दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरः—इत्यत्र च दिव्यवीरौ वाममार्गिणौ न तु कौलिकौ । कौलिकवाममार्गिभेदेन तयोः प्रत्येके द्वैविध्यस्य वक्ष्यमाणत्वात् तथा च दिवैकलक्षजपविधायकानि (कालीकुलार्णवा)—दिवचनानि दक्षिणमार्गपरतया रात्रावेकलक्षजपविधायकानि (साधनसमुच्चया—)दिवचनानि वाममार्गपरतया दिवारात्रिभेदेन समुचितलक्षद्वयजपविधायकानि (भैरवतन्त्रकुमारीतन्त्रा—)दिवचनानि च कुलमार्गपरतया संगमनीयानीति सकलमकलङ्कम् ।

किञ्च ।

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥

इत्यादावपि त्रिविधमार्गोपयुक्तं त्रिविधपुरश्चरणं सुधीभिराकलनीयम् ।

ननु पशूनामेतद्देवताराधने कथमधिकारः ।

दिव्यभावं वीरभावं विना कालीं न पूजयेत् ।
पूजयेन्नरकं याति दुःखं तस्य पदे पदे ॥
पशुभावाश्रितो देवि यदि कालीं प्रपूजयेत् ।
रौरवं नरकं याति यावदाहूतसंप्लवम् ॥

इति (निरुत्तरतन्त्र—)वचनेन निषेधादिति चेन्न । दिव्यभावमित्यादिवचनानां वामाचारप्रकरणीयतया वाममार्गिणां पशुभावाश्रयणनिषेधपरत्वात् ।

तथा च ।

वाममार्गी दिव्यभावं विना कालीं न पूजयेत् ।

पशुभावाश्रितः सन् यदि पूजयेत् तदा रौरवं नरकं यातीति तदर्थः ।

तदुक्तमन्यत्रापि ।

दिव्यभावं वीरभावं वाममार्गी समाश्रयेत् ।

पशोः संसर्गमात्रेण रौरवं नरकं व्रजेत्-इति ॥

तथा च ।

पशुभावो हि विप्राणां श्रेयस्करतरो मतः ।
तस्मात् पाशवकल्पेन विप्रः कालीं प्रपूजयेत् ॥

इति (श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र-) वचनात् ।

विप्रो दक्षिणमार्गेण महामायां प्रपूजयेत् ॥

इत्यादि (सिद्धान्तसार-)वचनाच्च पशूनामेतद्दैवतोपासनाधिकारित्वमक्षतमेव ।
अन्यथा ।

पशुर्गुरुमुखाल्लब्ध्वा-इत्यादिपूर्वोक्त-(कालीकुलार्णव-)वचनस्य ।
स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जयेत् पशुः ।

इत्यादि(कालीक्रम-)वचनस्य चासङ्गत्यापत्तेः ।

एवं च ।

साधके क्षोभमापन्ने देवीक्षोभः प्रजायते ।
तस्माद्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
विना पीत्वा सुरां भुक्त्वा मांसं गत्वा रजस्वलाम् ।
यो जपेद्दक्षिणां कालीं तस्य दुःखं पदे पदे ॥
कलावासवयोगेन तर्पयेत् कालिकां प्रिये ।

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-)वचनानामपि वीरपरत्वमवगन्तव्यम् । वीरस्यापि ब्राह्मणस्य मैरेयाद्युपादाननिषेधाद्ब्राह्मणेतरवीरपरत्वमुक्तवचनानामिति बहवः ।
वस्तुतो ब्राह्मणस्य वीरादिभाव एव निषिद्धः ।

पशुभावो हि विप्राणाम्-इत्युक्तत्वात् ।

ननु ।

मद्यं मत्स्यं तथा मांसं मुद्रां च मैथुनं ततः ।
ब्राह्मणो वीरभावेन कालिकायै निवेदयेत् ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च कुलयोगतः ।
पञ्चमैः पूजयेत् कालीं मोक्षार्थी यः कलौ भवेत् ॥

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-)वचनाद्ब्राह्मणस्य वीरभावे कथं नाधिकार इति चेन्मैवम् ।

ब्राह्मं वीर्यं तथा क्षेत्रं संस्कारा ब्रह्मसंभवाः ।
ब्राह्मणाचरणाद्ब्रह्मविद्याभिर्ब्राह्मणो भवेत् ॥

इति (मेरुतन्त्रो-)क्तेषु पञ्चसु लक्षणेषु निर्देशक्रमप्रातिलोम्येन लक्षणचतुष्टयहीनस्य शूद्रतुल्यस्यैव ब्राह्मणस्य वामाचाराधिकारितया सर्वाचारपरिभ्रष्टस्य तादृशस्यैव ब्राह्मणस्य कुलाचाराधिकारितया च तदितरस्य विप्रस्य तदुभयानधिकारित्वेन वीरभावनिषेधात् ।

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

उक्तेषु लक्षणेष्वेकं यस्मिन् विप्रे प्रदृश्यते ।
तस्यैव ब्राह्मणस्यात्र वामे स्यादधिकारिता ॥

तथा ।

चतुर्लक्षणहीनानां मार्गाः स्यु कौलिकादयः ।

तथा ।

सर्वाचारपरिभ्रष्टः कुलाचारं समाश्रयेत् ।
कुलाचारपरिभ्रष्टो रौरवं नरकं व्रजेत्-इति ॥

अत एवोक्तं (भावनिर्णये)

वृषलः पशुभावं तु न कदाऽपि समाश्रयेत् ।
ब्राह्मणो वीरभावं च मनसाऽपि न भावयेत् ॥

इति च शब्दाद्दिव्यभावमपि ।

एवं च ब्राह्मणकर्त्तृकमदिराद्युपादानविधायकं वाक्यं यत्र यत्रोपलभ्यते तत्र तत्र ब्राह्मणपदस्य पूर्वोक्तलक्षणचतुष्टयहीनवीरब्राह्मणपरत्वमवधेयम् । तान्त्रिकमते तादृशेऽपि ब्राह्मणपदप्रयोगात् । अत एवं तस्यैव ब्राह्मणस्येत्युक्तं (मेरुतन्त्रे)

ब्राह्मणैस्तु सदा पेयं क्षत्रियैस्तु रणागमे ।
वैश्यैर्धनप्रयोगे च शूद्रैर्नैव कदा चन ॥

इति-(कुलार्णव-)वचनं तु सदा पेयमित्यत्र सदा अपेयमित्यकारप्रश्लेषादपि सङ्गच्छते । एवं च कलिधर्मप्रकरणे गृह्यपरिशिष्टे हरिनाथोपाध्यायैः सौत्रामण्यां सुराग्रहणनिषेधस्योक्तत्वात् ।

कुलाचाराधिकारिब्राह्मणस्यास्माभिरुपदर्शितत्वाच्च ।

सौत्रामण्यां कुलाचारे ब्राह्मणः प्रपिवेत् सुराम् ।

इति (समयाचार-)वचनं सङ्गच्छत एव ।

यत् तु ।

त्रेतायां पूजिता देवी घृतेन सर्वजातिभिः ।
मधुभिः सर्ववर्णैस्तु पूजिता द्वापरे युगे ॥
पूजनीया कलौ देवी केवलैरासवैः-इति (यामल-)वचनम् । तत्र

सर्ववर्णशब्दो ब्राह्मणेतरपरः ।

त्र्यय्यध्वरीणो भूदेवस्त्रिपदायज्ञसूत्रधृक् ।
न कदाऽपि स्पृशेद्धालां न च देव्यै निवेदयेत् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनेन ब्राह्मणस्य सर्वदा मैरेयदाननिषेधात् ।

इत्थं च ।

यत्रावश्यं विनिर्दिष्टं मदिरादानमुत्तमम् ।
ब्राह्मणस्ताम्रपात्रे तु गव्यं मद्यं प्रकल्पयेत् ॥

इति (भैरवतन्त्रो-)क्तोऽनुकल्पविधिरपि पूर्वोक्तवीरब्राह्मणपर एव । तदितरस्य तु तत्रापि नाधिकारः ।

ब्राह्मणस्त्वनुकल्पं च कृत्वा चाण्डालतामियात् ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

(महाकालसंहितायाम्)

कदा चिदनुकल्पोक्तां दद्याद्देव्यै द्विजः सुराम् ।
उपमद्यानि ते वच्मि तानि देव्यवधारय ॥
आर्द्रकस्य गुडस्यापि समभागे भवेत् सुरा ।
ताम्रपात्रे तथा क्षौद्रं पयो गव्यं तथाऽत्र च ॥
नारिकेलोदकं कांस्ये रीतौ तालरसोऽपि च ।
रसालश्च रसो रङ्गे शङ्खे वा पानसो द्रवः ॥
मधूकपुटके द्राक्षा तत्पुष्पं तद्दलेऽपि च ।
चिञ्चारसं पद्मपत्रेऽश्वत्थे कारकपानकम् ॥
उपमद्यानि चैतानि द्वादश स्युर्वरानने ।

द्विजो दित्सति चेन्मद्यं दद्यादेतानि नो सुराम् ॥
एतान्यपि न देयानि सात्त्विकैर्धर्मभीरुभिः ।
मद्यं वाऽप्युपमद्यं वा मद्यनाम न गच्छति ॥
पातित्यं किन्तु नामीभिस्तथैव पतितो भवेत् ।

अत्र द्विजपदं ब्राह्मणेतरद्विजपरं न तु ब्राह्मणपरम् । अत एवोक्तं तत्रैव ।

नारिकेलोदकं कांस्ये ताम्रे गव्यं तथा मधु ।
राजन्यवैश्ययोर्दानं न विप्रस्य कदा चन ॥
एवं प्रदानमात्रेण हीनायुर्ब्राह्मणो भवेत्-इति ।

एवं च ।

नानोपचारसम्भारैर्भक्तितः पूजिताऽपि च ।
विना मकारयोगेन नैव तुष्यति कालिका ॥

इत्यादि ( कुलरत्नावली- ) वचनमपि शूद्रादिकर्तृकाराधनपरं बोद्धव्यम् । विप्रादिकर्तृकोपासनायां न सात्त्विकैरेवोचारैस्तस्यास्तुष्टिश्रवणात् । एतत् सर्वं ( महाकालसंहितायां ) स्पष्टम् ।

तथा हि ।

वस्तुष्वन्येषु तिष्ठत्सु देवीप्रीतिकरेषु च ।
किमेतया वै सुरया कदन्नमलरूपया ॥
भूतप्रेतपिशाचार्थं पूयमिश्रं* सुरामिषम् ।
तद्ब्राह्मणेन नो देयं देव्यै नात्तव्यमेव च ॥
न चैतया तुष्यति सा बहु वाऽपि घृणायते ।
उद्विग्ना च भवेत् तस्माद्दद्यान्नैव द्विजः सुराम् ॥
हतो वेदो हतो धर्मः परलोको हतः स्वकः ।
कुलं हतं हता जातिर्हतं ब्राह्मण्यमेव च ॥
प्राज्ञंमन्येन मूर्खेण पिबताऽज्ञानतः सुराम् ।

---

* पूयमस्त्रम् इति २-३-५ पु० पा० ।

किं कृतं साधितं किं वा किं च वा समुपार्जितम् ॥
यदयं हतवान् स्वस्य सर्वं मद्योपसेवनात् ।
एवमेवाज्ञानमग्नो मामप्याशु हनिष्यति ॥
उद्विग्नैवं महामाया भवेत् तदवलोकनात् ।
कैवर्त्तपुक्कशम्लेच्छरजकान्त्यावसायिनाम् ॥
चर्मकारनटप्रोथमेदोवेणूपजीविनाम् ।
सिद्धदुर्गन्धिशुष्कान्नं द्रव्यं मद्यं निवेद्य हि ॥
सुधावत् पिवतां पुंसां कथं विट्सु न हि स्पृहा ।
अन्ये न सन्ति वस्त्वाद्या नैवेद्यकरणाय किम् ॥
अस्पृश्यं यत् तदानीय मद्यं ददति कौलिकाः ।
ऋचो यजूंषि सामानि ह्यथर्वाङ्गिरसस्तथा ॥
वेदेभ्यः कोटिगुणिता महामन्त्रास्तथैव च ।
ये पावयन्ति देहस्थान् मद्यैराकण्ठपूरितैः ॥
मामपि प्लावयिष्यन्ति किमाश्चर्यं हि ते जनाः ।
सात्त्विकैरेव नैवेद्यैः कन्दैः पुष्पैः फलैर्दलैः ॥
अभावे भावभक्तिभ्यां सत्यं तुष्टा भवाम्यहम् ।
न मद्यमांसविस्तारैः प्रेतराक्षसभोजनैः ॥
ब्राह्मणो मानसाः पुत्रा मरीच्यत्र्यङ्गिरोमुखाः ।
एतेषामन्वयोद्भूताः पुनरन्ये सहस्रशः ॥
कश्यपश्चैव दुर्वासा दत्तात्रेयश्च चन्द्रमाः ।
बृहस्पतिर्विश्रवाश्च शक्तिर्दक्षो मृकण्डुजः ॥
नारदः कपिलो व्यासः कालाग्निर्जमदग्निजः ।
दाक्षः कविरथर्वा च शाण्डिल्यो गौतमो मनुः ॥
नाचिकेता भरद्वाजः श्वेताश्वतर एव च ।

और्वो दधीचिश्च्यवन ऋचीकश्च पराशरः ॥
शातातपो लोमशश्च जैगीषव्यश्च देवलः ।
पैठीनसिर्वीतिहव्यः संवर्त्तोऽगस्तिरासुरिः ॥
उपमन्युर्मतङ्गश्च तथा वाजस्रवाः कठः ।
उद्दालकश्चारुणेय आश्वलायन एव च ॥
उत्तङ्कश्च यवक्रीतः कात्यायन ऋतश्रवाः ।
एते चान्ये च मुनयो वेदवेदाङ्गपारगाः ॥
ईजानाः क्रतुभिः सर्वैः समाप्तवरदक्षिणैः ।
गृणन्तो निगमं सर्वं कुर्वन्तो दुश्चरं तपः ॥
ध्यायन्तो निष्कलं ब्रह्म जपन्तो मामकं मनुम् ।
सर्वदा सात्त्विकैरेवोपचारैः पूजयन्ति माम् ॥
सदा मय्यर्पितहृदः सदा मद्भावभाविताः ।
सदा मच्छरणं प्राप्ताः शान्ता दान्ता जितेन्द्रियाः ॥
वाय्वाहारा निराहारा ऊर्ध्वरेतस एव च ।
तपोबलाद्‌ध्वंसयितुं शक्रमप्यलमीदृशाः ॥
न निवेदितवन्तस्ते किमर्थं मदिरां मयि ।
विज्ञायास्यां महादोषं निन्द्यतां पापहेतुताम् ॥
गर्हाकरत्वं पातित्यकारित्वं पूतितामपि ।
परलोकविनाशित्वं तथा नरकहेतुताम् ॥
विप्रत्वजातिहन्तृत्वं म्लेच्छतुल्यत्वकारिताम् ।
अतस्तत्यजुरेवैनां संगृह्य श्रुतिपद्धतिम् ॥
यद्यस्यां दोषराहित्यं पुण्यकारित्वमेव च ।
स्यात् तदा ते कथं मह्यं ददुर्नैव सुरां द्विजाः ॥
धर्मव्यवस्थां ज्ञात्वेत्थमन्येऽपि द्विजजातयः ।

निवेदयिष्यन्ति नैव मह्यं मद्यं कथं चन ॥
बोधिता अपि शास्त्राथैरनादृत्य वचो मम ।
मोहाद्व्यवहरिष्यन्ति लोभोपहतचेतसः ॥
ये के चित् तां धर्मराजः शासिष्यति न संशयः ।
तीव्रैर्दण्डैर्महाघोरनरकादिनिपातनैः ॥
इति सत्यं पुरा मह्यं प्रोवाच जगदम्बिका ।
तत्राहमवदं देवि देवीवक्त्रोत्थिताक्षरैः ॥
अतः परं श्रुत्युदितं धर्मसद्वाक्यमेव च ।
देव्याज्ञां च समुल्लङ्घ्य ये दास्यन्ति सुरां द्विजाः ॥
तेषां शास्त्री महामाया श्रोतव्यं शृण्वतः परम् ।
द्विजेतरः संप्रदद्याद्देव्यै मद्यं सदा रहः ॥
स्वयं महाप्रसादं च युञ्जीत प्रत्यहं प्रिये ।
मांसानि दग्धमीनाँश्च सर्वदैव निवेदयेत् ॥
शुद्रादीनामथैतेषां सद्यस्तुष्यति कालिका ।
द्विजानां यावती निन्दा कथिता मद्यदानतः ॥
शूद्राणां तावती ज्ञेया प्रशस्तिर्वरवर्णिनि ।
अतः शूद्रः प्रयत्नेन देव्यै मद्यं निवेदयेत् ॥
दीर्घायुष्ट्वमरोगित्वं वाग्मित्वं राजमान्यताम् ।
पुत्रक्षेत्रकलत्रार्थपरिपूर्णत्वमेव च ॥
अन्ते स्वर्गादिगमनं शूद्रः प्राप्नोति मद्यतः ।
श्रूयते यत् फलाधिक्यं तन्त्रादौ मद्यदानतः ॥
तद्धि शूद्रपरं ज्ञेयं नैव द्विजपरं प्रिये ।
स्वयं यदन्नो भवति तदन्ना तस्य देवता ॥
पितरश्च तदन्नाः स्युरित्येवं वैदिकी स्थितिः ।

प्राणिजातिषु सर्वासु मानुष्यमतिदुर्लभम् ॥
मानुष्येष्वपि देहेषु शूद्रः श्रेष्ठोऽन्त्यजातितः ।
शूद्राच्छतगुणो वैश्यो वैश्यात् साहस्रिको नृपः ॥
नृपात् कोटिगुणो विप्रो ज्ञेयः स्वाध्यायतत्परः ।
अत एव हि सर्गादौ जगत् सृष्ट्वा चराचरम् ॥
यद्यत् सारतरं वस्तु तद्ब्रह्माऽदाद्द्विजातये ।
वेदाः षडङ्गशास्त्राणि क्षमा सत्यं तपो धृतिः ॥
शौचं दानं दया धर्मो विवेकः कलभाषिता ।
त्यागः शान्तिश्च मर्यादा स्वाध्यायोऽध्यात्मचिन्तनम् ॥
यज्ञाः सर्वहविर्गव्यं पयो मेध्यान्नमेव च ।
एतेषां विपरीतानि ददौ शूद्रेभ्य एव च ॥
त्रयाणामपि वर्णानां दासभावमदात् ततः ।
सर्वशिल्पोपजीवित्वं मन्त्रराहित्यमेव च ॥
अनाशीस्त्वमशौचत्वमपाङ्क्तयत्वमेव च ।
अस्पृश्यत्वमपाठित्वमसम्भाष्यत्वमेव च ॥
मद्यमांसोपयोगित्वं तद्विक्रेतृत्वमेव च ।
देवेभ्यस्तत्प्रदातृत्वं तदुत्पादित्वमेव च ॥
म्लेच्छादिदेशगमनं तत्संपर्कित्वमेव च ।
महासाहसकारित्वं वेदाश्रोतृत्वमेव च ॥
एतस्मात् कारणाद्देवि वेदमर्यादयाऽनया ।
ब्रवीमि मदिरादानेष्वेषामेवाधिकारिता ॥
दोषोऽणुरपि नैतेषां देवेभ्यो मद्यदानतः ।
फलातिरेकता वाऽपि श्रूयते निगमादिषु ॥
अतः प्रयत्नतः शूद्रो दद्याद्देव्यै परिस्रुतम् ।

तामेव वर्जयेद्विप्रः सदा प्राणात्ययेऽपि हि ॥
निशम्यापीदृशान् दोषानथ चेद्दातुमिच्छति ।
स च सा च विजानाति धर्मं वा पापमेव वा ॥

(अगस्त्यसंहितायामपि)

आवां तु पिशितै रक्तैः सुरयाऽपि सुरेश्वरि ।
वर्णाश्रमोचितं धर्ममविचार्य यजन्ति ये ॥
भूतप्रेतपिशाचास्ते भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः ।

(मेरुतन्त्रे)

अमृतेन सहोत्पन्नं स्थाने मद्यं सुधायते ।
विषेणापि सहोत्पन्नं तेन मद्यं विषायते ॥

तथा ।

गौडी पैष्टी च माध्वी च सुरा इत्यभिधीयते ।
सा क्षत्रवैश्ययोर्नेष्टा ब्राह्मणस्य तु का कथा-इति ॥

अथ विद्याभेदाः (कालीतन्त्रे) ।

कलीहृदयविद्या च सिद्धिविद्या महोदया ।
पुरा येन यथा जप्त्वा सिद्धिमायुर्दिवौकसः ॥
कामाक्षरं वह्निसंस्थमिन्दिरानादबिन्दुभिः ।
मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पापचेतसाम् ॥
त्रिगुणा तु विशेषेण सर्वशास्त्रप्रबोधिका ।
अनया सदृशी विद्या न हि सारस्वतप्रदा ॥
आकर्षणवशीकारमारणोच्चाटनं तथा ।
शान्तिपुष्ट्यादिकर्माणि साधयेदनयाऽचिरात्-इत्यादि ॥

तथा ।

ध्यानपूजादिकं सर्वं साधनं च पुरस्क्रिया ।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समानं सर्वमीरितम् ॥

(मेरौ)

जपपूजादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भोगमोक्षदम् ।

(श्रुतिसिद्धान्ते)

स्वबीजं पूर्वमुद्धृत्य कालिके वह्निगेहिनी ।
एषा षडक्षरी विद्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥

(मेरुतन्त्रे)

न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भोगदो मतः ।

तत्रैव ।

क्रीँ हूँ ह्रीँ त्र्यक्षरात्माऽयं मन्त्रः काल्याः प्रकीर्त्तितः ।
प्राग्वज्जपादिकं चास्य विशेषात् सन्ततिप्रदः ॥
कालीबीजं च हूँ मायां हुँ फट् पञ्चाक्षरो मनुः ।
न्यासध्यानादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भूतनाशनम् ॥
क्रीँ हूँ ह्रीँ हुँ फडत्युक्त्वा स्वाहान्तः सप्तवर्णकः ।
मायाद्वन्द्वं कूर्च्चयुग्ममैन्द्रान्तं मदनत्रयम् ॥
मायाविन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिके पदम् ।
संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत् ॥
एकविंशत्यक्षरात्मा ताराद्यः कालिकामनुः ।

(मेरुतन्त्रेऽपि)

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि एकविंशतिवर्णकम् ।
ॐ ह्रीँ ह्रीँ हूँ युगं त्रिः क्रीँ दक्षिणे कालिके वदेत् ॥
त्रिः क्रीँ हूँ हूँ शक्तियुग्ममस्य न्यासादि पूर्ववत् ।
विल्वमूले शवारूढो वटमूले तथैव च ॥
लक्षं मनुमिमं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
पञ्चमं प्रतिनिध्यायं दक्षिणाम्नायसिद्धिदम् ॥

तथा ।

दक्षिणे कालिके स्वाहा मनुरष्टाक्षरः परः ।

न्यासः प्राग्वद्ध्यानमन्त्रशवरूपशिवस्थिताम् ॥
महाकालरतासक्तां शिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम् ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगानाचरेत् तथा ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि शक्रवर्णमनूत्तमम् ॥
क्रीँ हूँ ह्रीँ दक्षिणे कालिके क्रीँ हुँ ह्रीँ दहनप्रिया ।
यजनं पूर्ववत् प्रोक्तं न्यासध्यानजपादिकम् ॥
विशेषान्नृसुरादीनामयमाकर्षणक्षमः ।
हूँ हूँ त्रिः क्रीँ द्विश्च लज्जां दक्षिणे कालिके पुनः ॥
हूँ हूँ त्रिः क्रीँ द्विश्च लज्जां स्वाहेत्याकृतिवर्णवान् ।
न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषेण वशीकृतिः ॥
जपादेतस्य भवति सर्वमन्यत् तु पूर्ववत् ।
क्रीँ क्रीँ क्रीँ हूँ समुच्चार्य हूँ लज्जाद्वयमुच्चरेत् ॥
दक्षिणे कालिके स्वाहा तिथिवर्णः प्रकीर्त्तितः ।
मन्त्रराजोऽयमाख्यातः पूर्ववत् स्यादुपासना ॥
विशेषाद्धतराज्यानामयं राज्यप्रदो भवेत् ।

अथैतद्गायत्र्याः पुरश्चरणमुक्तं (सिद्धान्तसंग्रहे)

एवं ध्यात्वा महाकलीं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।
रक्ताक्तैर्विल्वपत्रैश्च तद्दशांशेन होमयेत्—इति ॥

अथ महाकालमन्त्रः (शक्तिसङ्गमे)

श्रीशिव उवाच ।

महाकालं समारभ्य नित्यानां निर्णयं शृणु ।
महाकालो महाभीमः प्रलयानलसन्निभः ॥
कालीमायासमुद्भूतः कालीमानसिकः शिवः ।
महाकालः परः शम्भुः परातीतगुणाकरः ॥

तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि येन रक्षेज्जगत्त्रयम् ।
कूर्च्चयुग्मं महाकाल प्रसीदेति पदद्वयम् ॥
लज्जायुग्मं वह्निजायासंयुक्तः षोडशार्णकः ।
षोडशार्णा यथा मुख्याः सर्वश्रीचक्रमण्डले ॥
तथाऽयं सर्वकालीषु महाकालः प्रकीर्त्तितः ।
कालिकाऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥
देवता तु महाकालः सर्वरूपी निरञ्जनः ।
कूर्च्चबीजं तथा माया शक्तिरस्य प्रकीर्त्तिता ॥
स्वाहाकीलकमुद्दिष्टं काल्यर्थे विनियोगता ।
मायया तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने ॥

अथ ध्यानम् ।

कोटिकालानलाभासं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम् ।
श्मशानाष्टकमध्यस्थं मुण्डाष्टकविभूषितम् ॥
पञ्चप्रेतस्थितं देवं त्रिशूलं डमरुं तथा ।
खड्गं च खर्परं चैव वामदक्षिणयोगतः ॥
बिभ्रतं सुन्दरं देहं श्मशानभस्मभूषितम् ।
नानाशवैः क्रीडमानं कालिकां हृदयस्थिताम् ॥
लालयन्तं रतासक्तं घोरचुम्बनतत्परम् ।
गृध्रगोमायुसंयुक्तं फेरवीगणसंयुतम् ॥
जटापटलशोभाढ्यं सर्वशून्यालये स्थितम् ।
सर्वशून्यं मुण्डभूषं प्रसन्नवदनं शिवम् ॥

भावयेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं पूजां विधायाथ लक्षसङ्ख्यं जपेच्छिवे ।

तद्दशांशेन हवनं करवीरप्रसूनकैः ॥
स्वयम्भूवाऽऽक्तैर्बीजाक्तैः कारणाक्तैश्च वा हुनेत् ।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं कालोवत् सर्वमाचरेत् ॥

अथ महाकालीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि महाकालीमहामनुम् ।
ॐ क्ष्रौँ क्ष्रेँ क्रैँ ततः क्रैँ च पशुं गृहाण चोच्चरेत् ॥
हुँ फट् स्वाहा शक्रवर्णः सिद्धमन्त्र उदाहृतः ।
नास्य मुन्यादिकं न्यासः सिद्धमन्त्रस्य विद्यते ॥
कृष्णतोयेन संपूर्णे घटे चाहूय कालिकाम् ।
ब्राह्म्यादिभिश्च दूतीभिर्युक्तां संपूज्य भक्तितः ॥
अष्टमीं चण्डिकां त्वत्र देवीं ध्यायेद्गृहे पुनः ।

ध्यानं यथा ।

पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।
शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान् ॥
दक्षादक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं वामाचारेण साधकः ।
पिचुमर्दस्य समिधो घृताक्ता जुहुयात् ततः ॥
रज्ज्वा प्रज्वलिते वह्नौ तर्पणादि ततश्चरेत् ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मारयेदचिराद्रिपून् ॥

अथ भद्रकालीमन्त्रस्तत्रैव ।

'अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रकाल्याः परं मनुम् ।
हौँ कालीति महाकाली ह्रिः किणिः फड्वसुप्रिया ॥
चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो भद्रकाल्या उदाहृतः ।
पदैः षड्भिः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यातव्येयं सदा देवी भद्रकाली भयावहा ।
क्षुत्क्षामा कोटराक्षी च नाहं तृप्तेति वादिनि ॥
मसीमुखी मुक्तकेशी जगद्ग्रसनलालसा ।
जम्बूफलाभदशना लोलजिह्वा भयङ्करी ॥
शूलं कपालं च शृणिं ज्वलत्पाशं च बिभ्रती ।
अशेषं कालिकातन्त्रे यत् प्रोक्तं तदिहापि च ॥
जपन्यासप्रयोगाद्यं यो विशेषः स उच्यते ।
आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥
रिष्टमाला विधातव्या जपार्थं सिद्धिमिच्छता ।
इयं देवी महादेवी शत्रुनिग्रहकारिणी ॥
यथेष्टचेष्टया चिन्त्या धर्मकामार्थसिद्धिदा ।
अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भद्रकाल्याः सुगोपितम् ॥
गृध्रकर्णि विरूपाक्षि लम्बस्तनि महोदरि ।
उत्पादयोत्पादयेति द्विधोपरि पदं भवेत् ॥
द्विधा वेत्ति पदं हुँ फट् स्वाहा सप्ताग्निवर्णकः ।
पिप्पलादो मुनिः प्रोक्तो निवृच्छन्द उदाहृतम् ॥
भद्रकाली देवता स्याद्द्विरुत्पादय हृत् स्मृतम् ।
उपरिभ्यां शिरः प्रोक्तं वेत्तिभ्यां तु शिखा स्मृता ॥
हुँ फड्भ्यां कवचं प्रोक्तं स्वाहयाऽस्त्रमुदीरितम् ।

अथ ध्यानम् ।

अतिरौद्रा महादंष्ट्रा भृशं दीर्घा कृशोदरी ।
सुवृत्तनयना शूरा दीर्घघोणा मदातुरा ॥
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषा नीलजीमूतसन्निभा ।

भृगुद्यघटसंदीप्ता महारदनभीषणा ॥
दंष्ट्रोष्ठकोपताम्राक्षी रक्तदीर्घशिरोरुहा ।
त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डा नरकीटपलाशिनी ॥
अतिरक्ताम्बरा देवी रक्तमांसासवप्रिया ।
शिरोमाला भूषिताङ्गी पिबन्ती शोणितासवम् ॥
नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाचगणसेविता ।
पिशाचस्कन्धमारुह्य भ्रमन्ती वसुधातलम् ॥
शङ्करस्य मुखोत्पन्ना योगिनी योगवल्लभा ।
इत्थम्भूता भद्रकाली मातृभिः परिवारिता ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

ध्यात्वा सम्यक् समाराध्य ततो मन्त्रं जपेद्बुधः ।
अयुतं मन्त्रसिद्ध्यर्थं मातृकान्याससत्परः ॥
घृतहोमस्तथा कार्यस्तर्पणादि समाचरेत् ।
धूमावत्यां च यत् प्रोक्तमनयाऽपि तदाचरेत् ॥

अथ सिद्धिकालीमन्त्रः (कालीतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये महादेवि सिद्धविद्यां महोदयाम् ।
ईश्वरेण पुरा प्रोक्तां देवीं हृदीशसंज्ञिताम् ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य हृल्लेखाबीजमुद्धरेत् ।
रतिबीज समुद्धृत्य पपञ्चमभगान्वितम् ॥
ठद्वयेन समायुक्तं विद्या राज्ञी प्रकीर्त्तिता ।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥
सिद्धिकाली ब्रह्मरूपा देवता भुवनेश्वरी ।
रतिबीजं बीजमस्या हृल्लेखा शक्तिरुच्यते ॥
हृल्लेखया षड्दीर्घेण प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

अङ्गषट्कं ततो न्यस्य ध्यात्वा देवीं शिवो भवेत् ॥

ध्यानं यथा ।

खड्गोद्भिन्नेन्दुविम्बस्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गो त्रिनेत्रा
सव्ये पाणौ कपालाद्गलदमृतमयं मुक्तकेशी पिवन्ती ।
दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा
पायान्नीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्विंशतिसाहस्रं सहस्रैरेव संयुतैः ।
होमयेत् तद्दशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवित् ॥

अथ श्मशानकालीमन्त्रः (स्वतन्त्रतन्त्रे)

श्मशानकालिकामन्त्रं शृणुष्वावहिता शिवे ।
वाणीं मायां ततो लक्ष्मीं कामबीजं ततः परम् ॥
कालिके संपुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत् ।
एकादशार्णा देवेशि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता कालिका परा ।
श्मशानाद्या च वाङ्माया बीजं शक्तिर्महेश्वरि ॥
कीलकं कामबीजं तम्— … … … इति ।
चतुश्चतुस्त्रिचतुस्तु विद्यामन्त्रैः षडङ्गकम् ॥
विन्यस्य ध्यानं कुर्वीत कालिकायां समाहितः ।
अञ्जनाद्रिनिभां देवीं श्मशानालयवासिनीम् ॥
त्रिनेत्रां मुक्तकेशीं च शुष्कमांसातिभीषणाम् ।
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णं कपालकम् ॥
सद्यः कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम् ।
स्मितवक्त्रां सदा वाममांसतर्पणतत्पराम् ॥
नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदा शवैः ।

एवं ध्यायेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशेन होमयेत्—इति ।

अथ सिद्धिलक्ष्मीमन्त्रः (कालानलतन्त्रे)

ॐ ह्रीँ हूँ हाँ फ्रेँ क्षोँ क्रोँ नमः ।

श्रुतिश्चटी च दोग्ध्री च शोषिणी शिरया सह ।
दोला तदनु मालूरः सामरश्च निरत्ययः ॥
शेषे दण्डः परिज्ञेय इयमुक्ता नवाक्षरी ।
नैतस्य सदृशो मन्त्रस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथोद्धरिष्ये देवेशीं षोडशार्णां मनूत्तमाम् ।
यामेकवारमुच्चार्य मुच्यते जन्मसंकटात् ॥

ह्रीँ हूँ फ्रेँ छ्रीँ ह्रौँः ह्रीँ क्रोँ फ्रेँ स्त्रीँ श्रीँ होँ जूँ ब्लौँ ब्रीँ स्वाहा ।

चटी दोग्ध्री शिरोसिद्धिभूमर्द्धिः प्रोथ एव च ।
फली पुनः शिरो रेतः प्रातरान्ते ततः परम् ॥
पुरश्चरणहोमाः स्युर्मलिनाह्वदपर्यंटाः ।
मन्त्रोऽयमपि सर्वेषां मनूनामुत्तमः स्मृतः ॥

अनयोर्ऋष्यादिन्यास उक्तस्तत्रैव ।

श्रीसिद्धिलक्ष्मीमन्त्रस्य ऋषिर्नारद ईरितः ।
गायत्री छन्द आख्यातं सिद्धिलक्ष्मीश्च देवता ॥
चटीबीजं तथाऽऽख्यातं समीहा शक्तिरिष्यते ।
प्रबन्धः कीलकं विद्यात् पुरुषार्थचतुष्टये ॥
विनियोगोऽस्य मन्त्रस्य कथितस्त्वयि नारद ।

अथ कराङ्गन्यासौ ।

षड्दीर्घभाजा बीजेन कराङ्गन्यासमीरितम् ।

इदानीं ते सुगमेन कथयामि द्विजर्षभ ॥
श्रुतिपूर्वं बीजमुक्त्वा अङ्गुष्ठाभ्यां पदं ततः ।
शेषे दण्डः समाख्यातः पुनर्बीजद्वयं वदेत् ॥
तर्जनीभ्यां यदा तत्र दण्ड इत्यभिधीयते ।
पुनर्बीजद्वयं यत्र भ्यामन्ता मध्यमा ततः ॥
दण्डः शेषे च विज्ञेयः पुनस्तद्बीजमेव च ।
अनामिका भ्यामन्ता च ततो दण्डः प्रकीर्त्तितः ॥
बीजद्वयात् कनिष्ठाभ्यां पदाद्दण्डबीजं स्मृतम् ।
बीजद्वयं करतलपृष्ठाभ्यां दण्ड इत्यपि ॥
इति करन्यासं कृत्वा अङ्गन्यासं चरेत् सुधीः ।
क्रमेणानेन वै ब्रह्मन् संभवन्यासमाचरेत् ॥
श्रुतिचक्र्यौ समाभाष्य हृदयाय पदं ततः ।
दण्डस्तदनु विप्रर्षे बीजद्वयं तथा परम् ॥
शिरसे पदतश्चैव दोग्ध्रीबीजं स्मृतं तदा ।
तद्बीजद्वयमुच्चार्य्य शिखायै पदमेव च ॥
इन्द्रबीजं समाख्यातं पुनर्बीजद्वयं वदेत् ।
कवचाय पदाच्चैव दोग्ध्रीबीजं हि नारद ॥
बीजे तथा समुच्चार्य्य नेत्रत्रयाय वौषडिति ।
षडङ्गन्यासमित्युक्तमर्च्चयां कायशोधनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तन्निबोध अजात्मज ।
श्वेतां श्वेतशवारूढां नृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।
व्याघ्रचर्म्मावृतकटीं शुष्कावयवभूषिताम् ॥

आबद्धयोगपट्टां च नरास्थिकृतभूषणाम् ।
हस्तैः षोडशभिर्दीप्तां विस्रस्तघनकुन्तलाम् ॥
खड्गं बाणं तथा शूलं चक्रं शक्तिं गदामपि ।
जपमालां कर्त्तृकां च बिभ्रतीं दक्षिणैर्भुजैः ॥
फलकं कार्मुकं नागपाशं परशुमेव च ।
डमरुं फेरुपोतं च नरमुण्डकपालकम् ॥
उद्वहन्तीं करैर्वामैर्दीप्तसर्वाङ्गभूषणाम् ।

एतद्ध्यानं नवाक्षर्याः । षोडसार्णविद्यायास्तु ध्यानान्तरमुक्तं तत्रैव ।

महातेजोमयी लक्ष्मी रश्मिकोट्ययुतप्रभा ।
पञ्चवक्त्रा दशभुजा त्रिपञ्चनयनैर्युता ॥
श्वेतवर्णनिभा देवी महाप्रेतोपरिस्थिता ।
मातृकाष्टकमध्यस्था सिद्धियोगनिषेविता ॥
दारितास्या लेलिहाना ज्वालालुप्तजगत्त्रयी ।
उच्छ्वासोच्छ्वासवेगेन चालयन् कुलपर्वतान् ॥
क्वचिद्देशे क्वचित् कूटे क्वचित् संहरते क्षणात् ।
क्वचित् सृजेत् पालयेच्च स्वतन्त्राद्वा प्रवर्त्तते ॥
गोनासाभरणैर्युक्ता उरगेन्द्रविभूषिता ।
पाशाङ्कुशधरा देवी वराभयकराम्बुजा ॥
सव्यहस्ते धृतं खड्गं त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।
वामे खट्वाङ्गमत्युग्रं दक्षिणे शूलमुत्तमम् ॥
वामे तु कलशं दिव्यं महारत्नप्रपूरितम् ।
एषा प्रत्यङ्गिरा देवी उन्मत्ता व्योमदेहजा ॥
एकात्मा नैकभेदेन विश्वं व्याप्य व्यवस्थिता ।
प्रत्यङ्गिरा महादेवी सिद्धिलक्ष्मीर्जयप्रदा ॥

(पद्धतौ)

खट्वाङ्गाङ्कुशपाशशूलवरकृद्भीत्राणपात्रं शिरः
कुम्भासिज्वलितोद्भटैर्भुजवरैराभासमानां शिवाम्।
रुद्रस्कन्धगतां शरच्छशिनिभां पञ्चाननां सुन्दरीं
पञ्चत्र्यक्षविराजितां भगवतीं श्रीसिद्धिलक्ष्मीं भजे॥

उक्तयोः श्रीसिद्धिलक्ष्मीमन्त्रयोः पुरश्चरणं तु वक्ष्यमाण-(महाकालसंहितो-) क्तगुह्यापुरश्चरणवज्ज्ञेयम्।

तदुक्तं (कालानलतन्त्रे)

यथा कामकला काली गुह्यकाली यथा द्विज।
यथा छिन्ना यथा तारा वज्रकापालिनी यथा॥
सिद्धिलक्ष्मीस्तथा देवी विशेषो नास्ति कश्चन।
एकैव पूजा विज्ञेया प्रयोगाश्च तथा द्विज॥
अत्रानुक्तं हि यत् किञ्चित् संहितायां च तद्विदुः।
ग्रन्थगौरवभीत्या च नोक्तमन्यत् त्वयि द्विज॥
संक्षेपेण सिद्धिलक्ष्म्यास्त्वयि सर्वं प्रकीर्त्तितम्।
विस्तृतं च महाकालसंहितायां द्विजोत्तम॥
जपः पुरश्चरणं च आचारश्चापि नारद।
महाकालसंहितायां कामकलाभ्यासे प्रकीर्त्तितः॥
तेनैव वर्त्मना विप्र सिद्धिलक्ष्म्याऽखिलं* विदुः।
पौनरुक्त्यभयेनात्र निगदामि न नारद॥

अथ गुह्यकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

गुह्यकाल्यास्तु मन्त्राणामष्टादश भिदाः प्रिये।
सर्वागमेषु गोप्यास्ते न प्रकाश्याः कदा चन॥
मन्त्राणां भेदतो ध्यानभेदाः स्युर्विविधास्तथा।

---

* सिद्धिलक्ष्म्याः- अखिलमिति सन्धिस्तान्त्रिकः।

यन्त्रभेदा अपि तथा वाहनानां भिदास्तथा ॥
यो मन्त्रो येन चाभ्यस्तस्तत्राम्नायः प्रकीर्त्तितः ।
ब्रह्मणा च वशिष्ठेन रामेण च तथा प्रिये ॥
हिरण्याक्षानुजेनापि कुवेरेण यमेन च ।
भरतेन दशास्येन वलिना वासवेन च ॥
विष्णुनाऽन्यैश्च देवैश्च दैत्येन्द्रैर्विविधैरपि ।
उपासिता सिद्धिहेतोर्लब्ध्वा सिद्धिश्च भूयसी ॥
शतवक्त्राऽशीतिवक्त्रा षष्टिवक्त्रा तथैव च ।
षट्त्रिंशदानना विंशदानना परिकीर्त्तिता ॥
तथा विंशतिवक्त्रा च दशवक्त्रा च कालिका ।
पञ्चवक्त्रा त्रिवक्त्रा च द्विवक्त्रा चैकवक्त्रिका ॥
या गुह्यकाली तन्मध्ये भरतोपासिता प्रिये ।
दशवक्त्रा षोडशार्णा चतुष्पञ्चाशदोर्युता ॥
सर्वासां गुह्यकालीनां सा वै मुख्यतमा स्मृता ।
तामेवादौ व्याहरामि व्याहरिष्ये ततः पराः ॥
षोडशाक्षरको मन्त्रः कीलितश्चाप्यकीलितः ।
तत्रादौ कीलितं वच्मि ततो वक्ष्याम्यकीलितम् ॥
कीलकाकीलकध्यानमेकमेव हि पार्वति ।

मन्त्रोद्धारमाह ।

आदौ वेदादिमुद्धृत्य ततः पस्य द्वितीयकम् ।
एकारयुक्तं तदधो रेफं विन्दुं च योजयेत् ॥
सिद्धिशब्दं ततः प्रोच्य करालिं च विनिर्दिशेत् ।
लज्जां क्रोधमनुस्मृत्य कफोणिं वाममुद्धरेत् ॥
वामदृग्विन्द्वधोवह्नियुक्तं कुर्यात् ततश्च तम् ।

वधूबीजं पुनर्मन्त्रद्वितीयं बीजमुद्धरेत् ॥
हृन्मन्त्रो वह्निजाया च मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः ।

प्रकारान्तरमाह ।

अथ वा कामिनीबीजात् पूर्वं क्रोधमनुस्मरेत् ।
इयं हि भरतोपास्या कीलिताऽपि च शापतः ॥

°भरतोपासिता षोडशाक्षरी द्विविधा । तत्राद्या कीलिता द्वितीया त्वकीलितेत्यर्थः ।

सप्तदशाक्षरीमाह ।

रामोपास्यामतो वक्ष्येऽक्षरसप्तदशान्विताम् ।
साऽऽपि हारीतमुनिना कीलिता तपसो बलात् ॥
आदौ तस्यैव मन्त्रस्य चतुरोऽर्णान् समुद्धरेत् ।
द्वितीयबीजोपरि च हसखं विनियोजयेत् ॥
एवं तु पञ्चमं बीजं षष्ठं खेन च वर्जितम् ।
सप्तमं हसहीनं च करालि तदनन्तरम् ॥
त्रयोदशैकादशके स्थाने सप्तममक्षरम् ।
पञ्चमं द्वादशस्थाने द्वितीयं च चतुर्दशे ॥
आद्यं पञ्चदशे कुर्याद्वह्निजयान्तगो मनुः ।
हारीतोपासिता ह्येषा च्यवनोपासितां शृणु ॥
षष्ठपञ्चमयोरस्य व्यत्ययः समुदीरितः ।
एतावतैव भवति च्यावनी सुमहाफला ॥

अत्रापि रामोपासिता सप्तदशाक्षरी द्विविधा हारीतोपासिता च्यवनोपासिता चेति । तयोर्मध्ये हारीतोपासितैव कीलिता च्यवनोपासिता तु न कीलितेति बोध्यम् ।

ऋष्यादिकमाह ।

षोडशाक्षरयोर्मन्त्रभेदयोरधुना ब्रुवे ।
ऋष्यादिकं ततः सप्तदश्याश्च कथयामि ते ॥
अथर्वा ऋषिरुद्दिष्टो जगती छन्द उच्यते ।

देवता गुह्यकाली च द्वितीयार्णं तु कीलकम् ॥
शक्तिस्तु दशमं बीजं द्वितीये नवमं भवेत् ।
पुरुषार्थचतुष्कस्य सिद्ध्यै कामनास्थितिः ॥
सप्तदश्यास्तु मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिर्मतः ।
छन्दश्च सप्रतिष्ठाख्यं देवता गुह्यकालिका ॥
पञ्चमार्णं कीलकं स्यात् सप्तमं शक्तिरुच्यते ।
तदेव विपरीतं हि च्यावनीसमुदीरितम् ॥
प्रयोगः सर्वसिद्ध्यर्थं जपे प्रोच्चारितो भवेत् ।
अन्येषां मन्त्रभेदानां यदुद्धारं वदामि ते ॥
तदा ऋष्यादिकं तेषां कथयिष्यामि पार्वति ।

अथ षडङ्गन्यासस्तत्रैव ।

द्वे पञ्च त्रीणि च द्वे च द्वे पुनर्द्वे पुनस्तथा ।
वर्णाक्षराणां भारत्यास्तत्तत्स्थाने प्रविन्यसेत् ॥
तावन्तोऽर्णाः सप्रणवास्तत्र तत्र स्थले न्यसेत् ।
यादृशो च्यावनी मन्त्रवर्णावल्यनुतिष्ठति ॥
तारयोर्मध्यवर्त्तीनि देवीवर्णानि तानि हि ।
न्यस्येत् स्थानेषु तेष्वेव हारीतोपसिते मनौ ।

ध्यानमाह ।

भरतोपासिता या च रामोपास्या च या स्मृता ।
ध्यानं तयोरेकमेव कथ्यमानं मया शृणु ॥
ध्यायेद्देवीप्रभावोत्थप्रोच्छलद्रक्तवारिधिम् ।
उत्तुङ्गोत्तुङ्गकल्लोलप्रपूरितदिगन्तरम् ॥
तत्र द्वीपं रक्तमांसपूरितं रक्तवालुकम् ।
नवकोटिकचामुण्डाकोटिभैरववेष्टितम् ॥

तन्मध्ये मण्डलं ध्यायेद्योजनायुतविस्तृतम्।
भैरवीकोटिघटितं प्राकारं तत्र चिन्तयेत्॥
एकं श्मशानं तन्मध्ये शतयोजनविस्तृतम्।
चिन्तयेत् प्रोच्छलद्वह्निज्वालाव्याप्तर्क्षमण्डलम्॥
योगिनीकोटिविहितकरतालिकचेष्टितम्।
नाराश्रनद्धमुण्डस्रक्कृततोरणमालिकम्॥
तदन्तःस्थापिनीं कालीं ध्यायेन्निश्चलमानसः।
रत्नसिंहासनं दिव्यं हीरमुक्तादिनिर्मितम्॥
धारयन्तं चतुष्कोणे युगं वेदं विचिन्तयेत्।
सत्ययुगं च ऋग्वेदं शुक्लवर्णं च पूर्वगम्॥
त्रेतायुगं यजुर्वेदं पीतवर्णं च दक्षगम्।
द्वापरं सामवेदं च रक्तं पश्चिमदिग्गतम्॥
अथर्ववेदं च कलिं श्याममुत्तरदिग्गतम्।
उपवेदस्य शुभ्रस्य मूर्ध्नि सिंहासनं स्थितम्॥
तस्य सिंहासनस्योर्ध्वमन्यत् सिंहासनं महत्।
स्वस्वास्त्रवाहनयुतैर्दिगष्टपतिभिर्वृतम्॥
देव्याः सिंहासनधराँस्ताँश्च ध्यायेदतन्द्रितः।
स्वां स्वां दिशमवष्टभ्य स्थितान् परमशोभितान्॥
इन्द्रं पीतं सवज्रं च स्थितमैरावतोपरि।
पावकं रक्तवर्णं च छागस्थं शक्तिपाणिकम्॥
यमं कृष्णं कासरस्थं दण्डहस्तं भयानकम्।
निर्ऋतिं धूम्रवर्णं च खड्गहस्तं तुरङ्गगम्॥
वरुणं पाशहस्तं च शुभ्रं मकरवाहनम्।
श्यामं वायुं ध्वजधरं हरिणोपरि संस्थितम्॥

गदाधरं कुबेरं च कुङ्कुमाभं नरे स्थितम् ।
ईशानं शुभ्रवर्णं च शूलहस्तं वृषे स्थितम् ॥
सिंहासनं तृतीयं च पञ्चप्रेतैर्धृतं प्रिये ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥
एते पञ्चमहाप्रेताः स्थिताः सिंहासनादधः ।
पीतः श्यामस्तथा रक्तो धूम्रः श्वेतः क्रमादिमे ॥
दण्डं चक्रं च शक्तिं च शूलं खट्वाङ्गमेव च ।
धारयन्तो मुखे न्यस्ततर्जनीकास्त्रिलोचनाः ॥
केशरिद्विपकोलाश्च फेत्काररवभीषणाः ॥
ऊर्ध्वं पीठं ततो ध्यायेद्भैरवाख्यं भयार्तिम् ॥
खर्वं स्थूलतरं घोरं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ।
पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं च कीकशाभरणान्वितम् ॥
खट्वाङ्गं कर्त्तृकां दक्षे कपालं डमरुं तथा ।
धारयन्तं मुण्डमालायुतं दंष्ट्राग्रभीषणम् ॥
तदूर्ध्वं षोडशदलं पद्मं यज्ञोपकल्पितम् ।
ज्योतिष्टोमोऽग्निष्टोमो वाजपेयश्च षोडशी ॥
चयनं पुण्डरीकं च राजसूयोऽश्वमेधकः ।
बार्हस्पत्यं विश्वजिच्च गोमेधो नरमेधकः ॥
सौत्रामण्यर्धसावित्री सूर्यकान्तोऽचलम्भिदः ।
एतादृशैः षोडशभिर्दलैः पद्मं प्रकल्पितम् ॥
तस्योपरि ततो ध्यायेच्छिवासनमनुत्तमम् ।
विन्दुनादयुतं नीलं शशाङ्ककृतलाञ्छनम् ॥
महार्घरत्नाभरणं त्रिनेत्रं भीमदर्शनम् ।
वज्रदंष्ट्रानखस्पर्शं पद्मपृष्ठे शिवोत्तमम् ॥

पिङ्गोग्रैकजटाभारं द्विभुजं नागहारिणम् ।
वसानं चर्म वैयाघ्रं शूलखट्वाङ्गधारिणम् ॥
अष्टपत्राम्बुजं तस्योपरिष्टान्नवमासनम् ।
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च चतुर्दिशि ॥
यशो विवेकः कामश्च मोक्षश्चेति विदिग्दिशि ।
एवमष्टदलाम्भोजोपविष्टां गुह्यकालिकाम् ॥
ध्यायेन्नीलोत्पलश्यामामिन्द्रनीलसमद्युतिम् ।
घनाघनतनुद्योतां स्निग्धदूर्वादलद्युतिम् ॥
ज्ञानरश्मिच्छटाटोपज्योतिर्मण्डलमध्यगाम् ।
दशवक्त्रां गुह्यकालीं सप्तविंशतिलोचनाम् ॥
द्विद्विनेत्रयुतां वक्त्रे वामदक्षिणसंमुखे ।
सप्तस्वन्येषु वक्त्रेषु त्रित्रिलोचनसंयुताम् ॥
ऊर्ध्ववक्त्रं द्वीपकाख्यं चण्डयोगेश्वरीति हि ।
तस्याधः केशरिमुखं श्वेतवर्णं विभीषणम् ॥
तस्याधः फेरुवक्त्रं च कृष्णं त्रैलोक्यडामरम् ।
वानरास्यं ततो वामे रक्तवर्णं महोज्ज्वलम् ॥
नरास्यं तदधो ज्ञेयं किर्मीराभं महोत्कटम् ।
ऋक्षवक्त्रं भवेद्दक्षे धूम्रवर्णं भयानकम् ॥
गारुडास्यं ततो वामे पिङ्गवर्णं सुचञ्चुकम् ।
दक्षिणे मकरास्यं च हरिताभं प्रकीर्त्तितम् ॥
गजास्यं वामतः प्रोक्तं गौरवक्त्रं स्रवन्मदम् ।
हयास्यं दक्षिणे काल्याः श्यामवर्णं विचिन्तियेत् ॥
महादंष्ट्राकरालानि दारुणस्वनवन्ति च ।
अट्टाट्टहासयुक्तानि स्रवद्रक्तानि सर्वदा ॥

लेलिहानविनिष्क्रान्तललज्जिह्वान्वितानि च ।
अहर्निशं कम्पमानान्यास्यानि दधतीं शिवाम् ॥
भीमनिर्ह्रादिनीं भीमां भ्रूभङ्गकुटिलाननाम् ।
पिङ्गलोर्ध्वजटाजूटां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥
नानारत्नविनिर्माणसमुण्डस्वर्णभूषणाम् ।
स्रवद्रक्तनृमुण्डास्रकृतनक्षत्रमालिकाम् ॥
आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां मुण्डमालया ।
श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
शवदीर्घाङ्गुलीपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
कठोरपिङ्गलोत्तुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
महामारकतग्राववेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।
विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
अन्त्रनद्धार्भकशिरोवलत्किङ्किणिमण्डिताम् ।
चतुष्पञ्चाशता दोष्णां भूषितां जगदम्बिकाम् ॥
रत्नमालां कपालं च चर्म पाशं तथैव च ।
शक्तिं खट्वाङ्गमुण्डं च भुशुण्डीं धनुरेव च ॥
चक्रं घण्टां ततो बालप्रेतं शैलमतः परम् ।
नरकं कालनकुलौ सर्पमुन्मादवंशिकाम् ॥
मुद्गरं वह्निकुण्डं च डमरुं डिण्डिमं तथा ।
भिन्दिपालं च मुशलं पाशं पट्टिशमेव च ॥
शतघ्नीं च शिवापोतं वामहस्तेषु बिभ्रतीम् ।
अथ दक्षभुजे रत्नमालां कर्त्रीमसिं तथा ॥
तर्जनीमङ्कुशं दण्डं रत्नकुम्भं त्रिशूलकम् ।
पञ्चपाशुपतान् बाणान् शोषकोन्मादमूर्छकान् ॥

संहारकान् मृत्युकरालेवं नामप्रधारिणः ।
कुन्तं च पारिजातं च छुरिकां तोमरं तथा ॥
पुष्पमालां डिण्डिभं च गृध्रं चैव कमण्डलुम् ।
मांसखण्डं श्रुवं बीजपूरं श्रुचं तथैव च ॥
परशुं च गदां यष्टीं मुष्टिं कुणपलालनम् ।
धारयन्तीं महारौद्रीं जगत्संहारकारिणीम् ॥
जवापुष्पाभनागेन्द्रकृतनूपरयुग्मकाम् ।
पाटलोरगनिर्माणलसदङ्गदशोभिताम् ॥
धूसराहिकृतस्फीतकटिसूत्रावलम्बिनीम् ।
सुपाण्डुरभुजङ्गेन्द्रकृतताटङ्कशोभिताम् ॥
श्वेतदर्वीकरानद्धजटामुकुटमण्डिताम् ।
वैयाघ्रचर्मवसनां द्वीपिचर्मोत्तरीयकाम् ॥
किङ्किणीजालशोभाढ्यां वीरघण्टानिवादिनीम् ।
नूपुरारावललितां घर्घराशब्दभीषणाम् ॥
कटकाङ्गदकेयूरनरास्थिकृतशोभनाम् ।
रक्तपद्ममयीं मालां पादपद्मावलम्बिनीम् ॥
काञ्चीकट्टारकप्रेङ्खत्कटिमध्यविराजिताम् ।
ब्रह्मसूत्रोज्ज्वलत्कण्ठयोगपट्टोत्तरीयकाम् ॥
सौम्योग्रभूषणैर्युक्तां नागाष्टकविराजिताम् ।
रत्नकुण्डलकर्णश्रीपञ्चकालानलस्थिताम् ॥
पद्मोपरिस्थितां देवीं नृत्यमानां सदोदिताम् ।
पद्मासनसुखासीनां सर्वदेवाधिदेवताम् ॥
मुक्तहुँकारजिह्वाग्रं चालयन्तीं विचिन्तयेत् ।
त्रिकोटिशक्तिचामुण्डानवकोटिभिरन्विताम् ॥

महायोगिनीकोटीनामष्टादशभिरूर्जिताम् ।
चरन्तीं च हसन्तीं च डाकिनीषष्टिकोटिभिः ॥
भैरव्यशीतिकोटीभिः परिवारैश्च वेष्टिताम् ।
कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ॥
महाप्रलयकोट्यर्कविद्युदर्बुदसन्निभाम् ।
दुर्निरीक्षां महाभीमां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
शत्रुपक्षक्षयकरीं दैत्यदानवसूदिनीम् ।
निर्विकारां निराभासां कूटस्थां चिद्विलासिनीम् ॥
अद्वैतां परमानन्दां नित्यां शुद्धां निरञ्जनाम् ।
सृष्टिः स्थितिश्च संहारोऽनाख्या भासा पदाभिदाम् ॥
वेदान्तवेद्यां कैवल्यरूपां निर्वाणकारिणीम् ।
गुणातीतामात्मरूपप्रबोधातीतगोचराम् ॥
एवं ध्येया महाकाली प्रोद्भिन्ननवयौवना ।
पञ्चवक्त्रस्य मध्यस्थां गुह्यकाली परेश्वरी ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

पर्वते वा नदीकूले शून्यागारे शिवालये ।
पीठे चतुष्पथे कुर्यात् पुरश्चरणमुत्तमम् ॥
नियमास्तत्र भूयांसः प्रकर्त्तव्याः प्रयत्नतः ।
अवैधकरणात् सिद्धिहानिः स्यान्नात्र संशयः ॥
त्रिकालमाचरेत् स्नानं हविष्यं भक्षयेन्निशि ।
स्वमन्त्रं चाक्षसूत्रं च गुरोरपि न दर्शयेत् ॥
त्यजेद्दुष्टप्रवादं च परीवादं च वर्जयेत् ।
तथा दुर्जनसंसर्गान् स्त्रीशूद्रालापनं तथा ॥
वस्त्रं कुशासनं व्याघ्रचर्म चापि नृमुण्डकम् ।

आसनं च महादेवि प्रशस्तश्चोत्तरामुखः ॥
शुद्धस्फटिकरुद्राक्षनृमुण्डास्थिविनिर्मिताम् ।
जपमालां शुभां विद्धि प्रशस्तामुत्तरोत्तराम् ॥
अनेनोक्तविधानेन लक्षसङ्ख्यं जपेन्मनुम् ।
होमं दशांशतः कुर्यात् तर्पणं चाभिषेचनम् ॥
ततः सिद्धमनुर्मंत्री प्रयोगानाचरेत् प्रिये ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

षोडशार्णा महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्महद्भिर्भक्तिनोदितैः ॥
येन लब्धा कुलेशानि सद्गुरोर्मुखपङ्कजात् ।
स धन्यः सर्वलोकेषु पूज्यस्त्रिभुवनौकसाम् ॥
नातः परतरा विद्या त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
अतः सर्वप्रयत्नेन विद्येयं षोडशाक्षरी ॥
जप्तव्या साधकश्रेष्ठैर्ध्यातव्या गुह्यकालिका ।
येनेयं साधिता विद्या स एव स्यात् सदाशिवः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

दशवक्त्रा तु या प्रोक्ता गुह्यकाली मया तव ।
प्रकृतिः सा परिज्ञेया कालीनां जगदम्बिका ॥
अन्या विकृतयः प्रोक्ताः कार्यकारणभेदतः ।

तथा ।

सैव ज्ञेया वरारोहे निर्गुणब्रह्मरूपिणी ।
जगत् सर्वं वशे तस्या वश्या कस्यापि सा न च ॥
विश्वं सर्वं सृजति सा कोऽपि सृजति तां न हि ।
सा पालयति संसारं तां पालयति कोऽपि न ॥

तां न संहरते कोऽपि सा सर्वं संहरत्यदः ।
तदाज्ञयाऽनिलो वाति सूर्यस्तपति तद्भयात् ॥
तद्भीत्याऽग्निः पचत्यन्नं मृत्युश्चरति तद्भयात् ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सेन्द्राश्चैव दिवौकसः ।
ऋषयश्च मरीच्याद्यास्तामेव समुपासते ॥

अथ कामकलाकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

श्रीदेव्युवाच ।

परात् पर परेशान शशाङ्ककृतशेखर ।
योगादियोगिन् सर्वज्ञ सर्वभूतदयापर ॥
त्वत्तः श्रुता मया मन्त्राः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।
विधिवत् पूजनं चापि न्यासावरणकक्रमैः ॥
तारा च च्छिन्नमस्ता च तथा त्रिपुरसुन्दरी ।
बाला च बगला चापि त्रिपुरा भैरवी तथा ॥
काली दक्षिणकाली च कुब्जिका चिवरेश्वरी ।
अघोरा राजमातङ्गी सिद्धिलक्ष्मीस्त्वरुन्धती ॥
अश्वारूढा भोगवती नित्यक्लिन्ना च कुक्कुटी ।
कौमारी चापि वाराही चामुण्डा चण्डिकाऽपि च ॥
भुवनेशी तथोच्छिष्टचाण्डाली चण्डघण्टिका ।
कालसंकर्षिणी चापि गुह्यकाली तथाऽपरा ॥
एताश्चान्याश्च वै देव्यः समन्त्राः कथितास्त्वया ।
किन्तु कामकलाकालीं नोक्तवानसि मे प्रभो ॥
तत् किं मय्यपि गोप्यं ते प्रायशः परमेश्वर ।
न हीदृशं त्रिलोकेषु तत्र किं चन विद्यते ॥

यदकथ्यं मयि भवेदपि प्राणाधिकाधिकम् ।
तत् किं गोपयसि प्राज्ञ मयीदं दैवतं महत् ॥
यद्यस्मि ते दयापात्रं मान्याऽस्मि स्नेहभाजनम् ।
अनुग्राह्याऽस्मि कान्ताऽस्मि तदेमां वद साम्प्रतम् ॥
देवीं कामकलाकालीं समन्त्रध्यानपूर्विकाम् ।

श्रीमहाकाल उवाच ।

धन्याऽस्यनुगृहीताऽसि तथा देव्यैव सर्वथा ।
यत् ते बुद्धिः समुत्पन्ना तां देवीं प्रति भामिनि ॥
विधाय शपथं देवि कथयामि तवाग्रतः ।
न हीदृशं भुक्तिमुक्तिसाधनं भुवि विद्यते ॥
यथार्थमात्थ देवि त्वं गोप्यत्वं चापि सर्वथा ।
किन्तु भक्तिविशेषात् ते कथयामि न संशयः ॥
राज्यं दद्याद्धनं दद्यात् स्त्रियं दद्याच्छिरस्तथा ।
न तु कामकलाकालीं दद्यात् कस्यापि न क्वचित् ॥
इन्द्रेणोपासिता पूर्वं देवराज्यमभीप्सिता ।
वरुणेन कुवेरेण ब्रह्मणा च मया तथा ॥
रामेण रावणेनापि यमेनापि विवस्वता ।
चन्द्रेण विष्णुना चापि तथाऽन्यैश्च महर्षिभिः ॥
सहेलं वा सलीलं वा यस्याः स्मरणमात्रतः ।
विद्यालक्ष्मीः राज्यलक्ष्मीः कीर्त्तिलक्ष्मीर्वशे स्थिता ॥
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ।
राज्यार्थी लभते राज्यं कान्तार्थी कामिनीं शुभाम् ॥
यशोऽर्थी कीर्त्तिमाप्नोति मुक्त्यर्थी मुक्तिमाप्नुयात् ।
अणिमाद्यष्टसिद्ध्यर्थी सिद्ध्यष्टकमवाप्नुयात् ॥

तथा ।

द्विसप्ततितमं यावत् पुरुषाः पूर्वजाः स्थिताः ।
तेषां भाग्योदयैः पूर्णैर्विद्येयं यदि लभ्यते ॥
तदा सर्वस्वदानेन गृह्णीयादविचारयन् ।
कृतकृत्यं मन्यमानो गुरोः पादावभिस्पृशन् ॥

तथा ।

एकतः प्राणदानं स्यादेकतश्चैतदर्पणम् ।
तुलया विधृतं चेत् स्यादेतद्दानं विशिष्यते ॥

तथा ।

कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्लभ्यते वा न लभ्यते ।
शपथं कुरु देवेशि प्रकाश्येयं न कुत्र चित् ॥
सत्यं सत्यं त्रिसत्यं मे ततो वक्ष्यामि पार्वति ।
नो चेत् तेऽपि न वक्ष्यामि प्रमाणं तत्र सैव मे ॥

देव्युवाच ।

शपे त्वच्चरणाब्जाभ्यां हिमाद्रिं शिरसा शपे ।
शपे स्कन्दैकदन्ताभ्यां यद्येनामन्यतो ब्रुवे ॥
शपेऽथ वा तया देव्या यां मे त्वं कथयिष्यसि ।
प्रकाशयामि यद्येनां सैव मे विमुखी भवेत् ॥

महाकाल उवाच ।

साधु साधु महाभागे प्रतीतिर्मेऽधुना त्वयि ।
अकार्षीः शपथं यस्मात् तस्माद्वक्ष्याम्यसंशयम् ॥
समाहिता सावधाना भव देवि वरानने ।
विधेहि चित्तमेकाग्रं बद्ध्वाऽञ्जलिपुटं प्रिये ॥
कालीं कामकलापूर्वां शृणुष्वावहिता मम ।

तथा ।

या गुह्यकाली सैवेयं काली कामकलाऽभिधा ।
मन्त्रभेदाद्ध्यानभेदाद्भवेत् कामकलात्मिका ॥
यथा त्रिभेदा तारा स्यात् सुन्दरी सप्तसप्ततिः ।
दक्षिणा पञ्चभेदा स्यात् तथेयं गुह्यकालिका ॥
सप्तधा ध्यानमन्त्राभ्यां जायते भिन्नरूपिणी ।
यथा पञ्चाक्षरो मन्त्रो देवी चैकजटा स्मृता ॥
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो देवी दक्षिणकालिका ।
तथाऽन्येष्वपि देवेषु मुख्यासु बहुषु प्रिये ॥
देवी कामकलाकाली मनुरष्टादशाक्षरः ।
षोडशार्णा यथा मुख्या सर्वश्रीचक्रमध्यगा ॥
तथेयं नवकालीषु सदा मुख्यतमा स्मृता ।
त्रैलोक्याकर्षणो नाम मन्त्रोऽस्याः परिकीर्त्तितः ॥
तस्योद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणु यत्नेन पार्वति ।
श्रुत्वाऽवधारयस्वेमां सर्वकल्याणहेतवे ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

आद्यवर्गाद्यवर्णोऽक्ष्णा वामेन परिशीलितः ।
मूर्ध्नि मूर्धा यतृतीययुगधः परिकर्त्तितः ॥
विन्दुवामाक्षिसंयुक्तो वह्निः खपरमस्तकः ।
वामश्रुत्यर्धचन्द्रेण तृतीयः सपरो भवेत् ॥
दक्षस्कन्धोर्ध्वदन्ताभ्यां चाक्षरो विन्दुमस्तकः ।
ओष्ठवर्गद्वितीयो हपूर्वाधरोष्ठविन्दुयुक् ॥
षडक्षराणि सम्बोध्य यथान्नामस्थितक्रमात् ।
प्रतिलोमेन चोद्धृत्य तानि बीजानि पञ्च वै ॥

भूतबीजाद्यमारभ्य मारबीजान्तमेव हि ।
वैश्वानरवधूयुक्तो मन्त्रो ह्यष्टादशाक्षरः ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण यावन्त्यः सन्ति सिद्धयः ।
स्वयमायान्ति पुरतो जपादीनां च का कथा ॥
सप्त कामकलाकाल्या मनवः सन्ति गोपिताः ।
तेषु सर्वेषु मन्त्रेषु मुख्योऽयं परिकीर्त्तितः ॥
स्मरणादस्य मन्त्रस्य मूर्च्छिताः सर्वदेवताः ।
स्तम्भिता वेपमानाश्च उत्तिष्ठन्त्यतिविह्वलाः ॥
निदेशवर्त्तिनो भूत्वा वर्त्तन्ते चेटका इव ।
किं बहूक्तेन देवेशि सत्यपूर्वं ब्रवीम्यहम् ॥
सहस्रवदनेनापि लक्षकोट्याननेन वा ।
महिमा वर्णितुं शक्यो नास्य वर्षायुतैर्मया ॥
सामान्यतो विजानीहि यद्यदिच्छति साधकः ।
तत् तत् करोति सकलं प्रजापतिरिवापरः ॥
त्रैलोक्याकर्षको नाम मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ।

ऋष्यादिन्यासमाह ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि छन्दश्चर्षिं च बीजकम् ।
अस्य कामकलाकालीमन्त्रस्याहमृषिर्मतः ॥
छन्दश्च बृहतीख्यातं देवी चेयं प्रकीर्त्तिता ।
आद्यबीजं तु बीजं स्यात् क्रोधार्णं शक्तिरेव च ॥
विनियोगोऽस्य सर्वस्य सर्वदा सर्वसिद्धये ।
षडङ्गं पञ्चबीजैस्तैर्नाम्नाऽप्येकं च कारयेत् ॥
नामाक्षराणि प्रत्येकं तत्र देयानि पार्वति ।

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि कुरु चित्तैकतानताम् ।
उद्यद्घनाघनाश्लिष्यज्जपाकुसुमसन्निभाम् ॥
मत्तकोकिलनेत्राभां पक्वजम्बूफलप्रभाम् ।
सुदीर्घप्रबलालम्बिविस्रस्तघनमूर्धजाम् ॥
ज्वलदङ्गारवच्छोणनेत्रत्रितयभूषिताम् ।
उद्यच्छारदसंपूर्णचन्द्रकोकनदाननाम् ॥
दीर्घदंष्ट्रायुगोदश्चद्विकरालमुखाम्बुजाम् ।
वितस्तिमात्रनिष्क्रान्तललज्जिह्वाभयानकाम् ॥
व्यात्ताननतया दृश्यद्द्वात्रिंशद्दन्तमण्डलाम् ।
निरन्तरं वेपमानोत्तमाङ्गां घोररूपिणीम् ॥
अंसासक्तनृमुण्डासृक् पिवन्तीं वक्त्रकन्दरात् ।
सृक्कद्वन्द्वस्रवद्रक्तस्नापितोरोजयुग्मकाम् ॥
उरोजाम्भोजसंसक्तसम्पतद्रुधिरोच्चयाम् ।
सश्चीत्कृतिं धयन्तीं तल्लेलिहानरसज्ञया ॥
ललाटे घननारासृग्विहितारुणचित्रकाम् ।
सद्यश्छिन्नगलद्रक्तनृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
श्रुतिनद्धकचालम्बिवतंसलसदंसकाम् ।
स्रवदस्रौघया शश्वन्मानव्या मुण्डमालया ॥
आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां केशबद्धया ।
श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
शवदीर्घाङ्गुलिपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
कठोरपीवरोत्तुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
महामारकतग्राववेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।

विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
अभ्रनद्धार्भकशिरोवलत्किङ्किणीमण्डिताम् ।
सुपीनषोडशभुजां महाशङ्खाश्वदङ्गदाम् ॥
शवानां धमनीपुञ्जैर्वेष्टितैः कृतकङ्कणाम् ।
ग्रथितैः शवकेशैः स्रग्दामभिः कटिसूत्रिणीम् ॥
शवपोतकरश्रेणीग्रथनैः कृतमेखलाम् ।
शोभमानाङ्गुलीमांसमेदोमज्जाङ्गुलीयकैः ॥
असिं त्रिशूलं चक्रं च शरमङ्कुशमेव च ।
ललानं च तथा कर्त्रीमक्षमालां च दक्षिणे ॥
पाशं च परशुं नागं चापं मुद्गरमेव च ।
शिवापोतं खर्परं च वसासृङ्मेदसाऽन्वितम् ॥
लम्बत्कचं नृमुण्डं च धारयन्तीं स्ववामतः ।
विलसन्नूपुरां देवीं ग्रथितैः शवपञ्जरैः ॥
श्मशानप्रज्वलद्घोरचिताग्निज्वालमध्यगाम् ।
अधोमुखमहादीर्घप्रसुप्तशवपृष्ठगाम् ॥
वमन्मुखानलज्वालाजालव्याप्तदिगन्तराम् ।
प्रोत्थायैव हि तिष्ठन्तीं प्रत्यालीढपदक्रमात् ॥
वामदक्षिणसंस्थाभ्यां नदन्तीभ्यां मुहुर्मुहुः ।
शिवाभ्यां घोररूपाभ्यां वमन्तीभ्यां महानलम् ॥
विद्युदङ्गारवर्णाभ्यां वेष्टितां परमेश्वरीम् ।
सर्वदैवानुलग्नाभ्यां पश्यन्तीभ्यां महेश्वरीम् ॥
अतीव भीषमाणाभ्यां शिवाभ्यां शोभितां मुहुः ।
कपालसंस्थं मस्तिष्कं ददतीं च तयोर्द्वयोः ॥
दिगम्बरां मुक्तकेशीमट्टहासभयानकाम् ।

सप्तधा बद्धनाराचयोगपट्टविभूषिताम् ॥
संहारभैरवेणैव सार्धं संभोगमिच्छतीम् ।
अतिकामातुरां कालीं हसन्तीं खर्वविग्रहाम् ॥
कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ।
महाप्रलयकोट्यर्कविद्युदर्बुदसन्निभाम् ॥
कल्पान्तकारिणीं कालीं महाभैरवरूपिणीम् ।
महाभीमां दुर्निरीक्ष्यां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
शत्रुपक्षक्षयकरीं दैत्यदानवसूदनीम् ।
चिन्तयेदीदृशीं देवीं कालीं कामकलाभिधाम् ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि पौरश्चरणिकं विधिम् ।
एकस्मिन् पत्रविहिते सिद्धिस्तात्कालिकी भवेत् ॥
भूमिशुद्धिर्द्रव्यशुद्धिः पूर्वैव कथिता मया ।
यमाश्च नियमा ये स्युः पुरश्चरणकर्मणि ॥
सर्वानेव प्रयुञ्जीत सततं भक्तितत्परः ।
कृतनित्यक्रियः प्रातः कृतपूजाविधिः शुचिः ॥
नरास्थि निखनेद्भूमावस्त्रमन्त्रमुदीरयन् ।
तारं क्रोधोऽनु ह्रीँ पाशस्मरभूतान् समुद्धरेत् ॥
सिद्धिमुच्चार्य देहीति युग्मं वह्नयङ्गनां वदेत् ।

भूतबीजं फ्रोमिति ।

तथा ।

तदुपर्येव चास्तीर्य स्वासनं सुष्ठु कल्पितम् ।
नृमुण्डमग्रतः कृत्वा नरास्थिजपमालया ॥
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।

अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं तथैव च ॥
दशांशं होमयेन्मन्त्री तर्पयेदभिषेचयेत् ।
होमे सन्तर्पणे चैव पूजावत् कथितो विधिः ॥
पूजायां वा प्रयोगे वा होमे वा तर्पणेऽथ वा ।
गुह्यकालीविधानेन सर्वं कार्यं शुचिस्मिते ॥
अत्रानुक्तं विधानं यत् तत्रत्यं तत् प्रकल्पयेत् ।
तत्राप्यनुक्तं यत् किञ्चित् तत्रोक्तो दक्षिणाविधिः ॥

इति प्रथममहाविद्याप्रकरणम् ।

अथ द्वितीयविद्यायाः (फेत्कारिणीतन्त्रे)

कैलाशशिखरासीनं चन्द्रखण्डविराजितम् ।
वक्षःस्थले समासीना पृच्छति स्म नगात्मजा ॥
कथमीशान सार्वज्ञ मलभँस्ते तपोधनाः ।
कां विद्यां प्राप्य कवयो भारतादि प्रचक्रिरे ॥
श्रुत्वा नगात्मजावाक्यं विहस्य परमेश्वरः ।
प्राह प्रियां परिष्वज्य साधु साध्विति पूजयन् ॥
शृणु साध्वि महाविद्यामज्ञानेन्धनदाहिनीम् ।
यामवाप्य महात्मानो धर्मकामार्थमुक्तिषु ॥
नासाध्यं मेनिरे किञ्चित् कवयः शुद्धबुद्धयः ।
वादे सदसि या वाचः स्तम्भिनी प्रतिवादिनाम् ॥
विद्याहानिकरी देवि विदुषां वलिदानतः ।
हास्याय या सदस्यानामशुद्धमपि जल्पयेत् ॥
वादिनं चापि राजानं मन्त्रिणं वशमानयेत् ।

जल्पयेद्वादिनमित्यन्वयः ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण जपात् सर्वज्ञतां नयेत् ॥

मन्त्रोद्धारणमाह ।

सपरं प्रथमं दत्वा चतुर्थस्वरभूषितम् ।
रेफारूढं स्फुरद्दीप्तमिन्दुविन्दुसमन्वितम् ॥
त्रकारं च ततो दद्याच्चतुर्थेनैव भूषितम् ।
दीर्घौकारसमायुक्तं हकारं योजयेत् ततः ॥
फट्कारं च ततो दद्यात् संपूर्णः सिद्धमन्त्रतः ।

सपरो हकारः । शेषं स्पष्टम् ।

(मत्स्यसूक्ते)

अथ वक्ष्ये महादेव्या मन्त्रोद्धारमनुत्तमम् ।
यच्च ज्ञात्वा नरो भाति वाचस्पतिरिवापरः ॥
मायाबीजं समुद्धृत्य तवर्गप्रथमं तथा ।
रतिविन्दुवह्नियुतं द्वितीयं बीजमुत्तमम् ॥
कूर्चबीजं तृतीयं तु फट्कारस्तदनन्तरम् ।
सम्पूर्णसिद्धमन्त्रस्तु रश्मिपञ्चकसंयुतः ॥

पञ्चरश्मिः प्रणवः ।

तदुक्तं (तारार्णवे)

अनन्तरं समुद्धृत्य मायोत्तरमनुं ततः ।
पपञ्चमः समायुक्तं पञ्चरश्मिः प्रकीर्त्तितः ॥

अनुत्तरमकारः । मायोत्तरमुकारः । पपञ्चमो मकारः ।

(तन्त्रबोधे)

तारं लज्जां त्रकामेशीं हुँ फडित्युग्रतारिका ।
माया त्रीँ हूमथाम्रान्तमित्येकजटयाऽर्चयेत् ॥
अस्त्रहीनमिदं नीलसरस्वत्या विनिर्दिशेत् ।

कामेशी ईकारः ।

त्र्यक्षरोऽसौ महामन्त्रः फट्कारान्तौ हृदि स्थितः ।
पञ्चरश्मिसमायुक्तोऽथाज्ञानेन्धनदाहकः ॥

(मत्स्यसूक्ते)

लज्जाबीजं वधूबीजं कूर्च्चबीजं तथा हि फट् ।
एवं पञ्चाक्षरी विद्या पञ्चभूतप्रकाशिनी ॥

तथा ।

तारात्ररहिता त्र्यर्णा महानीलसरस्वती ।
कुल्लुकेति समाख्याता त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥

(तारार्णवे)

वशिष्ठाराधिता चोग्रा न शीघ्रफलदा यतः ।
अतस्तेनैव मुनिना शापो दत्तः सुदारुणः ॥
ततः प्रभृति विद्येयं फलदात्री न कस्य चित् ।
शक्तिबीजं त्रपान्तस्थबीजोपरि नियोजितम् ॥
ततः प्रभृति विद्येयं वधूरिव यशस्विनी ।
फलिनी सर्वविद्यानां जयिनी जयकाङ्क्षिणाम् ॥
विषक्षयकरी विद्या अमृतत्वप्रदायिनी ।
मत्रस्य ज्ञानमात्रेण विजयी भुवि जायते ॥
मूको भवति वागीशो गीष्पतिर्जायते नरः ।

शक्तिबीजमिति । शक्तिबीजं सकारः । त्रपान्तस्थबीजं त्रीङ्कारः । तेन स्त्रीमि वधूबीजं भवति । शापस्तु कृष्णावतारपर्यन्तमेव ।

जाते कृष्णावतारे तु पुनः शापात् प्रमुच्यते ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

मन्त्रार्थमाह (साधनसमुच्चये)

प्रणवाद्ब्रह्मरूपा सा सोऽहं तत्त्वस्वरूपिणी ।
व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना ॥
तयोर्विसर्ग ईंकारो विन्दुना तान्त्रिकी मता ।
तकारः सर्वपापघ्नो रेफस्तत्त्वप्रकाशकः ॥

विन्दुमाली महाबीजं शब्दब्रह्मप्रकाशकम् ।
कूर्च्चं प्रबोधरूपं स्यादस्त्रं जाड्यविनाशकम् ॥
एवं यो वेत्ति शुद्धात्मा स तु साक्षान्महेश्वरः ।

(मत्स्यसूक्ते)

श्रीबीजाद्या यदा विद्या तदा श्रीः सर्वतो मुखी ।
एषैव हि महाविद्या मायाद्या सकलेष्टदा ॥
वाग्भवाद्या महावाक्यस्वरूपा सर्ववाङ्मयी ।

तथा ।

गुटिकासिद्धिवेतालपातालवटयक्षिणी ।
परपुरप्रवेशश्च आज्ञासिद्धिः प्रजायते ॥
जिह्वायां चिन्तनादेव त्रिकालज्ञो भवेद्ध्रुवम् ।
यस्तु विद्यामभेदेन चिन्तयेत् साधकोत्तमः ॥
जीवन्मुक्तो विमुक्तश्च अन्ते सोऽपि भवेद्ध्रुवम् ।

(ब्रह्मसंहितायां फेत्कारिण्यां) च ।

क्षिप्रप्रसादाज्जगतां सदा नीलसरस्वती ।
विशेषतः कलियुगे मत्प्रसादाद्भविष्यति ॥
सिद्धमन्त्रो यदा मन्त्री बालिशस्यापि मूर्द्धनि ।
करं दत्वा दिशत्याशु सोऽपि श्लोकान् पठेत् पुनः ॥

दिशति श्लोकं कुर्वित्याज्ञापयति ।

तथा ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण अनुभावद्वयं भवेत् ।
तात्कालिकी च कविता परैरनविभाव्यता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (मेरुतन्त्रे)

मुनिरक्षोभ्यसंज्ञोऽस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
तारादेवी ह्रीँ च बीजं हूँ शक्तिश्चास्य कीर्त्तिता ॥

(मन्त्रचूडामणौ)

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमस्त्रं शक्तिः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदा ।

दामोदरमिश्रकृतसंग्रहे ।

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीच्छन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमन्त्रः शक्तिः स्यान्माया स्त्रीँ कीलकं स्मृतम् ।
विनियोगो भवेद्देवि चतुर्वर्गफलाप्तये ।

उग्रतारा देवतेति (मन्त्रचूडामणौ)

अथ कराङ्गन्यासौ । तत्रादौ उग्रतारायाः (ताराकल्पे)

षड्दीर्घमायाबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥

नीलसरस्वत्यास्तु (सिद्धसारस्वते)

अखिलवाग्रूपिणीं प्रोच्य हृदाय नमो वदेत् ।
अखण्डवाग्रूपिणीं च शिरसे वह्निवल्लभा ॥
ब्रह्मवाग्रूपिणीमुक्त्वा शिखायै वषडित्यपि ।
विष्णुवाग्रूपिणीमुक्त्वा कवचाय हुमुच्चरेत् ॥
रुद्रवाग्रूपिणीं नेत्रत्रयाय वौषडित्यपि ।
सर्ववाग्रूपिणीमुक्त्वा अस्त्राय फडिति स्मरेत् ॥
षड्दीर्घमायया बीजं बीजान्ते तानि योजयेत् ।

एकजटायाः (तन्त्रचूडामणौ)

बीजान्ते एकजटायै हृदयं परिकीर्त्तितम् ।
तारिण्यै शिरसे तद्वद्वज्रोदके शिखां तथा ॥
उग्रजटे च कवचं महापरिसरे तथा ।

पिङ्गोग्रैकजटे तद्वन्नेत्रास्त्रे परिकीर्त्तिते ॥

न्यासोऽयमुग्रतारैकजटयोर्विरुद्ध इति साम्प्रदायिकः ।

अथ ध्यानम् ( गन्धर्वतन्त्रे )

श्मशानं तत्र संचिन्त्य तत्र कल्पद्रुमं स्मरेत् ।
तन्मूले मणिपीठं च नानामणिविभूषितम् ॥
शिवाभिर्बहुमांसास्थिमोदमानाभिरन्ततः ।
चतुर्दिक्षु शवामुण्डाश्रिताङ्गारास्थिभूषिताः ॥
तन्मध्ये भावयेद्देवीं यथोक्तध्यानयोगतः ।

(नीलतन्त्रे)

प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्मवृतां कटौ ॥
नवयौवनसंपन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम् ।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महाभीमां वरप्रदाम् ॥
खड्गकर्त्रीधरां सव्ये वामे मुण्डोत्पलान्विताम् ।
पिङ्गोग्रैकजटां ध्यायेन्मौलावक्षोभ्यभूषिताम् ॥
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रयभूषिताम् ।
प्रज्वलत्पितृभूमध्यगतां दंष्ट्राकरालिनीम् ॥
सावेशस्मेरवदनामस्थ्यालङ्कारभूषिताम् ।
विश्वव्यापकतोयान्तः श्वेतपद्मोपरिस्थिताम् ॥

( श्यामारहस्यादौ )

खड्गकर्त्रीसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ।
कपालोत्पलसंयुक्तसव्यपाणियुगान्विताम्—इति पाठः ॥

(तन्त्रान्तरे)

खड्गकर्त्रीधरां देवीं कपालोत्पलधारिणीम्—इति पाठः ।

(मन्त्रचूडामणौ)

तस्योपरिगृहे देवीं खर्वां नीलमणिप्रभाम् ।
लम्बोदरीं व्याघ्रचर्मसमावृतनितम्बिनीम् ॥
पीनोन्नतपयोभारां रक्तवर्त्तुललोचनाम् ।
ललज्जिह्वां महाभीमां दंष्ट्राकोटिसमुज्ज्वलाम् ॥
नीलोत्पललसन्मालां बद्धजूटां भयङ्करीम् ।
श्वेतास्थिपट्टिकायुक्तकपालपञ्चशोभिताम् ॥
ललाटे रक्तनागेन कृतकर्णावतंसकाम् ।
अतिशुभ्रमहानागकृतहारमहोज्ज्वलाम् ॥
दूर्वादलश्यामनागकृतयज्ञोपवीतिनीम् ।
चतुर्भुजां रक्तमांसखण्डमण्डितमुष्टिना ॥
जटाजूटाक्षसूत्रेण शोभितां तीक्ष्णधारया ।
खड्गेन दक्षिणस्योर्ध्वे शोभितां वीरनादिनीम् ॥
तदधःस्थाद्बीजवृन्तकर्त्रिकालङ्कृतां पराम् ।
वामोर्ध्वे रक्तनालेन दिगम्बरमनोहराम् ॥
दधतीं नीलपद्मं च तदधःस्थात् कपालकम् ।
जगतां जाड्यसंयुक्तं दधतीं कुन्दसन्निभम् ॥
धूम्राभनागसंदोहकृतकेयूरसत्वराम् ।
सुवर्णवर्णनागेन कङ्कणोज्ज्वलपाणिकाम् ॥
शुभ्रवर्णमहादेवकृतसद्विमलासनम् ।
निर्यन्त्रणभिया तद्वत् संकुचत्प्रपदात्मिकाम् ॥
शवपादद्वयारूढवामपादां महोन्मुखीम् ।
कुन्दाभनागसंशोभिकटिसूत्रां त्रिलोचनाम् ॥
अस्त्रग्रक्तेन नागेन कृतनूपुरपल्लवाम् ।

सद्यश्छिन्नगलतद्रक्तमुण्डै रक्तविभूषणैः ॥
अन्योन्यकेशग्रथितैः पादपद्मविलम्बितैः ।
पञ्चाशद्भिर्महामालाशोभितां परमेश्वरीम् ॥
ज्वलच्चितामध्यसंस्थां द्वीपिचर्मोत्तरांशुकाम् ।
अक्षोभ्यनागसम्बद्धजटाजूटां वरप्रदाम् ॥
एवम्भूतां महादेवीमात्मानं यागवस्तु च ।
विज्ञापयेन्महादेवपण्डितोऽहं महाकविः ॥

(तारोपनिषदि)

विरुद्धवाक्यार्थशरीरमण्डले
नवाम्बुदाभां गुरुमुन्नतोदरीम् ।
अतीव खर्वां नवयौवनस्था-
मधःस्थशार्दूलककृत्तिमूर्धजाम् ॥
अनैक्यमाहत्य शवोपरिस्थितां
शवार्धमालीढपरीतमध्यमाम् ।
विशीर्णवर्णां नृशिरःस्रजोद्भवां
त्रयीत्रिवर्त्तारुणलोचनत्रयाम् ॥
अभेदपिङ्गैकजटाविराजितां
विभूषणाच्छिन्नसितास्थिभीषणाम् ।
महाष्टसिद्धिप्रकराहिभूषणा-
मट्टाट्टहासैर्जगतामभीतिदाम् ॥
जटास्वनन्तः श्रवसोश्च तक्षको
महाहिपद्मो हृदि हारभूषणाम् ।
तथैव कर्कोटकृतोपवीतिकां
सुमेखलायामथ देववासुकिः ॥

सशङ्खपालः किलकङ्कणो मतः
पदेषु पद्मः किलनूपुरश्रियम् ।
भुजेषु नागः कुलिकोऽङ्गदो मतो
भुजोऽर्धमालामहता स्थितिः स्थिता ॥
सितश्च रक्तो धवलश्च मेचक-
स्तथैव नागोऽथ सितश्च पाण्डरः ।
भुजङ्गमानामिह वर्णजातयो
भवन्ति सर्वे मुनिभिर्ज्वलच्चिताम् ॥
कपालकर्त्रीग्रथितोग्रमूर्धजां
सनालमिन्दीवरकान्तिमालाम् ।
विकोषखड्गं सततं च दक्षिणे
स्वपौरुषोत्थैर्दधतीं भुजैः सदा ॥
पदार्थदंष्ट्राद्वयपञ्चमुद्रया
विराजमानामसितोत्पलस्रजम् ।
विचिन्तयेत् तां च कवित्वकारिणी-
मन्यागतार्थं प्रजपेच्च तारिणीम् ॥

(फेत्कारिणीतन्त्रेऽपि)

प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रिशवहृद्घोराट्टहासा वरा
खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूँकारबीजोद्भवा ।
खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटोग्रनागैर्वृता
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम् ॥

प्रत्यालीढलक्षणं तु (संगीतरत्नाकरे)

वामो यत्र निषण्णोरुरन्तरे पूर्वमानतः ।
दक्षिणं चरणं चाग्रे पञ्चतालप्रसारितम् ॥

अस्त्रौ द्वावपि तद्विन्द्यादालीढं तु सदैवतम् ।
आलीढाङ्गविपर्यासात् प्रत्यालीढमुदाहृतम् ॥

तालं वितस्तिः । अस्त्रौ चक्रौ । मौलावक्षोभ्यभूषितामिति । अत्राक्षोभ्यो नागरूपः । अक्षोभ्यो देवीमूर्धन्यस्तिमूर्त्तिर्नागरूपधृगिति (भावचूडामणि-) वचनात् ।

अथ पुरश्चरणविधिः । तत्रादौ मन्त्रध्यानमुक्तं (साधनसमुच्चये)

मूलचक्रे च हृल्लेखां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
स्वाधिष्ठाने पीतवर्णं द्वितीयं च विभावयेत् ॥
नाभौ जीमूतसंकाशं कूर्चबीजं महाप्रभम् ।
अस्त्रबीजं हृदि ध्यायेत् कालाग्निसदृशप्रभम् ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वां विद्यां विभावयेत् ।
सूर्यकोटिप्रतीकाशां योगिनां दृष्टिगोचराम् ॥

तदुक्तं (तारातन्त्रे)

स्वेच्छाचारपरो मन्त्री पुरश्चरणसिद्धये ।
रहस्यमालामादाय लक्षमेकं जपेत् सदा ॥

(सुरेन्द्रसंहितायाम्)

लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रं दशांशमसितोत्पलैः ।
आज्याक्तैर्जुहुयान्मन्त्री तद्दशांशेन तर्पयेत् ॥
कालागुरुद्रवोपेतैर्विमलैर्गन्धवारिभिः ।
तर्पयेच्च परां देवीं तत्प्रकारमिहोच्यते ॥
जले चावाह्य विधिवत् पाद्याद्यैरुपचारकैः ।
संतर्प्य विधिवद्देवीं परिवारान् सकृत् सकृत् ॥
देवीबुद्ध्या स्वमात्मानं संपूज्य साधकोत्तमः ।
तारिणीं सिञ्चयामीति जलं मूर्ध्नि विनिःक्षिपेत् ॥
कुम्भाख्यमुद्रया देवि नमोऽन्तेनाभिषेचनम् ।

(वीरचूडामणौ)

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् सुधीः ।
पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्वाक्पतिर्जायते नरः ॥

(ताराणवे)

एवं ध्यात्वा हविष्याशी जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।
रहस्यमालामादाय जपेद्वा लक्षमेव च ॥

(मेरुतन्त्रे)

रतं कुर्वन्नदन् भक्ष्यमनेकं दधि मध्वपि ।
मधु मांसं च ताम्बूलं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ॥
दशांशं जुहुयाद्रक्तपद्मैः क्षीराज्यलोलितैः ।
शवमुण्डं पूरयित्वा जपस्थाने जपं चरेत् ॥
नारीं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् महानिशि बलिं हरेत् ।
न कार्यः सुभ्रुवां द्वेषो यत्नतः परिपूजयेत् ॥
जपे न कालनियमो न स्थितौ सर्वदा जपेत् ।
श्मशाने शून्यसदने देवागारेऽथ निर्जने ॥
पर्वते वनमध्ये वा शवमारुह्य मन्त्रवित् ।
समरे शत्रुनिहतं यद्वा षाण्मासिकं शिशुम् ॥
विद्यां संसाधयेच्छीघ्रं साधितैवं प्रसिध्यति ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्त्तुमर्हति ॥

अथैतद्विद्याभेदास्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि दैत्यानां वरसिद्धये ।
ब्रह्मणोपासितां तारां वल्यादिभिरुपासितम् ॥
ॐ त्रीँ ह्रीँ हूँ समुच्चार्य ह्रीँ हुँ फडनगवर्णकः ।
मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दस्तारा च देवता ॥
न्यासाँस्तु पूर्ववत् कुर्याद्ध्यानमस्या निरूप्यते ।

श्वेताम्बरां चन्द्रकान्तिं चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥
कर्त्तरीं च कपालं च कराभ्यां दधतीं भजेत् ।
नानालङ्कारशोभाढ्यां त्रीक्षणां पद्मसंस्थिताम् ॥
जपपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।
मधुयुक्परमान्नेन होमाद्विद्यानिधिर्भवेत् ॥
रक्तां वश्ये स्वर्णवर्णां स्तम्भने मारणेऽसिताम् ।
उच्चाटने धूम्रवर्णां शान्तौ श्वेतां स्मरेदिमाम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि तारकस्य वराय तु ।
ब्रह्मणोपासितां तारां द्वादशार्णां सुदुर्लभाम् ॥
वाचं लज्जां रमां कामं हसरा औसमन्विताः ।
विसर्गाढ्याः पञ्चमं तु कूटमेतदुदीरितम् ॥
हुँ उग्रतारे हुँ फट् मन्त्रः प्रोक्तो जपादिकम् ।
सर्वं पूर्ववदेवास्य कलौ प्रत्ययकारिणी ॥
अथातः संप्रवक्ष्यमि ब्रह्मणा समुपासिताम् ।
हिरण्यकसिपोर्दातुं वरं सप्तार्णसंमिताम् ॥
प्रणवं कवचं मायां क्लीँ प्राक् कूटं च पञ्चमम् ।
हुँ फडन्तः सर्वमस्या न्यासाद्यं पूर्ववद्भवेत् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि हरिणा या ह्युपासिता ।
बौद्धमार्गप्रचारार्थं सिद्धिदा द्वादशाक्षरी ॥
उपासिता ब्रह्मणा या तस्याः कूटे तु पञ्चमे ।
सौरुक्त्वा साधिता विद्या द्वादशार्णाऽतिबुद्धिदा ॥
यत्प्रभावाद्दिवो दासः काश्या उच्चाटितः पुरा ।
तस्यास्तु पूर्ववज्ज्ञेयं न्यासध्यानजपादिकम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि सप्तार्णां रामसेविताम् ।

लक्ष्मीप्रभृति नाशार्थं तेन मत्तः सदा हली ॥
ब्रह्मोपासितसप्तार्णा मध्ये कूटं तु पञ्चमम् ।
तत् त्यक्त्वा सौँ स्तत्र चोक्त्वा बलरामेण सेविता ॥
शत्रुक्षयकरी चेयं तथा वाक्सिद्धिकारिणी ।
ध्यानपूजादिकं प्राग्वत् प्रयोगादिकमेव च ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि नारायणसुसेविता ।
पञ्चार्णा यत्प्रभावेण दैत्यानां कदनं कृतम् ॥
त्रीँ हुँ फट् क्लीँ वाग्भवं च पञ्चार्णा सर्वसिद्धिदा ।
असां त्रयाणां तु मुनिर्विष्णुः प्राग्वज्जपादिकम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि मया या समुपासिता ।
दत्ता च रविणाऽदित्यै सा विद्या तु षडक्षरी ॥
ॐ ह्रीँ हूँ ह्रीँ हुँ फडिति मुनिः सोऽहं च पूर्ववत् ।
ज्ञेयं न्यासादिकं सर्वं प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥
अथान्यं संप्रक्ष्यामि चास्याः पञ्चाक्षरं मनुम् ।
जलन्धरवधार्थं तु मया सिद्धं कृतं सुराः ॥
स्त्रीँ हुँ मायां हुँ फडिति मनुः पञ्चाक्षरो मतः ।

तन्त्रान्तरेऽपि ।

वधूबीजं च कवचं मायां कूर्चं तथाऽस्त्रकम् ।
सार्धपञ्चाक्षरो मन्त्रो द्वितीयः परिकीर्त्तितः ॥

(मेरुतन्त्रे)

मया पञ्चमुखैर्जप्तो दक्षमार्गेण भो सुराः ।
देवांशेषु च विप्रेषु तथा धर्मपरेषु च ॥
यमानां नियमानां च तन्त्रस्था नान्यदेवताः ।
वाममार्गाराधितास्तु कार्यं साधयितुं क्षमाः ॥

दक्षिणाराधिता देवा रणसाहाय्यकारकाः ।
तेजोनिधीन् रिपून् हत्वा नयन्ति ब्रह्मशाश्वतम् ॥
क्षत्रियाणां क्षयार्थं तु मया रामाय चार्पिता ।
पञ्चामृतं सुरास्थाने मांसस्थाने च सूरणम् ॥
मत्स्यस्थाने खण्डो बोध्यो धर्मपत्न्यां रतं रतम् ।
अन्यत् पूर्ववदेव स्याद्गुह्यमेतत् प्रकाशितम् ॥
लुब्धस्तारां न सेवेत लोकद्वयपरिक्षयात् ।
अस्याः पूजादिकं प्राग्वद्विशेषोऽत्र निरूपितः ॥
तारायाः सद्गुरोः सिद्धिः श्रीरते श्रान्तता भवेत् ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि महातारामनुं सुराः ॥
सिद्धिर्मार्गद्वयेनापि वर्णावर्णाधिकारतः ।
त्रीँ ह्रीँ ह्राँ हुँ नमस्तारायै महापदमुच्चरेत् ॥
तारायै सकलेत्युक्त्वा उस्वरान् तारय द्वयम् ।
तारद्वयं वह्निजाया द्वात्रिंशार्णो मनुर्मतः ॥
न्यासपूजाजपाद्यं तु प्राग्वत् सर्वं समाचरेत् ।

(तारिणीतन्त्रे)

ईश्वर उवाच ।

श्रूयतां शैलतनये जाड्यनाशकरी परा ।
चतुर्वर्गफला विद्या मन्त्रसिद्धिप्रदायिका ॥
वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तं वामाक्षिपरिभूषितम् ।
नादविन्दुसमायुक्तं वसुसिद्धिप्रदायकम् ॥
पुनश्चतुर्मुखं देवि रकारेण विभूषितम् ।
स्वरेणैव चतुर्थेन चन्द्रखण्डेन च प्रिये ॥
लाञ्छितं वै महाबीजं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

ततः कृष्णे पदं चोक्त्वा ततो देवीपदं स्मृतम् ॥
ह्रीँकारं च ततो दद्यात् स्वपूर्वमुद्धरेत् ततः ।
इकारेण च रेफेण मकारेण च भूषितम् ॥
ततो वाग्भवमुच्चार्य मन्त्रमेनं समुद्धरेत् ।
नवाक्षरो मनुर्देवि तारिण्याः समुदीरितः ॥
इयमेव महाविद्या स्वर्गे मर्त्ये सुदुर्लभा ।
अष्टसिद्धिप्रदा देवि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः

शक्तिरस्य ऋषिः प्रोक्तो बृहतीछन्द ईरितम् ।
तारिणी देवता प्रोक्ता ह्रीँकारं बीजमुच्यते ॥
वाग्भवं शक्तिरित्युक्तमिति ऋष्यादिकं चरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

कृष्णां लम्बोदरीं भीमां नागकुण्डलशोभिताम् ।
रक्तमुखीं ललज्जिह्वां रक्ताम्बरधरां कटौ ॥
पीनोन्नतस्तनीमुग्रां महानागेन वेष्टिताम् ।
शवस्योपरि देवेशि तस्योपरि कपालके ॥
नासाग्रध्याननिरतां महाघोरां वरप्रदाम् ।
चतुर्भुजां दीर्घकेशीं दक्षिणस्योर्ध्वबाहुना ॥
बिभ्रतीं नलिनीमेकां वामोर्ध्वे पानपात्रकम् ।
वराभयधरां देवीमधस्ताद्दक्षवामयोः ॥
पिबन्तीं रौधिरीं धारां पानपात्रे सदाशिवे ।
सर्वसिद्धिप्रदां देवीं नित्यां गिरिनिवासिनीम् ॥
लोचनत्रयसंयुक्तां नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
दीर्घनासां दीर्घजङ्घां दीर्घाङ्गीं दीर्घजिह्विकाम् ॥

चन्द्रसूर्याग्निभेदेन त्रिलोचनसमन्विताम् ।
शत्रुनाशकरीं देवीं महाभीमां वरप्रदाम् ॥
व्याघ्रचर्मशिरोबद्धां जगत्त्रयविभाविताम् ।
साधकानां सुखं कर्त्रीं सर्वलोकभयङ्करीम् ॥
एवम्भूतां महादेवीं तारिणीं प्रणमाम्यहम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं संपूजयित्वा च एभिर्द्रव्यैर्महेश्वरि ।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥

अथाक्षोभ्यमन्त्रः । (ब्रह्मसंहितायाम्)

अक्षोभ्यस्य मनुं त्यक्त्वा देवीं तारां जपेद्यदि ।
सिद्धिहानिर्भवेत् तस्य रौरवं नरकं व्रजेत् ॥
अक्षोभ्यस्य मनुं विप्र कवचं सारमुत्तमम् ।
अतिगुह्यं महाध्यानं सर्वध्यानेषु चोत्तमम् ॥
अग्रे मनुं प्रवक्ष्यामि ध्यानं चैव ततः परम् ।
कवचं च ततः पश्चात् कथयामि क्रमेण तु ॥
अनुत्तरं समुद्धृत्य पपञ्चमविभूषितम् ।
अक्षोभ्येति च स्वाहेति रमाद्यन्तं महामनुः ॥
स्वयम्-ऋषिश्च संप्रोक्तो विराट्छन्द उदीरितम् ।
अक्षोभ्यो देवता प्रोक्तस्त्रिमूर्त्तिर्नागरूपधृक् ॥
विनियोगस्तु नियतं पुरुषार्थचतुष्टये ।
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वसौभाग्यदायकम् ॥
सहस्रादित्यसंकाशं नागरूपधरं शुभम् ।
विद्युत्कोटिसमं वक्त्रं वह्निभास्वरलोचनम् ॥
सार्धत्रिवलयोपेतं जटाकोट्यग्रसंस्थितम् ।

महालावण्यसंयुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् ॥
सूर्यविद्युत्समाभासं महामणिशिखोपरि ।
एतद्रूपं महाकायं देवैरपि सुपूजितम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

अक्षोभ्यं पूजयित्वाऽऽदौ तारां संपूजयेत् सुधीः ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं चास्य तारिणीवत् समाचरेत् ।

इति ताराप्रकरणम् ।

अथ श्रीविद्या ।

तत्रादौ कामराजविद्या (चन्द्रपीठे)

स्मरो भगं विन्दुमती लपरा वाग्भवं मतम् ।
शिवो जीवः स्मरः शम्भुर्लपरा कामकूटकम् ॥
भृगुः कामः क्षमा माया कामराजाभिधा मता ।

कूटत्रयस्य वाग्भवादिसंज्ञा च तत्रैवोक्ता ।

प्रथमं वाग्भवं कूटं द्वितीयं कामकूटकम् ।
तृतीयं शक्तिकूटं स्यात् कूटत्रयतनुर्मनुः ॥

अथ लोपामुद्राख्या विद्या (ज्ञानार्णवे)

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोपामुद्राभिधां पराम् ।
कामराजाख्यविद्यायाः शक्तिं तुर्यां च सुन्दरीम् ॥
हित्वा मुखे शिवेन्द्वाढ्या लोपामुद्रा प्रकाशिता ।

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे एकारमीकारं च विहायादौ हकारसकारौ दद्यादित्यर्थः । इयमगस्त्योपासिता ।

अथ षोडशी (योगिनीतन्त्रे)

श्रीबीजमाया स्मरयोनिशक्ति-
स्तारं च माया कमलाऽथ विद्या ।
शक्त्यादिबीजैश्च विलोमतोक्त्या
श्रीषोडशीयं च शिवोपदिष्टा ॥

तन्त्रान्तरे ।

श्रीबीजं शक्तिबीजं च कामबीजं च वाग्भवम् ।
बालान्तसंस्थितं बीजं प्रणवं च ततः परम् ॥
शक्तिबीजं रमां चैव विद्यां च परमेश्वरि ।
लोपां वा कामराजं वा त्रिकूटामथ वा पराम् ॥
विन्यस्य प्रणवाद्यानि बीजानि पञ्च सुन्दरि ।
विपरीतक्रमेणैव विन्यसेत् षोडशीं पराम् ॥

(मायातन्त्रेऽपि)

लक्ष्मीः परा मदनयोनियुता च शक्ति-
स्तारः परा च कमलाऽप्यथ मूलविद्या ।
शक्त्यादिभिश्च विपरीततया प्रदिष्टा
श्रीमन्त्रराज उदितः परदेवतायाः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

अतः परतरा विद्या न भूता न भविष्यति ।
केनापि नैव शप्तेयं न च केनापि कीलिता ॥

(ज्ञानार्णवे)

वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वर्णितुं नैव शक्येयं श्रीविद्या षोडशाक्षरी ॥
ब्रह्मविद्या स्वरूपा हि भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः ॥
अश्वमेधसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ।
काश्यादितीर्थयात्राः स्युः सार्धकोटित्रयान्विताः ॥
तुलां नायान्ति देवेशि नात्र कार्या विचारणा ।
एकोच्चारेण गिरिजे किं पुनर्ब्रह्मकेवलम् ॥
षोडशार्णा महाविद्या न प्रकाश्या कदा चन ।

गोपितव्या त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ॥
अपि प्रियतमे देयं सुतदारधनादिकम् ।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया षोडशाक्षरी ॥
सप्तलक्षं महाविद्यास्तन्त्रादौ कथिताः प्रिये ।
सारात् सारतरा चेयं महाविद्या सुगोपिता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासस्तत्रैव ।

ऋषिरस्य महेशानि दक्षिणामूर्त्तिरव्ययः ।
पङ्क्तिश्छन्दः समाख्यातं देवी त्रिपुरसुन्दरी ॥
वाग्भवं बीजमित्युक्तं शक्तिस्तु शक्तिकूटकम् ।
कामराजः कीलकं स्यादृष्यादिन्यास ईरितः ॥

वाग्भवादीनां बीजादिरूपत्वे हेतुरुक्तो (दक्षिणामूर्त्तिसंहितायाम्)

निःसरन्ति महामन्त्रा महाग्नेर्विस्फुलिङ्गवत् ।
तथैव मातृका वर्णा निःसृता वाग्भवाः प्रिये ॥
अत एवास्य देवस्य वाग्भवं बीजमुच्यते ।
योषित् पुरुषरूपेण स्फुरन्ती विश्वमातृका ॥
महामोहेन देवेशि कीलयन्ती जगत्त्रयम् ।
अतस्तत्कीलकं देवि तेन सौभाग्यगर्भिता ॥
पालयन्ती जगत् सर्वं तेनेयं शक्तिरुच्यते ।

अथ कराङ्गन्यासस्तन्त्रान्तरे ।

ऐँ आँ सौँरिति प्रोक्तं बीजं त्रिविधमुत्तमम् ।
एतद्बीजं द्विरावृत्य मध्यमाद्यङ्गुलीषु च ॥
शुद्धिं करस्य कुर्वीत तलयोः पृष्ठयोरपि ।
चतुर्थी नतिसंयुक्ता नाममन्त्रैः पृथक् पृथक् ॥
मध्यमाऽनामिका चैव कनिष्ठाऽङ्गुष्ठतर्जनी ।

क्रमेण नाम चाख्यातमङ्गुलीनां महेश्वरि ॥

(नवरत्नेश्वरे)

सर्वज्ञता नित्यसुतृप्तता च अनादिबोधश्च स्वतन्त्रता च ।
अलुप्तशक्तित्वमनन्तता च षडाहुरङ्गानि शिवे शिवाद्याः ॥

अत्र बहुविधन्यासजालं (ज्ञानार्णवादौ) द्रष्टव्यम् ।

अथ ध्यानम् ।

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशाङ्कुशधनुर्बाणधारयन्तीं शिवां श्रये ॥

(सिद्धान्तसंग्रहे महाकालसंहितायां) च ।

उद्यच्चन्द्रोदयक्षुब्धरक्तपीयूषवारिधेः ।
मध्ये हेममयी भूमी रत्नमाणिक्यमण्डिता ॥
तन्मध्ये नन्दनोद्यानं मदनोन्मादनं महत् ।
नित्याभ्युदितपूर्णेन्दुज्योत्स्नाजालविराजितम् ॥
सदा सह वसन्तेन कामदेवेन रक्षितम् ।
कदम्बचूतपुन्नागनागकेशरचम्पकैः ॥
वकुलैः पारिजातैश्च सर्वर्तुकुसुमोज्ज्वलैः ।
झङ्कारमुखरैर्भृङ्गैः कूजद्भिः कोकिलैः शुकैः ॥
नानावर्णैरथान्यैश्च द्विजसङ्घैर्निषेवितम् ।
शिखिकारण्डहंसाद्यैर्नानापक्षिभिरावृतम् ॥
नानापुष्पलताकीर्णैः शोभितं वृक्षखण्डकैः ।
पर्यन्तदीर्घिकोत्फुल्लकमलोत्पलसम्भवैः ॥
रजोभिर्धूसरैः सम्यक् सेवितं मलयानिलैः ।
ध्यात्वैवं नन्दनोद्यानं तदन्तः प्राङ्गणं स्मरेत् ॥
शुद्धकाञ्चनसंकाशवसुधाभिरलङ्कृतम् ।
प्राङ्गणं चिन्तयित्वेत्थं सुरसिद्धनिषेवितम् ॥

तन्मध्ये मण्डपं ध्यायेद्व्याप्तब्रह्माण्डमण्डलम् ।
सहस्रादित्यसंकाशं चतुरस्रं सुशोभितम् ॥
रत्नतेजःप्रभापुञ्जपिञ्जरीकृतदिङ्मुखम् ।
मध्यस्तम्भविनिर्मुक्तं कोणस्तम्भसमन्वितम् ॥
महामाणिक्यवैदूर्यरत्नकाञ्चनभूषितम् ।
मुक्तादामवितानाढ्यं रत्नसोपानमण्डितम् ॥
मन्दवायुसमाक्रान्तं गन्धधूपतरङ्गितम् ।
रत्नचामरघण्टादिवितानैरुपशोभितम् ॥
जातीचम्पकपुन्नागकेतकीमल्लिकादिभिः ।
रक्तोत्पलसिताम्भोजमाधवीभिः सुपुष्पकैः ॥
बद्धाभिश्चित्रमालाभिः सर्वत्र समलङ्कृतम् ।
तिर्यगूर्ध्वंलसद्रक्तपुत्तलीकोटिमण्डितम् ॥
नानारत्नादिभिर्दिव्यैर्निर्मितं विश्वकर्मणा ।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥
स्वर्णादिरत्नभूमिं च वालुकां काञ्चनप्रभाम् ।
उद्यदादित्यसंकाशं व्याप्तब्रह्माण्डमण्डपम् ॥
शतयोजनविस्तीर्णं ज्योतिर्मन्दिरमुत्तमम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारमण्डितम् ॥
रत्नोपक्लृप्तिसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
नवरत्नसमाक्लृप्ततुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
हेमदण्डशिखालम्बिध्वजावलिपरिष्कृतम् ।
मध्यकोणस्थितस्तम्भनवरत्नसमन्वितम् ॥
महामाणिक्यवैदूर्यरत्नचामरशोभितम् ।
कल्पवृक्षे गिरेः पार्श्वे छत्रं तन्मण्डपोपरि ॥

सुवर्णसूत्रै रचितं तन्मध्ये रत्नमण्डपम् ।
तन्मध्ये स्फुरितं ध्यायेत् त्रिशृङ्गं ज्योतिरुत्तमम् ॥
तस्य मध्ये महाचक्रं पीयूषपरिपूरितम् ।
रत्नसिंहासनं तस्या वेद्या मध्ये स्मरेच्छुभम् ॥
विरिञ्चिविष्णुरुद्रेशरूपपादचतुष्टयम् ।
सदाशिवमयं साक्षात् तस्मिन् परशिवात्मकम् ॥
पुष्पपर्यङ्कतन्मध्ये श्रीमदुद्यानपीठके ।
पर्यङ्कबन्धविलसत्स्वस्तिकासनशालिनीम् ॥
ध्यायेत् परशिवाङ्कस्थां पद्ममध्योज्ज्वलाकृतिम् ।
त्रिपुरां सुन्दरीं देवीं बालार्ककिरणारुणाम् ॥
जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ।
पद्मरागप्रतीकाशां कुङ्कुमारुणसन्निभाम् ॥
स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम् ।
कालालिकुलसंकाशकुटिलालकपल्लवाम् ॥
प्रत्यगारुणसंकाशवदनाम्भोजमण्डिताम् ।
किञ्चिदर्धेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम् ॥
पिनाकधनुराकारभ्रूलतां परमेश्वरीम् ।
आनन्दमुदितोल्लासलीलां दोलितलोचनाम् ॥
स्फुरन्मयूखसङ्घातविलसद्धेमकुण्डलाम् ।
स्वगण्डमण्डलाभोगजितेन्द्वमृतमण्डलाम् ॥
विश्वकर्मविनिर्माणसूत्रविस्पष्टनासिकाम् ।
ताम्रविद्रुमविम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम् ॥
दाडिमीबीजपङ्क्त्याभदन्तपङ्क्तिविराजिताम् ।
स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यरससागराम् ॥

अनौपम्यगुणोपेतच्चिबुकोद्देशशोभिताम् ।
कम्बुग्रीवां महादेवीं मृणालसदृशैर्भुजैः ॥
रक्तोत्पलदलाकारसुकुमारकरां भुजाम् ।
कराम्बुजनखज्योतिर्विद्योतितनभस्तलाम् ॥
मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम् ।
त्रिवलीवलयामुक्तंमध्यदेशसुशोभिताम् ॥
लावण्यसरिदावर्त्तनिम्ननाभिविभूषिताम् ।
अनर्घ्यरत्नघटितकाञ्चीयुतनितम्बिनीम् ॥
नितम्बविम्बद्विरदरोमराजिवराङ्कुशाम् ।
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम् ॥
लावण्यकुसुमाकारजानुमण्डलबन्धुराम् ।
लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम् ॥
गूढगुल्फपदद्वन्द्वप्रपदाजितकच्छपाम् ।
तनुं दीर्घाङ्गलीच्छन्ननखराजिविराजिताम् ॥
ब्रह्मविष्णुशिरोरत्ननिघृष्टचरणाम्बुजाम् ।
शीतांशुशतसंकाशकान्तिसंतानहासिनीम् ॥
लौहित्यजितसिन्दूरजपादाडिमरागिणीम् ।
रक्तवस्त्रपरीधानां पाशाङ्कुशकरोद्यताम् ॥
रक्तपद्मनिविष्टां तु रक्ताभरणभूषिताम् ।
जगदाह्लादजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ॥
चतुर्भुजां त्रिनेत्रां तु पञ्चबाणधनुर्धराम् ।
कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलपूरिताननाम् ॥
महामृगमदोद्दामकुङ्कुमारुणविग्रहाम् ।
सर्वशृङ्गारवेशाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ॥

जगदानन्दजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ।
जगदाकर्षणकरीं जगत्कारणरूपिणीम् ॥
सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां सर्वशक्तिमयीं भजे ।

अथ दीपिनोविद्या तत्रैव ।

वाङ्मायाकमलाबीजं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ।
तारं लक्ष्मीं च वाग्बीजं मन्मथं भुवनेश्वरीम् ॥
तज्जप्त्वा च ततः पश्चाद्वाग्भवाख्यं समुच्चरेत् ।
प्रणवं भुवनेशानीं रमां कामं च वाग्भवम् ॥
कामराजं ततो जप्त्वा त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।
ॐकारं चापि वाग्बीजं रमां मन्मथमायया ॥
स्वप्नावतीं महादेवि जपेत् तत्र समाहितः ।
प्रणवं चाधरं कामं रमां च भुवनेश्वरीम् ॥
मधुमतीं ततो जप्त्वा मायाश्रीकूर्चबीजकम् ।
प्रणवाद्यं च देवेशि हंसबीजपुटीकृतम् ॥
एतद्बीजं समुच्चार्य शक्तिकूटं ततो जपेत् ।

जपनियमस्तु ।

जपेदादौ जपेत् पश्चात् सप्त वारानुक्रमात् ।
कामराजादिबीजानां दीपनं चैव कारयेत् ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वामकेश्वरतन्त्रे)

तत्र स्थित्वा जपेल्लक्षं साक्षाद्देवीस्वरूपधृक् ।
किंशुकैर्हवनं कुर्याद्दशांशं च वरानने ॥
कुसुम्भकुसुमैर्वाऽपि मधुरत्रयमिश्रितैः ।

(सिद्धान्तसारेऽपि)

लक्षमात्रं जपेद्विद्यां हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
होमं कुर्याद्दशांशेन किंशुकैर्मधुराप्लुतैः ॥

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्त्तुमर्हति—इति ।

अथ त्रिपुरभैरवमन्त्रः (वामकेश्वरे)

माया लक्ष्मीस्तथा हंसः प्रासादबीजमेव च ।
वह्निजायान्तको मन्त्रो भवेत् त्रैपुरभैरवः ॥
षडङ्गमूलमन्त्रेण वलिपूजादिकं तथा ।

अथ ध्यानम् ।

एकवक्त्रं त्रिनयनं चतुर्बाहुसमन्वितम् ।
दक्षिणे चाङ्कुशं खड्गं वामे खेटकपाशकौ ॥
धारयन्तं रक्तवर्णं वृषासनगतं विभुम् ।
ऊर्ध्वकेशं हारहारं कपालमालयाऽन्वितम् ॥
एवंविधं महादेवि ध्यायेत् त्रिपुरभैरवम् ।

अस्य पुरश्चरणं षोडशीपुरश्चरणसमानम् ।

अथ बालामन्त्रः (त्रिपुरासारसमुच्चये)

अथ त्रिलोकार्च्चितशासनाया
वक्ष्यामि बीजत्रयमम्बिकायाः ।
गोप्तव्यमेतत् कुलधर्मविद्भि-
रमुष्य हेतोर्निजसिद्धये च ॥
कान्तादिभूतपदगं कगतार्धचन्द्रं
दन्तान्तपूर्वजलधिस्थितवर्णयुक्तम् ।
एतज्जपं नरवरो भुवि वाग्भवाख्यं
वाचां सुधारसमुचां लभते स सिद्धिम् ॥
कान्तान्तं कुलपूर्वपञ्चमयुतं नेत्रान्तदण्डान्वितं
कामाख्यं गदितं जपान्मनुरयं साक्षाज्जगत्क्षोभकृत् ।
हन्तान्तेन युतं सदण्डिसकलं संमोहनाख्यं कुलं

सिध्यत्यस्य गुणाष्टकं खचरतासिद्धिश्च नित्यं जपात् ॥
ऋषिर्दक्षिणामूर्त्तिसंज्ञो महात्मा
भवेच्छन्द एतस्य मन्त्रस्य पङ्क्तिः ।
सरस्वत्यचिन्त्यप्रभावा प्रदिष्टा
बुधैर्देवता देववृन्दार्चिताङ्घ्रिः ॥
अमुष्य मन्त्रस्य रदान्तयुक्तं बीजं सदण्डं नकुलीशपूर्वम् ।
शक्तिस्तु सा खण्डलकर्णपूर्वसहार्धजैवातृकमाननान्तम् ॥

(मेरुतन्त्रे तु)

बालाबीजं वाग्भवं स्यात् तार्त्तीयं शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कामराजः स्याद्द्विरावृत्या षडङ्गकम्—इत्युकम् ॥

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

वर्णः शुक्लो मुनिभिस्त्रिभुवनमहितस्य मन्त्रराजस्य ।
आगमपारगमतिभिर्गान्धारोऽस्य स्वरो गदितः ॥
विद्यामूलोत्पत्तिरेषा मयोक्ता
ज्ञातव्येयं सर्वथा सिद्धिकामैः ।
देव्या शप्ता येन विद्येयमाद्या
पूर्वं तेन प्राणहीनाऽभवत् सा ॥

ज्ञातव्येत्यनेन तु जप्तव्येति सूचितम् ।
देव्या शप्तेत्यनेन च निषेधहेतुर्दर्शितः । शापनिर्मुक्तिप्रकारस्तु तत्रैवोक्तः ।

शिवशक्तिबीजमत एव शम्भुना
निहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः ।
अकुलं कुलोपरि च मध्यसाधरे
दहनं ततः प्रभृति सोर्जिताऽभवत् ॥

संज्ञाभेदमाह ।

भैरवीयमुदिता कुलपूर्वा देशिकैर्यदि भवेत् कुलपूर्वा ।

सैव शीघ्रफलदा भुवि विद्येत्युच्यते पशुजनेष्वतिगोप्या ॥

अकुलं हकारस्तत्पूर्वा चेद्भैरवी । कुलं सकारस्तत्पूर्वा चेद्विद्येत्युच्यत इत्यर्थः। आद्यन्तबीजयोर्वह्निबीजाभावाद्वक्ष्यमाणत्रिपुरभैरवीविद्यावैलक्षण्यमस्या बोद्धव्यम् ।

अस्या ध्यानमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

अभयं पुस्तकं बालां वरं च दधतीं करैः ।
अरुणामरुणाब्जस्थां रक्तवस्त्रां द्विजेशकाम् ॥

तन्त्रान्तरे तु ।

संस्मरेत् त्रिपुरां बालां शरच्चन्द्रसमप्रभाम्-इति ।

शुक्लवर्णयमुक्ता ।

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

पाशाङ्कुशाभयवरोद्यतपाणिपद्माम्...इत्यायुधविशेष उक्तः ।

अथ पुरश्चरणं (ज्ञानार्णवे)

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं हवनं चरेत् ।
तर्पणादि ततः कुर्यात् सर्वसौभाग्यभाग्भवेत्-इति ॥

इति श्रीविद्याप्रकरणम् ।

अथ भुवनेश्वरीविद्या (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये जगद्धात्रीमधुना भुवनेश्वरीम् ।
ब्रह्मादयोऽपि यां ज्ञात्वा लेभिरे श्रियमूर्जिताम् ॥
नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्धचन्द्रवान् ।
बीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥
ऋषिः शक्तिर्भवेच्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
कथिता सुरसङ्घेन सेविता भुवनेश्वरी ॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजेद्भुवनेशीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेन्मन्त्रविन्मन्त्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः ।
त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा बीजत्रयात्मकम् ।
मन्त्रं समुद्धरेन्मन्त्री त्रिवर्गफलसाधनम् ॥
षड्दीर्घभाजा मध्येन वाग्भवाद्येन कल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि मन्त्रवित् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्-
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रविलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसैर्मधुराप्लुतैः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री पीठे प्रागीरिते यजेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्बीजपुटिता माया विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।
मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेत् ॥
अङ्गानि जातियुक्तानि क्रमेण मनुवित्तमः ।

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं
रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संबिभ्रतीं शाश्वतीम् ।
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पालाशपुष्पैः स्वाद्वक्तैः पुष्पैर्वा राजवृक्षकैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अनन्तो विन्दुसंयुक्तो मायाब्रह्माग्नितारवान् ।
पाशादिस्त्र्यक्षरो मन्त्रः सर्ववश्यफलप्रदः ॥
ऋष्याद्याः पूर्वमुक्ताः स्युर्बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

वराङ्कुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् ।
बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्यभुग्जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
षट्सहस्रं प्रजुहुयाज्जपान्ते मन्त्रवित्तमः ॥
दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्भिः क्षीरभूरुहाम् ।
तत्सङ्ख्यया तिलैः शुद्धैः पयोऽक्तैर्जुहुयात् ततः ॥

अस्याः पुमान्महादेवः । तन्मन्त्रः पञ्चाक्षरस्तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति भुवनेश्वरीविद्याप्रकरणम् ।

## अथ भैरवीविद्या ।

तत्रादौ त्रिपुरभैरवीविद्या प्रोक्ता (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये परां विद्यां त्रिपुरामतिगोपिताम् ।
यां ज्ञात्वा सिद्धसङ्घानामधिपो जायते नरः ॥
वियद्भृगुहुताशस्थो भौतिको विन्दुशेखरः ।
वियत् तदादिकेन्द्राग्निस्थितं वामाक्षिविन्दुमत् ॥
आकाशभृगुवह्निस्थो मनुः सर्गेन्दुखण्डवान् ।
वाग्भवं प्रथमं बीजं कामबीजं द्वितीयकम् ॥

तृतीयं शक्तिबीजाख्यं त्रिभिर्बीजैरितीरिता ।
पञ्चकूटात्मिका विद्या वेद्या त्रैपुरभैरवी ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिश्छन्दः पङ्क्तिः समीरितम् ।
देवता देशिकैरुक्ता देवी त्रिपुरभैरवी ॥

तथा ।

षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

न्यासान्तराणि विस्तरभयादुपेक्षितानि पुरश्चरणस्यैवात्र निरूपणीयत्वात् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दीक्षां प्राप्य जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षजैः ॥
त्रिमध्वक्तैः प्रसूनैर्वा करवीरसमुद्भवैः ।

तत्त्वलक्षं लक्षत्रयम् ।

अथ चैतन्यभैरवीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

चैतन्यभैरवीमन्त्रस्त्र्यक्षरः कथ्यतेऽधुना ।
सहावैकारसंयुक्तो प्रथमं बीजमीरितम् ॥
सकला ह्रीँ समायुक्ता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
सहारा औसमायुक्ता विसर्गान्तास्तृतीयकम् ॥

अत्र त्रिभिर्बीजैर्द्विरावृत्त्या षडङ्गन्यासः कार्यः ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
मुकुटोर्ध्वलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बराञ्चिताम् ॥

पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्तकपालिनीम् ।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥
एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं पूर्वसिंहासने स्थिताम् ।
पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगाँश्चापि साधयेत् ॥

प्राग्वदिति त्रिपुरभैरवीवत् ।

अथ भुवनेश्वरभैरवीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भुवनेश्वरभैरवीम् ।
हसावैंकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥
हसकला ह्रीँ समेता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
हसावौकारसंयुक्तौ विसर्गान्तं तृतीयकम् ॥
षड्दीर्घान्वितमध्येन बीजेनोक्तं षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ।
चन्द्ररेखाजटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ॥
नानालङ्कारशुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
पाशाङ्कुशवराभीतीर्दधानां च शिवां श्रये ॥
चैतन्यभैरवीवत् स्याद्यद्यन्नोक्तमिहार्थवत् ।

अस्याः पुरश्चरणं तु त्रिपुरभैरवीपुरश्चरणवद्बोध्यम् ।

अथ कमलेश्वरीभैरवी तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भैरवीं कमलेश्वरीम् ।
हसस्थाने सहेत्युक्त्वा सर्वं मन्त्रादि पूर्ववत् ॥
राज्ञा ज्ञाता ततः शप्ता तुहिनागेऽभवन्नदी ।
त्यक्तस्तया वाममार्गो राजभीत्या तु मत्कृते ॥
यतो लब्धं तया दुःखं कलौ ख्यातिं गमिष्यति ।
प्रनष्टेषु च देवेषु प्रत्यक्षेयं भविष्यति ॥

अवर्णाश्चापि वर्णाश्च भविष्यन्ति वरप्रदाः ।
त्यक्त्वा मपञ्चकं पूजां कृत्वा ये जपतत्पराः ॥
अस्यास्तीरे पुरश्चर्या नवकात् संप्रसीदति ।
भुवनेशी भैरवी तु कृत्वा रूपान्तरं मम ॥
कार्यार्थं बहवः शिष्याः कौलिका वामिनः कृताः ।
तस्या ध्यानाद्यर्च्चनादि प्राग्वद्दक्षिणमार्गतः ॥

अथ संपत्प्रदाभैरवी (ज्ञानार्णवे)

यथाऽसौ त्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी ।
संपत्प्रदा नाम तस्याः शृणु निर्मलमानसे ॥
शिवश्चन्द्रो वह्निसंस्थो वाग्भवं तदनन्तरम् ।
कामबीजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं ततः ॥
पृथ्वीबीजं तु वह्न्याढ्यं तार्त्तीयं शृणु वल्लभे ।
शक्तिबीजे महेशानि शिववह्नी नियोजयेत् ॥
कुमार्याः परमेशानि हित्वा सर्गं तु वैन्दवम् ।
त्रिपुराभैरवी देवी महासंपत्प्रदा प्रिये ॥

त्रिपुरभैरवी विसर्गरहिता संपत्प्रदा भवति ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

ध्यानं यथा ।

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम् ।
किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥
गलद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालाविराजिताम् ।
नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥
मुक्ताहारलताराजत्पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥

पुस्तकं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।
वरदानरतां नित्यां महासंपत्प्रदां स्मरेत् ॥

अस्याः पुरश्चरणमपि पूर्ववद्बोध्यम् ।

अथ कौलेशभैरवी तत्रैव ।

संपत्प्रदाभैरवीवर्द्धिः कौलेशभैरवीम् ।
हसराद्यैव देवेशि त्रिषु बीजेषु पार्वति ॥
इयं तु सहराद्या स्याद्ध्यानपूजादिकं तथा ।

त्रिपुरभैरवीवदिति शेषः । आदिपदात् पुरश्चरणस्यापि संग्रहः ।

अथ कामेश्वरभैरवी तत्रैव ।

कामेश्वरी च रुद्राणी पूर्वसिंहासने स्थिता ।
एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम् ॥
तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
एतस्या एव तार्त्तीयं रुद्राणी परमेश्वरि ॥
ध्यानपूजादिकं देवि चैतन्यावत् समीरितम् ।

एवं पुरश्चरणमपि ।

अथ षट्कूटभैरवी (ज्ञानार्णवे)

डाकिनीराकिनीबीजे लाकिनीकाकिनीयुगम् ।
शाकिनीहाकिनीबीजे आहृत्य सुरसुन्दरि ॥
आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदीकारमण्डितम् ।
शक्रस्वरान्वितं देवि तार्त्तीयं बीजमालिखेत् ॥
विन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं शैलसम्भवे ।
द्विरावृत्त्या षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ॥

पुरश्चरणं तु पूर्ववत् ।

अथ नित्याभैरवी तत्रैव ।

एतस्या एव विद्यायाः षडर्णाः क्रमशः स्थिताः ।

विपरीतान् वद प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा ॥
न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।

अथ रुद्रभैरवी तत्रैव ।

शिवचन्द्रौ मादनान्तं पान्तं वह्निसमन्वितम् ।
शक्तिभिन्नं विन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ॥
संपत्प्रदाया भैरव्याः कामबीजं तदेव हि ।
सदाशिवस्य बीजं तु महासिंहासनस्य च ॥

सदाशिवबीजं प्रेतबीजम्

एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते ।

ऋष्यादिन्यासक्लृप्तिः पुरभैरवीवत् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम् ।
नानालङ्कारशुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ॥
वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससम् ।
त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च ॥
पिनाकं च शरान् देवीं पाशाङ्कुशयुगं क्रमात् ।
पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासनस्थिताम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

एवं पुरश्चरणमपि । अत्र भैरवो वटुकस्तन्मन्त्रपुरश्चरणं शिवप्रकरणे प्रोक्तम् ।

इति भैरवीप्रकरणम् ।

अथ छिन्नमस्ताविद्या ।

( विश्वसारे यामले च )

प्रचण्डचण्डिकां वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ।
यस्याः प्रसादमात्रेण शिव एव भवेन्नरः ॥
अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनमाप्नुयात् ।

कवित्वं च सुपाण्डित्यं लभते नात्र संशयः ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

लक्ष्मीं लज्जां ततो मायां मात्राद्वादशिकामथ ।
वज्रवैरोचनीये च माये फट्स्वाहया युते ॥
लक्ष्मीबीजं यदाऽऽद्यं स्यात् तदा श्रीः सर्वतोमुखी ।
लज्जाबीजेन चाद्येन वश्यतां यान्ति योषितः ॥
मायाबीजेन चाद्येन महापातकनाशनम् ।
मात्राद्वादशिकाबीजमाद्यं स्यान्मुक्तिदायकम् ॥

अत्र लज्जापदं कामबीजपरम् ।

तथा चोक्तम् ।

अत्र लज्जापदं देवि कामबीजपरं भवेत् ।
महाकालमतं प्रोक्तं मन्त्रोद्धारं शुभावहम्-इति ॥

मन्त्रोद्धारश्लोकस्थलज्जापदस्य तु मायाबीजपरत्वेऽपि न क्षतिः ।

श्रीबीजानन्तरं क्व चित् कामबीजस्य क्व चिन्मायाद्वयस्य च दर्शनात् । मायापदस्य क्व चित् कूर्चपरत्वमपि दृश्यते ।

सबिन्दुवामश्रुतियुग्वियन्माया प्रकीर्त्तिता-इति ।

मात्राद्वादशिका वाग्भवम् ।

(विश्वसारे)

ताराद्या षोडशी चान्या भवेत् सप्तदशाक्षरी ।
एषा विद्या महाविद्या भुक्तिमुक्तिकरी सदा ॥

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

प्रणवं च रमां लज्जां बीजद्वन्द्वं च वाग्भवम् ।
वज्रवैरोचनीये ह्रीँ ह्रीँ फट्स्वाहा घनाक्षरः ॥
भैरवोऽस्य मुनिः प्रोक्तः सम्राट्छन्द उदाहृतम् ।
छिन्नमस्ता भवेद्देवी वाममार्गेण सिद्धिदा ॥

(यामलादौ)

आसामृषिर्भैरवोऽहं नाम्ना तु क्रोधभूपतिः ।
सम्राट्छन्दो देवता च छिन्नमस्ता प्रकीर्त्तिता ॥
मायाबीजं स्वाहा शक्तिः कथिता ब्रह्मयोनिना ।
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥

(मेरौ)

आँ खड्गाय हृदाख्यातमीँ सुखड्गाय मस्तकम् ।
ऊँ वज्राय शिखा प्रोक्ता ऐँ पाशाय तनुच्छदम् ॥
औमङ्कुशाय नेत्रं स्यादश्वासुरक्षयाय च ।
हूँ हूँ नवार्णोऽस्त्रमन्त्रः सर्वे स्युः प्रणवादिकाः ॥
स्वाहान्ताः सर्व एवैते ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

भास्वन्मण्डलमध्यस्थां विपरीतरतस्थितौ ।
रतिकामौ समारूढां विकीर्णसकलालकाम् ॥
वामे करे निजशिरश्छिन्नं संदधतीं पुनः ।
गलान्निर्गतमस्रं च पिबन्तीं तन्मुखेन च ॥
डाकिनीवर्णिनीभ्यां च सखीभ्यां परिवारिताम् ।

अथ मन्त्रान्तरम् (महाकालसंहितायाम्)

अथातश्छिन्नमस्ताया मन्त्रं ते व्याहराम्यहम् ।
जिघृक्षयाऽपि यस्य स्युः साधकस्याष्ट सिद्धयः ॥
नातः परतरा काचिदुग्रा देवी भविष्यति ।
तस्मादसक्तैर्मनुजैर्न ग्राह्येयं कथं चन ॥
सिद्धिर्वा मृत्युरपि वा ह्वयोरेकतरं भवेत् ।
प्रणवं च रमाबीजं लज्जां वाग्भवमेव च ॥
वज्रवैरोचनीये च इत्येवं तत उद्धरेत् ।

क्रोधद्वयं ततश्चास्त्रं स्वाहान्तः षोडशाक्षरः ॥

अस्य न्यासादिकं पूर्ववत् कार्यम् ।

अथ ध्यानम्

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तत्र चेतो निवेशय ।
स्वनाभौ नीरजं ध्यायेत् शुद्धं विकशितं सितम् ॥
तत्पद्मकोशमध्ये तु मण्डलं चण्डरोचिषः ।
जपाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम् ॥
रजःसत्त्वतमोरेखायोनिमण्डलसन्निभम् ।
मध्ये तस्या महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥
छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम् ।
प्रसारितमुखीं भीमां लेलिहानोग्रजिह्विकाम् ॥
पिवन्तीं रक्तधारां च निजकण्ठसमुद्भवाम् ।
विकीर्णकेशपाशां तां नानापुष्पसमन्विताम् ॥
दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढपदस्थिताम् ॥
अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम् ॥
नागाङ्गदां नागकाञ्चीं नागनूपुरसंयुताम् ।
नागकुण्डलसंयुक्तामष्टनागसमन्विताम् ॥
विपरीतरतासक्तरतिकामोपरिस्थिताम् ।
डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
दक्षिणे वर्णिनीं ध्यायेद्वामपार्श्वे तु डाकिनीम् ।
वर्णिनीं लोहितश्यामां मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ॥
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ।

देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ॥
अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
डाकिनीं वामपार्श्वे तु कल्पान्तज्वलनोपमाम्* ॥
विद्युच्छटाभनयनां दन्तपङ्क्तिबलाकिनीम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां पीनोत्तुङ्गपयोधराम् ॥
महाघोरां महादेवीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ।
लम्बोदरीं कालरात्रीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥
लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ।
करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम् ॥
आभ्यां निषेव्यमाणां तु ध्यायेद्देवीं विचक्षणः ।
दुर्निरीक्ष्यां चेतसाऽपि सर्वकामफलप्रदाम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (यामले)

भुवनेशीं कामबीजं कूर्चबीजं च वाग्भवम् ।
भुवनेशीं कूर्चबीजं वाग्भवं तदनन्तरम् ॥
वज्रवैरोचनीये च हुँ फट् स्वाहा ततः परम् ।

मन्त्रान्तरम् ।

हृल्लेखावाग्भवं कूर्चं वाग्भवं कूर्चमेव च ।
अत्रान्ता छिन्नमस्ता या महाविद्या प्रकीर्त्तिता ॥
यस्याश्च सदृशी विद्या जगत्स्वपि न विद्यते ।
षड्वर्णोऽयं मनुः साक्षान्मोक्षदो नात्र संशयः ॥

एतदुभयस्य ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासः पूर्ववत् कार्यः ।

---

* जलदोपमामिति पाठः ।

ध्याने विशेषो यथा ।

अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।
प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा ।
नागाबद्धशिरोमणित्रिनयनां हृद्युत्पलालङ्कृतां
रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम् ॥
दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्रीं तथा खर्परं
हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नाऽपि सा वर्णिनी ।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्ती मुदा
नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया तथा सा सुरैः ॥
वामे कृष्णतनुस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा ।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी
शक्तिः साऽपि परात् परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वज्रवैरोचनीये च कूर्चयुग्मं सफट् ठठः ।
ताराद्यैषा महाविद्या सर्वतेजोऽपहारिणी ॥
न्यासध्यानादिकं सर्वं षोडशीवत् समाचरेत् ।

मन्त्रान्तरम् ।

वियच्छ्रोत्रयुतं विन्दुनादयुक्तं ततः प्रिये ।
एकाक्षरी महाविद्या त्रैलोक्यवशकारिणी ॥
द्विठान्तैषा महाविद्या त्रैलोक्यमोहकारिणी ।
ताराद्या च भवत्येषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
न्यासध्यानादिकं सर्वं पूर्ववत् परिकीर्त्तितम् ।

अथ पुरश्चरणं (विश्वसारे)

लक्षमेकं जपं कुर्यात् पुरश्चरणकर्मणि ।
महाविद्याविषये च जपं लक्षप्रमाणकम् ॥
सर्वत्र सर्वतन्त्रेषु कथितं पद्मयोनिना ।

(रुद्रयामलेऽपि)

पुरश्चर्यां जपेल्लक्षं दशांशं जुहुयात् ततः ।
घृताक्तैर्बिल्वकाष्ठैश्च होमकर्म समाचरेत् ॥
उदुम्बरसमिद्भिर्वा पालाशैर्वा समाचरेत् ।
अपामार्गसमिद्भिर्वा* होतव्यं मन्त्रसिद्धये ॥

(यामलान्तरेऽपि)--

देवीं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षसङ्ख्यं हविष्यभुक् ।
जुहुयात् तद्दशांशेन बिल्वकाष्ठैर्घृतप्लुतैः ॥

(वाराहीतन्त्रे तु)

शून्यागारे श्मशाने च वृषशून्ये शिवालये ।
त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं ततः सिद्धिर्भवेद्ध्रुवम्—इत्युक्तम् ॥

(गन्धर्वतन्त्रेऽपि)

दिवसे ब्रह्मचर्येण रात्रौ तु स्त्रीसहायवान् ।
मपञ्चकं पुरस्कृत्य महाशङ्खाक्षमालया ॥
जपेल्लक्षत्रयं देवि युगानुरूपतः कलौ ।
शतसाहस्रकं चान्यज्जपेच्छ्रद्धापरो नरः ॥
समाप्ते च त्रिलक्षे तु होमकर्म समाचरेत् ।
कलौ पापसमाकीर्णे सत्यधर्मविवर्जिते ॥
चतुर्गुणा क्रिया जप्या तेन सिद्धिर्न संशयः ।

दिवसे दक्षिणाचारेण रात्रौ वामाचारेण च पुरश्चरणविधिः कौलिकविषयः ।

---

* अपामार्गैः शमीभिर्वा इति २ पु० पा० ।

(मेरुतन्त्रे)

एवं पूजा प्रकर्त्तव्या जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।
पालाशैर्बिल्वजैर्वाऽपि जुहुयात् कुसुमैः फलैः ॥
तर्पणादि तत कुर्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ।

अत्र (विश्वसारो-) क्तषोडशाक्षरमन्त्रस्य पुरश्चरणमेकलक्षजपस्तन्त्रान्तरोक्तमन्त्रान्तराणां लक्षत्रयजपः। (मेरुतन्त्रो-) क्तसप्तदशाक्षरमन्त्रस्य लक्षचतुष्टयपरिमितो जप इति वदन्ति ।

(भूतभैरवे)

आदौ जप्त्वा भैरवस्य क्रोधस्यास्य मनुं जपेत् ॥
अस्थिमालां समादाय वज्रवैरोचनीमनुम् ।

क्रोधभैरवमन्त्रस्तत्रैवोक्तः ।

अथ क्रोधमनुं वक्ष्ये असाध्यं येन सिध्यति ।
बीजं हालाहलं गृह्य क्रोधबीजमतः परम् ॥
भयङ्करार्णमाभाष्यासिताङ्गं क्षतजत्विषम् ।
प्रलयाग्निमहाज्वालामाभाष्य मनुमुद्धरेत् ॥
एवमुच्चारितः क्रोधः स्वयमेव प्रसिध्यति ।
ततस्तु क्रोधमन्त्रेण षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥
विषं वज्रयुतं बोधि महाकालं न्यसेद्धृदि ।
विषं हरयुगं वज्रकूर्चाद्यं विन्यसेच्छिरः ॥
हालाहलं देहयुतं वज्रकालं न्यसेच्छिखाम् ।
विषमस्त्रयुतं वज्रमायुधं कवचं न्यसेत् ॥
ताराबीजयुतं वज्रं महाकालाय नेत्रयोः ।
विषं हनयुतं गृह्य दहगृह्य परान्वितम् ॥
क्रोधं वज्रयुतं तद्वत् सर्वदुष्टानथापरम् ।
ततो मारय वज्रास्त्रं दिग्बन्धान्तं षडङ्गकम् ॥

ध्यानमाह ।

तत्र मध्ये न्यसेद्भीमं तप्तज्वालासमाकुलम् ।
साट्टहासं महारौद्रं भिन्नाञ्जनचयोपमम् ॥
प्रत्यालीढं चतुर्बाहुं दक्षिणे *चक्रधारिणम् ।
तर्जनीं वामहस्तेन तीक्ष्णदंष्ट्राकरालिनम् ॥
कपालरत्नमुकुटं त्रैलोक्यस्य विनायकम् ।
आदित्यकोटिसंकाशमष्टनागविभूषितम् ॥
अपराजितपदाक्रान्तमुद्रावान् बलविष्टिभिः ।
अनामिकाद्वयं बद्ध्वा आकुञ्च्य तर्जनीद्वयम् ॥
कनिष्ठां मध्यमां चैव ज्येष्ठाङ्गुष्ठेन च क्रमात् ।
एवं मुद्राधरो भीमस्त्रैलोक्यासाध्यसाधकः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणं तु प्रचण्डचण्डिकापुरश्चरणवत् ।

जपहोमविधानं च शिवशक्त्योः समं विदुः—इति वचनात् ।

इति छिन्नमस्ताप्रकरणम् ।

अथ धूमावतीविद्या ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

दान्तौ सवामकर्णेन्दुधूमावत्यग्निगेहिनी ।
अष्टाक्षरी महाविद्या भजतां सर्वसिद्धिदा ॥

(मेरुतन्त्रे)

पिप्पलादो मुनिश्छन्दो निवृज्ज्येष्ठाऽस्य देवता ।

---

* वज्रधारिणम् इति ४ पु० पा० ।

† रमा कामस्तथा लज्जा वाग्भवं वज्रवैपदम् ।
रोचनीये लज्जाद्वन्द्वं मन्त्रः स्वाहासमन्वितः ॥
इयं सा षोडशी प्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ।
कथिताः सकला विद्याः सारात् सारतराः शुभाः ॥
२ पु० इदं श्लोकद्वयमधिकं दृश्यते ।

षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन धकारेण षडङ्गकम् ॥
आद्यबीजद्वयान्तस्थैः षड्वर्णैर्न्याससमाचरेत् ।
अङ्गुष्ठादौ षडङ्गेषु पुनर्देवीं विचिन्तयेत् ॥

ध्यानं यथा ।

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
विमुक्तकुन्तला दीर्घा विधवा विरलद्विजा ॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
शूर्पहस्ताऽतिरुक्षाक्षी धूतहस्ता वरान्विता ॥
प्रवृद्धरोमा तु भृशं जटिला कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं सदा कलहतत्परा ॥
एवंविधां सदा ध्यायेत् ततः कर्म समाचरेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेत् कृष्णचतुर्दश्यां शून्यागारे दिवा निशि ।
उपवासपरश्चैवमेकाहात् सिद्धिमाप्नुयात् ॥
यद्वा श्मशाने विपिने जपेल्लक्षं तु वाग्यतः ।
सोष्णीष आर्द्रवासाश्च तेन मन्त्रः प्रसिध्यति ॥
होमश्चात्र घृतेनैव तर्पणादि ततश्चरेत् ।
अथ वा प्रजपेल्लक्षं श्मशाने विगताम्बरः ॥
निशाभोजी दशांशेन तिलैर्हवनमाचरेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तन्त्रान्तरे ।

धूँबीजत्रितयं प्रोच्य धुरयुग्मं समुच्चरेत् ।
धूमावतीपदं प्रोच्य क्रौँस्वाहा फट्समन्विता ॥
मन्त्रः प्राथमिकः प्रोक्तो द्वितीयं शृणु सादरम् ।
प्रणवं धूम्रबीजं च धूमावतिपदं वदेत् ॥

देवदत्तो धावतीति स्वाहान्तो मनुराडयम्।
ऋषिः क्षपणकः ख्यातो गायत्री छन्द ईरितम्॥
धूमावती देवता च धूँ बीजं बीजमीरितम्।
स्वाहा शक्तिः समुच्चाटे विनियोगः प्रकीर्त्तितः॥
धाँषट्कैस्तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने।
काकारूढाऽतिकृष्णाभा भिन्नदन्ता विरागिणी॥
मुक्तकेशी सुधूम्राक्षी क्षुत्तृषार्त्ता रयातुरा।
चञ्चला चातिकामार्त्ता क्लिष्टा पुष्टा पिशङ्गिका॥
मलिना श्रमणी रक्ता व्यक्तगन्धा विरोधिनी।
धूतशूर्पाग्रहस्ता च ध्येया धूमावती परा॥

पुरश्चरणमाह।

लक्षं जपेन्महेशानि जगदुच्चाटनं चरेत्।

अथाघोरमन्त्रः (शारदायाम्)

अथाभिधास्ये विधिवदघोरास्त्रमनूत्तमम्।
यस्य संस्मरणादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः॥
"हुमन्तः स्तम्भने मन्त्रः क्रोमाकृष्टौ समासने।
वषडन्तः संवरणे नमोऽन्तो विषमासने॥
ग्रहचौररिपुध्वंसे हुँ क्रोमन्तो विधीयते।
शक्तान्तश्चाखिलेष्टास्यै क्षौमन्तो मारणे भवेत्॥
फडन्तो भूतसंहारे मन्त्रोऽयं कल्पपादपः।

(ईश्वरकल्पे) तु प्रस्फुरद्वयं बन्धद्वयं च। अयं मन्त्र एकचत्वारिंशदक्षर उद्धृतः (पदार्थादर्शटीकायाम्)"

मायास्फुरद्द्वयं भूयः प्रस्फुरद्द्वितयं ततः।
घोरघोरतरेत्यन्ते तनुरूपपदं पुनः॥

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः केष्वप्यन्यपुस्तकेषु नोपलभ्यते।

चटयुग्मं तदन्ते स्यात् प्रचट द्वितयं ततः ।
कहयुग्मं वमद्द्वन्द्वं* ततो बन्धयुगं पुनः ॥
घातयद्वितयं वर्म फडन्तः समुदाहृतः ।
एवं पञ्चाशदर्णोऽयमघोरास्त्रमहामनुः ॥
अघोरोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ।
अघोररुद्रः संदिष्टो देवता मन्त्रवित्तमैः ॥
हृदयं पञ्चभिः प्रोक्तं शिरः षड्भिरुदाहृतम् ।
शिखा दशभिराख्याता तावद्भिः कवचं मतम् ॥
वसुवर्णैः स्मृतं नेत्रमाशार्णैरस्त्रमीरितम् ।

ध्यानम् ।

सजलघनसमाभं भीमदंष्ट्रं त्रिनेत्रं
भुजगधरमघोरं रक्तवस्त्राङ्गरागम् ।
परशुडमरुखड्गाखेटकं बाणचापौ
त्रिशिखनरकपाले बिभ्रतं भावयामि ॥

अथास्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं घृतसिक्तैस्तिलैः शुभैः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये ॥

इति धूमावतीप्रकरणम् ।

अथ वगलामुखीविद्या ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि स्तम्भनीं वगलामुखीम् ।
तारं मायां समुच्चार्य वदेच्च वगलामुखि ॥
तदग्रे सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ।
स्तम्भयेति पदं जिह्वां कीलयेति ततः परम् ॥

* वहयुग्मं वदद्वन्द्वम् इति २ पु० पा० ।

बुद्धिं विनाशय ह्रीँ ॐ स्वाहा षट्त्रिंशत्वर्णकः ।
नारायणो मुनिस्त्रिष्टुपछन्दश्च वगलामुखी ॥
देवी बीजं तु ह्लेखा स्वाहा शक्तिः समीरिता ।
विनियोगोऽस्य विख्यातः पुरुषार्थचतुष्टये ॥
ह्लेखा हृदयं प्रोक्तं शिरश्च वगलामुखी ।
शिखा तु सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥
स्तम्भयेति च वर्मोक्तं जिह्वां कीलय नेत्रकम् ।
बुद्धिं विनाशयास्त्रं स्यात् षडङ्गन्यास ईरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

गम्भीरां च मदोन्मत्तां तप्तकाञ्चनसन्निभाम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥
मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च वज्रकम् ।
पीताम्बरधरां सान्द्रवृत्तपीनपयोधराम् ॥
हेमकुण्डलभूषां च पीतचन्द्रार्धशेखराम् ।
पीतभूषणभूषां च स्वर्णसिंहासनस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हरिद्राग्रथिता माला पीताम्बरधरः स्वयम् ।
पीतासनः स्मरेत् पीतमयुतं जपमाचरेत् ॥
दशांशेन कृतो होमः पीतद्रव्यैः प्रतर्पयेत् ।
सर्वं पीतोपचारेण मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः ॥

वज्रयोगिनीमिश्रकृतसंग्रहे तु ।

पीताम्बरधरो भूत्वा पूर्वाशाभिमुखस्थितः ।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हरिद्राग्रन्थिमालया ॥
ब्रह्मचर्ययुतो नित्यं प्रयतो ध्यानतत्परः ।

प्रियङ्गुपायसेनापि पीतपुष्पैश्च होमयेत्—इत्युक्तम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (यामले)

वह्निहीनेन्द्रयुग्माया वगलामुखि सर्वयुक् ।
दुष्टानां वाचमित्युक्त्वा मुखं स्तम्भय कीर्त्तयेत् ॥
जिह्वां कीलय बुद्धिं च विनाशय पदं वदेत् ।
पूर्वबीजं ततस्तारं वह्निजायावधिर्भवेत् ॥
ताराधिका चतुस्त्रिंशदक्षरा वगलामुखी ।
नारायणो* मुनिश्छन्दः पङ्क्तिः श्रीवगलामुखी ॥
देवता मन्त्रगं बीजं शक्तिः पावकसुन्दरी ।
सर्वशत्रुमुखस्तम्भे विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गन्यास ईरितः ।

अथ ध्यानम् ।

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदी-
सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
†पीताम्बरां कनकभूषणमाल्यशोभां
देवीं भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
‡पदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

जपमाला च देवेशि हरिद्राग्रन्थिसम्भवा ।
पीतासनसमारूढः पीतध्यानपरायणः ॥

---

* नारदोऽस्य मुनिरिति क्वचित् पाठः ।

† पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीम् इत्यपि पाठो बहुत्र श्रूयते ।

‡ गदाभिघातेन इति २ पु० पा० ।

पीतपुष्पार्चनं नित्यमयुतं जपमाचरेत् ।
तद्दशांशकृतो होमः पीतद्रव्यैः सुशोभनैः ॥

अस्याः पुमान् मृत्युञ्जयस्तन्मन्त्रपुरश्चरणं च शिवप्रकरण एवोक्तम् ।

इति बगलामुखीप्रकरणम् ।

अथ मातङ्गीविद्या ।

(यामले)

अथ वक्ष्ये महादेवीं मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम् ।
अस्याः सेवनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम् ॥
प्रणवं च ततो मायां कामबीजं च कूर्चकम् ।
मातङ्गी ङेयुता चास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिर्विराट्छन्द उदीरितम् ।
मातङ्गी देवता देवी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ कुर्यान्मन्त्री समाहितः ।
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां सद्रत्नसिंहासने
संस्थां रत्नविचित्रभूषणयुतां संक्षीणमध्यस्थलाम् ।
आपीनस्तनमण्डलां स्मितमुखीं ध्यायेद्दधन्तीं क्रमाद्-
वेदैर्बाहुभिरङ्कुशासिलतिके पाशं तथा खेडकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

पुरश्चरणकाले तु षट्सहस्रं जपेन्मनुम् ।
तद्दशांशं हुनेदाज्यैः शर्करामधुभिः सह ॥
ब्रह्मतरूद्भवैः काष्ठैः साधकः शक्तिभिः सह ।
एवं पुरस्क्रियां कृत्वा प्रयोगविधिमाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (मेरुतन्त्रे)

अथोच्छिष्टां प्रवक्ष्यामि मातङ्गीं गोकुवर्णकाम् ।
नम उच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गीति पदं वदेत् ॥
सर्ववशङ्करि स्वाहा मन्त्रोऽयं मोहयेज्जगत् ।
छन्दो निवृत् सगायत्रं मुनी नारदतुम्बुरौ ॥
देवता चात्र मातङ्गी द्वित्रित्रिरसाक्षिभिः ।
अङ्गानि स्युर्मन्त्रवर्णैस्ततो ध्यायेद्धृदम्बुजे ॥

ध्यानं यथा ।

कृष्णाम्बरां यावकार्द्रचरणामुन्नतस्तनीम् ।
मुक्ताप्रवालमालाढ्यां शङ्खकुण्डलधारिणीम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि मातङ्गीमन्त्रमद्भुतम् ।
कामिनी रञ्जिनी स्वाहाऽष्टाक्षरोऽयमुदीरितः ॥
ऋषिः संमोहनश्छन्दो निवृत् प्रोक्ताऽस्य देवता ।
सर्वसंमोहिनी चाङ्गं द्विरावृत्तिपदैर्भवेत् ॥

अथ ध्यानम्

श्यामाङ्गीं वल्लकीं दोर्भ्यां वादयन्तीं सुभूषणाम् ।
चन्द्रावतंसां विविधैर्गायनैर्मोहतीं जगत् ॥

अनयोः पुरश्चरणम् ।

प्रजपेदयुतद्वन्द्वं दशांशं जुहुयात् ततः ।
मधूकजैस्त्रिमध्वक्तैः सर्वं संमोहयेज्जगत् ॥

अथ राजमातङ्गीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि चतुष्पञ्चाशदक्षरम् ।
ॐ ह्रीँ नमश्च ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते ॥
जये च विजये गौर्यंबे गान्धारिपदं वदेत् ।

त्रिभुवनवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषेति च ॥
वशङ्करि सुसु दुदु घेघे वावाऽग्निगेहिनी ।
अजो मुनिस्तथा छन्दो निवृद्गायत्रमीरितम् ॥
देवता राजमातङ्गी षडङ्गादि तु मायया ।

अथ ध्यानम् ।

"अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे ।
स्वर्णप्राकारसंवीते मणिरत्नविनिर्मिते ॥
कदम्बबिल्वकह्लारे कल्पवृक्षोपशोभिते ।
वेदिमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे" ॥
अष्टपत्रं महापद्मं केशराढ्यं सकर्णिकम् ।
तन्मध्ये तु त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं ततो बहिः ॥
पुनः षोडशपत्रं स्यात् तद्बाह्ये स्याच्चतुर्दलम् ।
वेदास्त्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥
तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम् ।
कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरैः ॥
प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्ररेखावतंसिकाम् ।
ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम् ॥
किञ्चित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्ज्वलाम् ।
वलीतरङ्गमध्याभां रोमराजीविराजिताम् ॥
सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम् ।
नानामणिगणोन्नद्धकटिसूत्रैरलङ्कृताम् ॥
वलयै रत्नखचितैः केयूरैर्मणिभूषितैः ।

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

भूषितां द्विभुजां बालां मदाघूर्णितलोचनाम् ॥
आपीनमण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम् ।
प्रलम्बवर्णाभरणां कर्णोत्तंसविराजिताम् ॥
तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम् ।
चतुःषष्टिकलारूपां पार्श्वस्थशुकसारिकाम् ॥
कोटिबालार्कसंकाशां जपाकुसुमसन्निभाम् ।
एवं वा पीतवर्णां वा ध्यायेन्मातङ्गिनीं पराम् ॥

"अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं होमयेत् तद्दशांशतः ।
बन्धूककुसुमैर्मन्त्री मधुरत्रयलोलितैः" ॥

अथ सुमुखीमन्त्रः (गुह्यातन्त्रे)

शृणु मन्त्रं महादेवि यथावत् कथयामि ते ।
दद्यादुच्छिष्टशब्दं तु तथा चाण्डालिनीति च ॥
सुमुखीति ततो देवीं कीर्त्तयेत् तदनन्तरम् ।
महापिशाचिनी तस्मान्मायाबीजमनन्तरम् ॥
विन्दुनादसमायुक्तं ठकारत्रितयं ततः ।
सविसर्गं महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥
इयं विद्या महाविद्या सर्वपापप्रणाशिनी ।
स्वर्गदा मोक्षदा विद्या सर्वसौभाग्यदा* तथा ॥
सदोच्छिष्टमुखो भूत्वा स्मरेद्देवीं जयप्रदाम् ।
तदाऽऽचान्तो भवेद्देवि विनैवाचमने कृते ॥
दुर्भगा सुभगा नूनं दुःखिता सुखिनी भवेत् ।

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

* राज्यसौभाग्यदा इति २-४ पु० पा० ।

वन्ध्याऽपि लभते पुत्रं शतहायनजीवनम् ॥
दुर्बलो बलमाप्नोति मूर्खो विद्यामवाप्नुयात् ।
यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात् तां तामवाप्नुयात् ॥
विधानं चात्र वक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
नारिदोषो न वा विघ्नो नाशौचं नियमो न च ॥
यस्य तिष्ठति मन्त्रोऽयं न च विघ्नैः स वाध्यते ।

तथा ।

अजो मुनिः समाख्यातश्छन्दो गायत्रमस्य तु ।
देवता सुमुखी प्रोक्ता मायया तु षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

शवोपरिसमासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम् ।
रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविभूषिताम् ॥
षोडशाब्दां च युवतीं पीनोन्नतपयोधराम् ।
कपालकर्त्रिकाहस्तां परज्योतिःस्वरूपिणीम् ॥
वामदक्षिणयोगेन ध्यायेन्मन्त्रविदुत्तमः ।
उच्छिष्टेन वलिं दत्वा जपेत् तद्गतमानसः ॥
उच्छिष्टेनैव कर्त्तव्यो जपोऽस्याः सिद्धिमिच्छता ।
उच्छिष्टजपमानस्य जायन्ते सर्वसिद्धयः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपः ।

येषां जपे च होमे च················ इत्यादिपूर्वोक्तवचनात् ।

अथ वश्यमातङ्गीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि वश्यमातङ्गिकामनुम् ।
ॐ राजमुखि राजाधिमुखि वश्यमुखीति च ॥
मायां श्रीँ क्लीँ देवदेवि महादेवि ततो वदेत् ।
देवाधिदेवि सर्वेति जनस्य मुखमुच्चरेत् ॥

मम वशं कुरु द्वन्द्वं स्वाहान्तोऽङ्ककृतार्णकः ।
दिक्सप्तकृतदेवेषुमन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम् ॥
विज्ञेयं राजमातङ्गीतुल्यं पूजाजपादिकम् ।
प्रयोगाँश्चापि जानीयाद्विशेषाद्वशकृत् त्वियम् ॥

मन्त्रान्तरमाह ।

माया नमो हिलिद्वन्द्वं चण्डमातङ्गिनीति च ।
स्वाहेति तिथिवर्णोऽस्या न्यासपूजादिकं भवेत् ॥
राजमातङ्गिकातुल्यं जपश्चायुतसङ्ख्यकः ।
घृतपायसहोमश्च प्रयोगाद्यं च पूर्ववत् ॥

अथ कर्णमातङ्गीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कर्णमातङ्गिकामनुम् ।
वाग्भवं हृदयं चाथ श्रीमातङ्गिपदं वदेत् ॥
अमोघे सत्यवादिनि मम कर्णेपदं ततः ।
अवतरपदं द्वेधा सत्यं कथय युग्मकम् ॥
एह्येहि श्रीँ च मातङ्ग्यै नमस्त्र्यब्ध्यर्णको मनुः ।
अङ्गानि वाग्भवेनात्र पूजाद्यं च कृताकृतम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपः पायसाद्यैः होमः सिद्धो भवेन्मनुः ।
कर्णे तु कथयेद्देवी पृच्छकस्य शुभाशुभम् ॥

इति मातङ्गीप्रकरणम् ।

अथ लक्ष्मीविद्या ।

(शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान् ।
यस्याः कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्धते ॥
वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम् ।

बीजमेतच्छ्रियः प्रोक्तं चिन्तारत्नमिवापरम् ॥
ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं जपेन्मन्त्री दीक्षितो विजितेन्द्रियः ।
श्रियमभ्यर्चयेन्नित्यं सुगन्धिकुसुमादिभिः ॥
तत्सहस्रं च जुहुयात् कमलैर्मधुरोक्षितैः ।
जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुरान्वितैः ॥
वैल्वैः फलैर्वा जुहुयात् त्रिभिर्वा साधकोत्तमः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं वनिता विष्णोर्माया मकरकेतनः ।
चतुर्बीजात्मको मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥
अङ्गानि कुर्याद्दीर्घाढ्यै रमाबीजेन तत्त्ववित् ।

अथ ध्यानम् ।

माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां सदा ।
हस्ताब्जैर्वरदानमब्जयुगलाभीतीर्दधानां हरेः
कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजाननाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं हविष्याशी जपेदन्ते सरोरुहैः ।

जुहुयादरुणैः फुल्लैस्तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

दीर्घायादिर्विसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरा ।
वान्ते सिन्यै प्रिया वह्नेर्मनुः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥
ऋषिर्दक्षो विराट् छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।
देव्यै हृदयमाख्यातं पद्मिन्यै शिर ईरितम् ॥
विष्णुपत्न्यै शिखा प्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम् ।
अस्त्रं कमलरूपिण्यै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ॥
अङ्गमन्त्राः समुद्दिष्टा ध्यायेद्देवीमनन्यधीः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती
दानं पद्मयुगाभयं च वपुषा सौदामिनीवल्लभा ।
मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी
पायाद्वः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेदेनं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री मधुराक्तैः सरोरुहैः ॥

अथ माहलक्ष्मीमन्त्रस्तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः ।
तार्त्तीयं च जगत्पार्श्वो वह्निबीजसमुज्ज्वलः ॥
अर्घीशाढ्यो भृगुस्त्यै हृन्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
महालक्ष्म्याः समुद्दिष्टस्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः ॥
ऋषिर्विद्या समुद्दिष्टो गायत्री छन्द ईरितम् ।
देवता जगतामादिर्महालक्ष्मीः समीरिता ॥
हस्तौ संशोध्य मन्त्रेण तारादि हृदयान्तिकम् ।

बीजानां पञ्चकं न्यस्येदङ्गुलीषु यथाक्रमम् ॥
मन्त्रशेषं न्यसेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि ।
मूर्धादि चरणं यावन्मन्त्रेण व्यापकं चरेत् ॥
मूर्धाक्षिवक्षोगुह्याङ्घ्रिः पञ्च बीजानि विन्यसेत् ।
शेषान् न्यसेत् सप्तवर्णान् हृदये सप्तधातुषु ॥
अङ्गानि पञ्चभिर्बीजैरस्त्रं शिष्टाक्षरैर्भवेत् ।
ज्ञानैश्वर्यादिभिर्युक्तैश्चतुर्थ्यन्तैः सजातिभिः ॥
ज्ञानमैश्वर्यंशक्तिं च बलवीर्यं स्वतेजसा ।
ज्ञानैश्वर्यादयः प्रोक्ताः षट् क्रमादङ्गयोजिताः ॥

ध्यानमाह ।

एवं न्यस्तशरीरोऽसौ स्मरेदुद्यानमद्भुतम् ।
चम्पकाशोकपुन्नागपाटलैरुपशोभितम् ॥
लवङ्गमाधवीविल्वदेवदारुनमेरुभिः ।
मन्दारपारिजाताद्यैः कल्पवृक्षैः सुपुष्पितैः ॥
चन्दनैः कर्णिकारैश्च मातुलुङ्गैः सवञ्जुलैः ।
दाडिमीलकुचाङ्कोलैः पूगैः कुरवकैरपि ॥
कदलीकुन्दमन्दारनारिकेलैरलङ्कृतम् ।
अन्यैः सुगन्धिपुष्पाद्यैर्वृक्षखण्डैश्च मण्डितम् ॥
मालतीमल्लिकाजातिकेतकीशतपत्रकैः ।
यावन्तीतुलसीनन्द्यावर्त्तैर्दमनकैरपि ॥
सर्वर्त्तुकुसुमोपेतैर्नमद्भिरुपशोभितम् ।
मन्दमारुतसम्भिन्नं कुसुमामोददिङ्मुखम् ॥
तस्य मध्ये सदा फुल्लैः कुसुमोत्पलपङ्कजैः ।
सौगन्धिकैश्च कह्लारैर्नवैः कुवलयैरपि ॥

हंससारसकारण्डभ्रमरैश्चक्रनामभिः ।
अन्यैः कलकलाराविविहङ्गैरुपशोभिते ॥
महासरसि तन्मध्ये पुलिनेऽतिमनोहरे ।
परितः पारिजाताद्यमण्डितं मणिकुट्टिमम् ॥
उद्यदादित्यसंकाशभास्वरं शशिशीतलम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारशोभितम् ॥
रत्नोपक्लप्तसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
नवरत्नसमाक्लप्तं तुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
हेमदण्डं शिखालम्बि ध्वजावलिपुरस्कृतम् ।
नवरत्नसमाबद्धस्तम्भराजिविराजितम् ॥
सहस्रदीपसंयुक्तदीपदण्डविराजितम् ।
तप्तहाटकसंक्लप्तवातायनमनोहरम् ॥
नानारत्नांशुकोद्बद्धसुवर्णशतकोटिभिः ।
किङ्किणीमालिकायुक्तपताकाभिरलङ्कृतम् ॥
जातरूपमये रत्नविचित्रैरतिविस्तृतैः ।
माणिक्यवज्रवैदूर्यस्वर्णमालावलीयुतैः ॥
अन्तरान्तरसम्बद्धरत्नैर्दृष्टिमनोहरैः ।
विचित्रैश्चित्रबद्धैश्च वितानैरुपशोभितम् ॥
सर्वरत्नसमायुक्तं हेमकुट्टिममुज्ज्वलम् ।
केतकीमालतीजातीचम्पकोत्पलकेसरैः ॥
मल्लिकातुलसीवाशानन्द्यावर्त्तकदम्बकैः ।
एतै रम्यैश्च कुसुमैरलङ्कृतमहीतलम् ॥
अब्जकाश्मीरकस्तूरीमृगनाभितमालकैः ।

चन्दनागुरुकर्पूरैरामोदितदिगन्तरम् ॥
एवं सञ्चिन्त्य मनसा मण्डपं सुमनोहरम् ।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥
तस्याधस्तात् स्मरेन्मन्त्री रत्नसिंहासनं महत् ।
तस्मिन् सञ्चिन्तयेद्देवीं महालक्ष्मीं मनोहराम् ॥
बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलां
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालैः करैर्मञ्जरीम् ।
पद्मौ कौस्तुभरत्नमप्यविरतं सम्बिभ्रतीं सुस्मितां
फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत् परां देवताम् ॥
शिञ्जन्मञ्जीरसंशोभिपादाम्भोजविराजिताम् ।
नवरत्नगणाकीर्णकाञ्चीदामविभूषिताम् ॥
मुक्तामाणिक्यवैदूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम् ।
विभ्राजमानां मध्येन वलित्रितयशोभिताम् ॥
जाह्नवीसलिलावर्त्तशोभिनाभिविभूषिताम् ।
पटीरपङ्ककर्पूरकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम् ॥
वारिवाहविनिर्मुक्तमुक्तादामगरीयसीम् ।
बिभ्रतीमुत्तरासङ्गं दुकूलपरिकल्पितम् ॥
तप्तकाञ्चनसम्बद्धवैदूर्याङ्गदभूषणाम् ।
पद्मरागस्फुरत्स्वर्णकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम् ॥
माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकाभिरलङ्कृताम् ।
तप्तहाटकसंक्लृप्तमालाग्रैवेयशोभिताम् ॥
विचित्रविविधाकल्पां कम्बुसंकाशकन्धराम् ।
उद्यद्दिनकराकारमणिताटङ्कमण्डिताम् ॥

रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णपूरोपशोभिताम् ।
जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम् ॥
दाडिमीफलबीजाभदन्तपङ्क्तिविभूषिताम् ।
कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभाननाम् ॥
पुण्डरीकदलाकारनयनत्रयशोभिताम् ।
भ्रूलताजितकन्दर्पवरकार्मुकविभ्रमाम् ॥
विकशत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम् ।
ललाटकान्तिविभवविजितार्धसुधाकराम् ॥
सान्द्रसौरभसंपन्नकस्तूरीतिलकाङ्किताम् ।
मत्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम् ॥
पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधम्मिल्लबन्धनाम् ।
अनर्घरत्नघटितमुक्काटङ्कितमस्तकाम् ॥
सर्वलावण्यवसतिं भवनं विभ्रमश्रियः ।
तेजसां जन्मभूमिं तां महालक्ष्मीं विचिन्तयेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा ततो देवीं हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
भानुलक्षं जपेन्मन्त्री दशांशं जुहुयात् तिलैः ॥
जुहुयात् श्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतं ततः ।
तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैः सुगन्धैरयुतद्वयम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

जपेद्भास्करलक्षं च नियताशी यतव्रतः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयाद्घृतैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥
पद्मै रमाद्रुमफलैः प्रत्येकमयुतं हुनेत् ।
सुशीतैः शुचिभिस्तोयैस्तर्पयेदयुतद्वयम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

शम्भुपत्नी श्रिया रुद्धा कर्मौ भगवती मही ।
ब्रह्माऽऽदित्यो धरा दीर्घा लकारो भगवान् मरुत् ॥
प्रसीदयुगलं भूयः श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी ।
महालक्ष्मी नमोऽन्तः स्यात् प्रणवादिरयं मनुः ॥
सप्तविंशत्यक्षराढ्यः प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः ।
कमले हृदयं प्रोक्तं शिरः स्यात् कमलालये ॥
शिखा प्रसीद तेनैव कवचं चतुरक्षरैः ।
अस्त्रमेतैः पदैः कुर्याच्छ्रीबीजपुटितैः पृथक् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतीं सौन्दर्यवारां निधिं
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम् ।
हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत् प्रियां शार्ङ्गिणः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् फलैर्बिल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ।
दशांशं संस्कृते वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना ॥

तत्रान्तरे ।

मन्दाक्षमिन्दिरारुद्धं त्र्यक्षरोऽयं महामनुः ।
हृदन्तः पञ्चवर्णोऽस्य सर्वमेकार्णवद्भवेत् ॥

अथ साम्राज्यलक्ष्मीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये गणेशेन काशीराज्याप्तये मम ।
शाम्बादित्यस्य रक्षोदिग्भागे लक्ष्मीरुपासिता ॥
साम्राज्यलक्ष्मीर्विख्याता गतराज्यप्रदायिनी ।
लक्ष्मीविनायकस्तत्र प्रसिद्धोऽसौ गजाननः ॥

दक्षिणेनैव मार्गेण तस्याः सिद्धिर्न वामतः ।
सकारं च हकारं च कलरा वर्णपञ्चकम् ॥
ईकारस्वरसंयुक्तं प्रथमं कूटमुच्यते ।
हँ बीजं तु द्वितीयं स्यात् प्रोक्तोऽयं द्व्यक्षरो मनुः ॥
ऋषिर्हरिश्च गायत्री छन्दो लक्ष्मीश्च मोहिनी ।
साम्राज्यदा देवतोक्ता कूटं बीजं प्रकीर्त्तितम् ॥
शक्तिः श्रीँ च षडङ्गानि षड्भिर्दीर्घैः समाचरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

अतशीपुष्पसंकाशां रत्नभूषणभूषिताम् ।
शङ्खचक्रगदापद्मशार्ङ्गबाणधरां करैः ॥
षड्भिः कराभ्यां देवेशीं वरदाभयशोभिताम् ।
एवमष्टभुजां ध्यात्वा त्रिलक्षं प्रजपेत् सुधीः ॥
तद्दशांशेन पद्मैस्तु हुनेत् साम्राज्यसिद्धये ।
एवमाराधयेल्लक्ष्मीं साम्राज्यं स्यादसंशयम् ॥

नारायणमन्त्रस्तु तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति लक्ष्मीविद्याप्रकरणम् ।

अथ नीलक्रमादयः ।

(शक्तिसङ्गमवीरतन्त्रसारसंग्रहेषु)

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि रहस्यातिरहस्यकम् ।
दशानामपि विद्यानां दश वै ये क्रमाः प्रभो ॥
पुरैव कथिताः स्वामिंस्तान् क्रमान् वद संप्रति ।

शिव उवाच ।

रहस्यातिरहस्यं च कथ्यते तव भक्तितः ।
महानीलक्रमेणैव कालिका सिद्धिदायिनी ॥

महानीलक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्त्तितः ।
सकलो निष्कलश्चेति तं क्रमं शृणु पार्वति ॥
खड्गहस्तः शिरोन्यस्तः सर्वदा मुक्तकुन्तलः ।
सदा मांसासवोल्लासी विजयाघूर्णलोचनः ॥
सिन्दूरतिलकं भाले पाणौ तु मदिरारसम् ।
रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तेः प्रपूजनम् ॥
योनिचुम्बनकं कर्म शक्तेरालिङ्गनं तथा ।
न करोति नरो यस्तु स कथं तव पूजकः ॥
ताम्बूलयोनिचक्रं च मुण्डमालां शवासनम् ।
सिन्दूरं खड्गकं चैव संविदासवयो रसम् ॥
एतान् विहाय यः कश्चित् कालीं साधितुमुद्यतः ।
इह क्षोभमवाप्नोति परत्र नरकं व्रजेत् ॥
कोट्यर्बुदयुगैर्देवि न हि सिध्यति कालिका ।
सिन्दूरविन्दुर्भ्रूमध्ये स्वयम्भूसुनिपत्रकम् ॥
रक्तचन्दनकं वाऽपि त्रिपुण्ड्रं च ततोपरि ।
कुर्वन् दले कज्जलस्य विन्दुर्देयो महेश्वरि ॥
महानीलक्रमे देवि तिलकः परिकोर्त्तितः ।
श्मशानशायी मांसाशी संविदानन्दमानसः ॥
स्त्रियं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् सर्वकालं जपं चरेत् ।
वेश्यारतः श्मशानस्थो मृदुन्त्रूडकसंयुतः ॥
दन्ताक्षमालया देवि गजदन्तेन मेरुणा ।
मालां कृत्वा जपेद्देवि सदा ताम्बूलचर्वकः ॥
कपालमालाभरणो रामाचुम्बनतत्परः ।

शक्त्यानन्दो नेत्रयुगे मुखे हाला गृहाङ्गणे ॥
वेश्या बालाकरे माला शक्तिलीला भगाम्बुजे ।
योनिसञ्चुम्बनं कृत्वा सर्वकाले जपं चरेत् ॥
शक्तेर्भगं नमस्कार्यं सर्वमेतच्चराचरम् ।
अधिकारी प्रहृष्टात्मा स्त्रीभक्तो विजितेन्द्रियः ॥
ईदृग्विधो नरो देवि महानीलक्रमो मतः ।
राजदन्तमयी माला द्विरदोष्ट्राश्वसम्भवा ॥
अशक्तानां निष्कलः स्यात् तं क्रमं शृणु पार्वति ।
पीताया दुग्धकं पित्वा सच्चिदान्दमानसः ॥
स्फाटिकीं मालिकां कृत्वा विहारे जपमाचरेत् ।
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
न जपे कालनियमो महामन्त्रस्य साधने ।
यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
भ्रान्तिस्तत्र न कर्त्तव्या स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।
मृदु कोमलकं देवि चूडकं वाऽप्यचूडकम् ॥
शवं वीरासनं कृत्वा योनित्वगासनं च वा ।
कामरूपासनं देवि सुरतासनमेव च ॥
सिन्दूरासनकं देवि पर्वतासनमेव च ।
प्रयोगासनकं देवि महाप्रयोगासनं तथा ॥
श्रीमुण्डसुरतं वाऽपि श्रीवीरसुरतं च वा ।
पञ्चवीरासनं देवि सुरेन्द्रादिदिशां क्रमात् ॥

इति नीलक्रमः ।

अथ महाचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि महाचीनक्रमं परम् ।

शिव उवाच ।

महाचीनक्रमो देवि कथ्यते सांप्रतं मया ।
महाचीनक्रमेणैव तारा शीघ्रफलप्रदा ॥
ब्रह्मचीनो वीरचीनो दिव्यचीनस्तृतीयकः ।
महाचीनो निष्कलश्च चीनः पञ्चविधो मतः ॥
महाचीनक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्त्तितः ।
सकलो निष्कलश्चेति सकलो बौद्धगोचरः ॥
निष्कलो ब्राह्मणानां च द्वितीयः परिकीर्त्तितः ।

तथा ।

स्नानादि मानसं शौचं मानसः प्रवरो जपः ।
पूजनं मानसं दिव्यं मानसं तर्पणादिकम् ॥
मानसो नियमः प्रोक्तो मानसं दन्तधावनम् ।
सर्व एव शुभः कालो नाशुभो विद्यते क्वचित् ॥
न विशेषो दिवा रात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि ।
शुद्धिं न कारयेदत्र निर्विकल्पं मनश्चरेत् ॥
नात्र शुद्धेरपेक्षाऽस्ति न चामेध्यादि दूषणम् ।
य एवं चिन्तयेन्मन्त्रं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥
गद्यपद्यमयी वाणी सभायां तस्य जायते ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभा मताः ॥
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ।
सर्वदा पूजयेद्देवीमस्नातः कृतभोजनः ॥

महानिश्चयशुन्त्रौ देशे वलिं मन्त्रेण दापयेत् ।
स्त्रीद्वेषो नैव कर्त्तव्यो विशेषात् पूजनं स्त्रियः ॥
जपस्थाने महाशङ्खं निवेश्योर्ध्वे जपं चरेत् ।
स्त्रियं गच्छन् स्पृशन् पश्यन् यत्र कुत्राप्यच्चूडके ॥
भुक्त्वा ताम्बूलमन्याँश्च भक्ष्यद्रव्यान् यथारुचि ।
मांसं मत्स्यं दधि क्षौद्रं संविदासवयो रसम् ॥
भोज्यान्यशेषभक्ष्याणि दत्वा भुक्त्वाऽऽचरेज्जपम् ।
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
न जपे कालनियमो नार्चादिषु वलिष्वपि ।
स्वेच्छानियम उक्तोऽत्र महामन्त्रस्य साधने ॥
वस्त्रासनं गेहदेहस्पर्शास्पर्शादिवारिणा ।
तैलं संलाप्य देवेशि ताम्बूलं भक्षयन् सदा ॥
नानाम्बराणि सन्धार्य देहं वस्त्रेण मार्जयेत् ।
एवं स्नानं चरेद्देवि सर्वदा तद्गताशयः ॥
केशान् संवर्धयेद्देवि सर्वदा तैलभूषितः ।
नाधर्मो विद्यते सुभ्रु किं तु धर्मो महान् भवेत् ॥
स्वेच्छाचारोऽत्र कथितः प्रचरेद्धृष्टमानसः ।
कृतार्थमन्यमानस्तु सन्तोष्य निजमानसम् ॥
हरेर्नाम न गृह्णीयान्न स्पृशेत् तुलसीदलम् ।
वर्जयेद्बिल्वपत्रं च मरुं यत्नेन वर्जयेत् ॥
नान्यचिन्ता प्रकर्त्तव्या नान्यनिन्दा कदा चन ।
नान्यमन्त्रं जपेद्देवि निर्विकल्पः सदा भवेत् ॥
सद्यो मद्यं पिवेद्देवि मातङ्गीभिर्विहारवान् ।
योनिं चुम्बँल्लिहन् पश्यन् जपं कुर्यादनन्यधीः ॥

योनौ विचिन्त्य जप्तव्यं सिद्धिर्वत्सरमात्रतः ।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्यात् प्रजप्तैरपि कोटिभिः ॥
पुरश्चरणलक्षैश्च होमादीनां च कोटिभिः ।
भ्रूयुग्मे कुन्तले देवि सिन्दूरं तदनन्तरम् ॥
कुचन्दनं त्रिपुण्ड्रं च पङ्कजं वा सकेशरम् ।
मुण्डमाला गले धार्या कपालं पाणिसङ्गतम् ॥
इत्याचारपरो नित्यं महाचीनक्रमी भवेत् ।
कर्णनेत्रान्तरस्थो यो महाशङ्खः प्रकीर्त्तितः ॥
पञ्चाशन्मणिभिर्माला गोनरेभास्थिसम्भवा ।
मालां कुर्यान्महेशानि चाष्टसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
सैव तारा महेशानि नात्र कार्या विचारणा ।
यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
कृतार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।

(स्वच्छन्दभैरवतन्त्रे)

न शौचादिक्रियाः कार्याः स्मृतिशास्त्रप्रचोदिताः ।
एका लिङ्गे गुदे पञ्च इत्याद्या याः प्रकीर्त्तिताः ॥
न ताः कार्याः साधकेन्द्रैः यदीच्छेच्चिरजीवितम् ।

(सिद्धान्तसंग्रहेऽपि)

न देशकालनियमो भक्ष्यादिनियमो न हि ।
शौचादिनियमो नास्ति महामन्त्रस्य साधने ॥
दिवसे वा तथा रात्रौ रात्रिशेषे निशामुखे ।
मांसं भुक्त्वाऽसवं पीत्वा स्त्रियं गत्वा चरेज्जपम् ॥

(शक्तिसङ्गमे)

सकलस्तु मया प्रोक्तो निष्कलं शृणु पार्वति ।

मणिबन्धादधः पाणिं पादौ गुल्फादधः शिवे ॥
मुखं प्रक्षालयेद्देवि चीनस्नानमिदं भवेत् ।
जानुभ्यामवनीं गत्वा भूमौ मस्तकमानयेत् ॥
चीनमार्गे नमस्कारः कीर्त्तितस्तु मया तव ।
पूर्वक्रमस्य देवेशि क्रमः प्रतिनिधिर्मया ॥
स्नानदानादिकं कृत्वा तथा पूजादिकं प्रिये ।
तथा म्लानो न मे देहो न च पापं ममास्ति वै ॥
किं स्नानं कस्य चित् स्नानमस्नातः कृतभोजनः ।
सर्वमेव हृदम्भोजे मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥
मयि जाता मन्त्रसिद्धिर्मम देवा वरप्रदाः ।
तेजोरूपं जगत्सर्वं तारिणी तत्स्वरूपधृक् ॥
तत्तेजसा स्वस्थदेहं संभाव्य जपमाचरेत् ।
भावनावशमापन्नो भवेद्योगी महाकविः ॥
गुडार्द्रकरसेनैव सुरा तु ब्राह्मणस्य च ।
तदभावे जलं देवि संभाव्य पूजनं चरेत् ॥
तद्भावहृदयासन्नः सदा तद्गतमानसः ।
द्वन्द्वभावं परित्यज्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
ब्रह्मा चैव वशिष्ठश्च तथाऽन्ये च ऋषीश्वराः ।
निष्कलङ्कसमार्गेण भजन्ति सततं शिवे ॥
ताराभक्ता महेशानि ब्राह्मणाः परिकीर्त्तिताः ।
ब्रह्मविद्या महाविद्या सर्वत्र दुर्लभा कलौ ॥
रहस्यातिरहस्यं च गोप्तव्यं पशुसंकटे ।

इति महाचीनक्रमः ।

अथ दिव्यचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

छिन्नमस्ताविधौ देवि क्रमं मे ब्रूहि सत्वरम् ।

शिव उवाच ।

दिव्यचीनक्रमेणैव छिन्नमस्ता वरप्रदा ।
क्रमद्वयं महेशानि पूर्वमेव प्रकाशितम् ॥
एतस्यास्तिलको देवि भ्रूमध्ये च कुचन्दनम् ।
तदन्ते रोचनापत्रैस्त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः ॥
श्मशानभस्मबिन्दुं तु तन्मध्ये दापयेत् प्रिये ।
मुखे मुखं प्रदत्वा तु सर्वकालं जपेच्छिवे ॥
योनिचक्रं समालोक्य यत् किंचित् कुरुते नरः ।
तत् तदक्षयमाप्नोति छिन्नाविद्याप्रसादतः ॥
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न हि ।
पाताले कुहरे दुर्गे पर्वते तटिनीतटे ॥
अन्तरिक्षे तथा भूमौ सर्वत्र जपमाचरेत् ।
विशेषः कथितो देवि शक्तितत्त्वस्य पालकः ॥

इति दिव्यचीनक्रमः ।

अथ गन्धर्वक्रमः ।

देव्युवाच ।

गन्धर्वाख्यं क्रमं देव कथयस्व मयि प्रभो ।

शिव उवाच ।

गन्धर्वाख्यक्रमेणैव सुन्दरी सिद्धिदायिनी ।
गन्धर्वाख्यक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ॥
भ्रूमध्ये कुङ्कुमं देवि तन्मध्ये मालयागुरु ।

अष्टगन्धत्रिपुण्ड्रस्य मध्ये कस्तूरिकान्वितम् ॥
सुगन्धिश्वेतलौहित्यपुष्पैः संभूषितो नरः ।
अष्टगन्धस्य धूपेन नानासौगन्ध्यभूषितः ॥
रक्तमाल्याम्बरधरो मुक्ताहारोपशोभितः ।
पूर्णाभिषिक्ते शिरसि तेन तत्र न मुण्डनम् ॥
सदा चोष्णोदकैः स्नायात् तदभावे यथोदकैः ।
गृहं चित्रैस्तु संचित्रं दर्पणोदरसन्निभम् ॥
वितानध्वजभूषाढ्यं घण्टानादोपशोभितम् ।
पञ्चवादित्रसंयुक्तं नानाघोषसमन्वितम् ॥
अन्तःसूक्ष्माम्बरैर्युक्तं स्वर्णपात्रादिरञ्जितम् ।
ग्रैवेयवलयाङ्गुल्यभूषणैर्भूषितः सदा ॥
नानामधुरभोज्यैश्च दुग्धपानैरनेककैः ।
नानाभोगेन युक्तोऽयं गन्धर्वाख्यक्रमो भवेत् ॥

इति गन्धर्वक्रमः ।

अथ भैरवक्रमः ।

इति संक्षेपतः प्रोक्तं भैरवाख्यं शृणु क्रमम् ।
स्वपुष्पक्रमयोगेन भैरवो भुवि दुर्लभा ॥
स्वपुष्पाख्यक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ।
तरुणीं सुन्दरीं रम्यां तारुण्यामृतविग्रहाम् ॥
सदा रते साभिलाषां मैथुनोद्यतमानसाम् ।
मन्त्रयन्त्रसमायुक्तां समानीय महेश्वरि ॥
नग्नां तां च विधायादौ स्वयं नग्नो जपं चरेत् ।
परस्परालोकनं च कर्त्तव्यं च परस्परम् ॥

अविकारी यदा देवि साधनार्हो न चान्यथा।
विकारे भावमाने च साधको नश्यति क्षणात्॥
साऽपि चेद्देवदेवेशि सविकारा यदा भवेत्।
पुष्पिणीमनुना देवि बलात् पुष्पं समानयेत्॥
द्राविणीमनुना देवि बलाद्दृष्ट्या द्रवं नयेत्।
केलिदोषवशाद्देवि नायं योगो भविष्यति॥
तस्मात् पाशवकल्पेन बाला शस्ताऽधुना शिवे।
बालायामुभयाचारो दक्षिणो मुख्य एव हि॥

तथा।

शीघ्रं च सिद्धिकामश्चेद्गवाक्षं योगमभ्यसेत्।
यत्र स्त्रीणां समूहोऽस्ति नदीनदसमुद्रके॥
यत्र स्नानं प्रकुर्वन्ति गवाक्षं तत्र कारयेत्।
तमालोक्य प्रयत्नेन जपं कुर्यान्निरन्तरम्॥
इति संक्षेपतः प्रोक्तं तिलकं श्रृणु पार्वति।
वामहस्ततले यन्त्रं विलिख्य यत्नतः शिवे॥
अवशिष्टेन तिलकं कारयेत् परमेश्वरि।
भाले कस्तूरिकाविन्दुं मुनिपत्रं कुचन्दनम्॥
तन्मध्ये श्वेतविन्दुं च केशादिपूर्ववद्भवेत्।
दशविद्याविधौ देवि केशवर्धनमीरितम्॥

इति भैरवक्रमः।

अथ कमलाक्रमः।

देव्युवाच।

देवेश श्रोतुमिच्छामि कमलाक्रमनिर्णयम्।

शिव उवाच।

भ्रूमध्ये घुसृणं देवि सिन्दूरं तदनन्तरम्।

श्वेतं त्रिपुण्ड्रं देवेशि तन्मध्ये केशरं शिवे ॥
स्नातः शुक्लाम्बरधरस्त्रिसन्ध्यं स्नानमाचरेत् ।
हविष्याशी भूमिशायी मधुरान्नप्रियो नरः ॥
भृगुवासरपर्यन्तं द्वितीयं भृगुवासरम् ।
प्रत्यहं पूजयेद्द् देवि नानावादित्रनिस्वनैः ॥
दिनषोडशपर्यन्तं प्रत्यहं तु समाचरेत् ।
पुनस्तद्दिनमारभ्य तद्दिनान्तं महेश्वरि ॥
पूजयेत् प्रयतो नित्यं देवताभावतत्परः ।
प्रदक्षिणा प्रकर्त्तव्या कलाभावक्रमेण च ॥
दीपास्तत्र प्रदातव्याः कलावृद्धिक्रमेण च ।
ब्राह्मणान् भोजयेन्नित्यं कलाभावक्रमेण च ॥
इत्याचारपरः श्रीमान् विष्णुरूपो नरो भवेत् ।
राजचिह्नानि सर्वाणि प्रयतः पूजयेत् सदा ॥
सर्वसाम्राज्यलक्ष्म्यास्तु नाथो भूयान्न संशयः ।
धनदा तस्य गेहस्था राजा च किङ्करो भवेत् ॥

इति कमलाक्रमः ।

अथ ब्रह्ममार्गक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि ब्रह्ममार्गक्रमं शिव ।

शिव उवाच ।

वेश्यायाः कज्जलं देयं सिन्दूरेण त्रिपुण्ड्रकम् ।
हरिद्रा भ्रूयुगे देया श्वेतपत्रं समाचरेत् ॥
रक्तविन्दुं च तन्मध्ये सर्वदा तद्गतो भवेत् ।
भोजने शयने रात्रौ मैथुनं सर्वदा भवेत् ॥

उच्छिष्टहस्तो देवेशि उच्छिष्टेन वलिं हरेत्।
शक्त्युच्छिष्टं परोच्छिष्टं भोजनं सार्वकालिकम्॥
जपं कुर्यान्महेशानि रात्रावेव जपं चरेत्।
ताम्बूलभक्षी मांसाशी भुक्त्वा चार्चां च कारयेत्॥
उच्छिष्टहस्तः प्रजपेद्ब्रह्ममार्गः प्रकीर्त्तितः।

इति ब्रह्ममार्गक्रमः।

अथ महाराजक्रमः।

देव्युवाच।
महाराजक्रमं देव कथयस्व मम प्रभो।
शिव उवाच।
महाराजक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम्।
नानाविचित्रसोपानमण्डिते चित्रमण्डपे॥
सौधाट्टालकसंशोभिवितानध्वजशोभिते।
नानोपवनसंयुक्ते हंसमायूरशोभिते॥
नानाविचित्रशब्देन गजवाजिविराजिते।
सर्वतो भद्रसंयुक्ते नानाभरणभूषिते॥
धूपामोदसमायुक्ते चित्रदीपैरलङ्कृते।
रत्नसिंहासने रम्ये रत्नाभरणभूषिते॥
जातीचम्पकपुन्नागकेतकीगन्धशोभिते।
कर्पूरागुरुकस्तूरीरोचनाकुङ्कुमैर्युते॥
जटामांस्यादिसौगन्धलेपनैः परिभूषितः।
घण्टादिनादसंयुक्तः सर्वदा शुद्धमानसः॥
आनन्दमग्नहृदयो दिव्यवस्त्रैरलङ्कृतः।
दिव्यमालाम्बरधरो दिव्यभूषाविभूषितः॥

ताम्बूलपूर्णवदनो देवेन्द्र इव राजितः ।
वेदपात्रैर्नृत्यपात्रैर्भोगपात्रैर्निनादितः ॥
नृत्यगीतैश्च वादित्रैश्चतुर्विंशतिवादकैः ।
सङ्गीतरागतालैश्च ध्वनिभिश्च निनादितः ॥
नानादेशीयभाषाभिर्गद्यपद्यैरलङ्कृतः ।
नानाविचित्रभूषाभिर्भूषितः साधकोत्तमः ॥
समस्तराजचर्याभिर्मोहयन्राजनायिकाः ।
श्रीमहाराजमातङ्गी सर्वदेवप्रमोहिनी ॥
तस्यास्तु तिलकं देवि कथ्यते शृणु पार्वति ।
कुचन्दनं च भ्रूमध्ये गुरुसारस्तदन्तरे ॥
कस्तूरिकात्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये केशरं शिवे ।
महाराजक्रमो देवि कथितस्तु मया तव ॥
अथ वा देवदेवेशि स्वयं गानपरो भवेत् ।

इति महाराजक्रमः ।

अथ दिव्यभावक्रमः ।

देव्युवाच ।

वद श्रीभुवनेशान्याः क्रमं परमदुर्लभम् ।

शिव उवाच ।

दिव्यभावक्रमेणैव भुवना शीघ्रसिद्धिदा ।
हकारः शिवरूपः स्याद्रकारः पापनाशकः ॥
ईकारः कामरूपः स्यान्माया तेन प्रकीर्त्तिता ।
ब्रह्माण्डमेतद्देवेशि मायया वेष्टितं भवेत् ॥
यस्या मायां विना देवि न किञ्चित् प्रतिभासते ।
यद्भासरहितं किञ्चिन्न च तद्भासते क्वचित् ॥

यद्भासासहितं देवि जगदेतत् प्रभासते।
यां विना तु महेशानि जगज्जडसमं भवेत्॥
एवं क्रमेण देवेशि सदा तद्गतमानसः।
त्रैलोक्यविजयी भूयान्नात्र कार्या विचारणा॥
एतस्यास्तिलकं देवि कथ्यते यत्नतः शृणु।
श्वेतचन्दनविन्दुं तु भ्रूमध्ये तु प्रलापयेत्॥
गन्धसारं तदन्ते स्यात् त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः।
रक्ताक्षताँश्च तन्मध्ये तेन सिद्धीश्वरो भवेत्॥

इति दिव्यभावक्रमः।

अथ धूम्रक्रमः।

देव्युवाच।
देवेश श्रोतुमिच्छामि धूमावत्याः क्रमं शिव।
शिव उवाच।
धूमावत्याः क्रमो देवि कथ्यते शृणु पार्वति।
भ्रूमध्ये कज्जलं देवि भस्मविन्दुस्तदन्तरे॥
त्रिपुण्ड्रं च ललाटे स्याच्छवभस्म तदन्तरे।
कृष्णवस्त्राम्बरधरः कृष्णगन्धविभूषितः॥
गन्धपुष्पेण संयुक्तः श्मशानासनसङ्गतः।
धूम्रवर्णं जगत् सर्वं मन्त्री धूम्रमयो भवेत्॥
काकपिच्छं चासनं स्यात् कृष्णद्रव्यं प्रधारयेत्।
ब्रह्मचारी मिताहारो निर्विकल्पो जितेन्द्रियः॥
सत्यवादी दृढाचारो भूशायी कुशविष्टरः।
स्नानं त्रिषवणं कुर्यादुच्चाटनपरायणः॥
स्वचित्तं काकवत् कृत्वा जगदुच्चाटयेद्ध्रुवम्।

इत्याचारपरो भूयाद्‌धूम्रक्रमगतो भवेत् ॥

इति धूम्रक्रमः ।

अथ सौभाग्यक्रमस्तत्रैव ।

सौभाग्याचाक्रमेणैव वगला शीघ्रसिद्धिदा ।
पीताम्बरधरो मन्त्री पीतभूषणभूषितः ॥
पीतमाल्याम्बरधरः पीतगेहे समास्थितः ।
पीतद्रव्योपभोगी च पीतासनसमन्वितः ॥
पीतहोमो पीतपुष्पी पीतशक्तिसमन्वितः ।
रोचनां भ्रुवि संदद्यात् कुङ्कुमं मुनिपत्रकम् ॥
हरिद्रया त्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये खादिरं शिवे ।
हरिचन्दनधूपेन धूपितः परमेश्वरि ॥
सर्वाङ्गसुन्दरीं रम्यां सर्वावयवशोभिताम् ।
नवोढां पुष्पिणीं चैव प्रार्थयेद्द्विप्रकन्यकाम् ॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां कुमारिकाम् ।
अथ वा भौमवारे वा निशायां भृगुवासरे ॥
सुवासितेन तैलेन कुर्यादभ्यञ्जनं तथा ।
तूलिकातल्पमानीय आस्तीर्योदङ्मुखस्तदा ॥
तस्योपरि समास्तीर्य समन्त्रैर्जातिचम्पकैः ।
कर्पूरं चैव कस्तूरीमिश्रितं चन्दनं तथा ॥
सर्वाङ्गे लेपनं कुर्याल्लक्ष्मीसूक्तेन बुद्धिमान् ।
पर्यङ्कोपरि तां कन्यां चन्दनेन विलेपिताम् ॥
ध्रुवाद्यैरिति मन्त्रेण कन्यां दक्षिणतो मुखीं ।
उन्मुखीं शयने कुर्याच्छ्रीसूक्तेन कुमारिकाम् ॥

तस्याः पादौ प्रसार्याथ गुप्तेनार्च्चनमाचरेत् ।
न्यस्त्वा षोढाद्यं चैव वगलापञ्चकं न्यसेत् ॥
कन्यां चैव न्यसेद्देवं तत्तदङ्गानि संस्मरेत् ।
अनन्यजपुरं च्चैव मार्जयेन्मूलविद्यया ॥
गन्धद्वारेति मन्त्रेण कुर्यात् कस्तूरिलेपनम् ।
मूलमन्त्रेण चैतन्यपुष्पमालां समर्पयेत् ॥
निवेदयेद्द्रव्यशुद्धिं ततश्च जपमाचरेत् ।
प्रयोगः सिद्धिदः पुंसां मन्त्रसिद्धिकरः परः ॥
एतत्क्रमं विना देवि प्रयोगो न भवेत् क्व चित् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सिद्ध्यर्थी देवि भूतले ॥
अभिमानाष्टकं त्यक्त्वा त्यक्त्वा वै दूषणत्रयम् ।
त्यक्त्वा पञ्चेन्द्रियासक्तिं सौभाग्यक्रममाचरेत् ॥

इति सौभाग्यक्रमः ।

अथ दिव्यवीरपशुभावाः ।

(भावचूडामणौ)

देव्युवाच ।

भावस्तु त्रिविधो देव दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
गुरवस्त्रिविधाश्चात्र तथैव मन्त्रदेवताः ॥
शक्तिमन्त्रो महादेव विशेषान्मन्त्रसिद्धिदः ।
आद्यभावो महादेव श्रेयान् सर्वसमृद्धिदः ॥
द्वितीयो मध्यमश्चैव तृतीयः सर्वनिन्दितः ।

सर्वनिन्दित इति ब्राह्मणेतरविषयः । ब्राह्मणस्य तु पशुभावान्यभावश्रयणे निन्दाश्रवणात् ।

तथा ।

लक्षजापात् तथा होमात् कायक्लेशादिविस्तरैः ।

न भावेन विना देव तन्त्रमन्त्राः फलप्रदाः ॥
किं वीरसाधनेनैव विश्वदृष्टिकुलाकुलैः ।
किं पीठपूजनेनैव किं कन्याभोजनादिभिः ॥
स्वयोषित्प्रीतिदानेन किं परेषां तथैव च ।
किं जितेन्द्रियभावेन किं कुलाचारकर्मणा ॥
यदि भावविशुद्धात्मा न स्यात् कुलपरायणः ।
भावेन लभते मुक्तिं भावेन कुलवर्धनम् ॥
भावेन कुलवृद्धिः स्याद्भावेन कुलशोभनम् ।
किं न्यासविस्तरेणैव किं तत्तच्छुद्धिविस्तरैः ॥
किं तथा पूजनेनैव यदि भावो न जायते ।
केन वा पूज्यते विद्या न चेत् केन न जप्यते ॥
फलाभावश्च देवेश भावाभावात् प्रजायते ।

तथा ।

प्रथमो दिव्यभावस्तु कथ्यते शृणु सादरम् ।
यद्वर्णदेवता यत्र तत्तेजःपुञ्जपूरितम् ॥
तेजोमयं जगत् सर्वं विभाव्य मूर्त्तिकल्पनम् ।
तत्तन्मूर्त्तिमये मन्त्रे स्वेन स्वेनैव वा पुनः ॥
आत्मानं तन्मयं दृष्ट्वा सर्वभावं तथैव च ।
तत्सर्वं योषिति ध्यात्वा चिन्तयेद्यतमानसः ॥
अशेषकुलसंपन्ना नानाजातिसमुद्भवा ।
नानादेशोद्भवा वाऽपि गुणलावण्यसंयुता ॥
द्वितीयवत्सरादूर्ध्वं यावत् स्यादष्टमाब्दकम् ।
तावत् कुमारी विज्ञेया मन्त्रयन्त्रफलप्रदा ॥
कुमारीपजनाच्चैव कुमारीभोजनादपि ।

एकद्वित्र्यादिबीजानां फलदा नात्र संशयः ॥
ताभ्यः पुष्पं फलं वाऽपि अनुलेपादिकं तथा ।
वलिप्रियं च नैवेद्यं दत्वा तद्भावपूरितः ॥
दत्वा तदङ्ग आत्मानं वलिभावे विचेष्टितम् ।
ताभिः प्रायः कथालापं क्रीडाकौतूहलादिकम् ॥
यथातथं तत्प्रियकृत् कृत्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ।
तस्मात् षोडशपर्यन्तं युवतीति प्रवक्ष्यते ॥
तत्र भावप्रकाशश्चेत् सद्भावः परमो मतः ।
रक्षितव्याः प्रयत्नेन अक्षतास्ता न कारयेत् ॥
एष ते कथितो देव दिव्यभावः सुखावहः ।
न देयो यस्य कस्यापि पशोर्गोप्यः प्रयत्नतः ॥

इति दिव्यभावः ।

अथ वीरभावस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

वीरभावो महादेव कथ्यते शृणु भैरव ।
निर्द्वन्द्वमानसो भूत्वा हृदा कामकला तनुः ॥
निशासु पूजा प्रवरा हेतुयुक्ता तथैव हि ।
निजं कुलं समाधाय स्वयं भैरवरूपधृक् ॥
कुलं च भैरवीरूपं तद्गात्रे न्यासविस्तरम् ।
विन्यसेत् केवलं न्यासं नवयोन्यात्मकं तथा ॥

नवयोन्यत्मकमिति श्रीविद्यापरम् ।

प्रसूनतूलिकामध्ये पुष्पप्रकरसंयुते ।
नानागन्धसमाकीर्णे कुलद्रव्येण यन्त्रकम् ॥
लिखित्वा पूजयेच्छक्तौ घटस्थापनपूर्वकम् ।

स्ववामभागे षट्कोणं तन्मध्ये ब्रह्मरन्ध्रकम् ॥
लिखित्वा तत्र कुम्भं वै सौवर्णं राजतं तथा ।
ताम्रं भूमिमयं वाऽपि महालोहविवर्जितम् ॥
स्थापयेत् कलशाधारं कुम्भं सुगन्धिवासितम् ।
हेतुद्रव्यं ब्राह्मणादिभेदतः संप्रपूरयेत् ॥

ब्राह्मणादिभेदत इति क्षीराज्यमध्वासवरूपं ब्राह्मणादिभिः पूरणीयमित्यर्थः । एवं च वीरब्राह्मणस्य हेतुस्थाने क्षीरमेव च । पशोस्तु तदपि नेति बोध्यम् ।

तत्र यन्त्रं विलिख्यादौ यद्यत् कुलसमुद्भवम् ।
ध्यात्वेष्टदेवतां तत्र जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥
धेनुयोनी प्रदर्श्याथ प्रस्तुतं तद्विचेष्टितम् ।
दृष्ट्वाऽमृतं स्वपात्रं वै नृत्यन्ति योगिनीगणाः ॥
नृत्यन्ति भैरवाः सर्वे नृत्यन्ति मातरोऽपि च ।
इन्द्रादयः सुराः सर्वे नृत्यन्ति मधुलोलुपाः ॥
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या नृत्यन्ति हर्षतत्पराः ।
अर्घभाण्डं त्रिधा कृत्वा गुरवे चैकभागकम् ॥
एवं कुलाय वै दत्त्वा एकेन देवतर्पणम् ।
पीत्वा कुलरसं नानावस्त्रालङ्कारभूषणम् ॥
साक्षाद्यदि गुरुर्न स्यात् तदा तोये विसर्जयेत् ।
आनन्दरूपवान् भूत्वा पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
तत्तत्कल्पविधानेन तत्तद्यत्नेन पूजयेत् ।
विसर्जनं विधायान्ते स्वकुले योजयेत् ततः ॥
तद्बिम्बरसपानेन अमृतं भक्ष्यते मया ।
तच्चकोररसास्वादे सम्मदो मम जायते ॥
तत्फलग्रहणादेव मेरुशृङ्गावरोहणम् ।

लतालिङ्गनमात्रेण सुधाधौतकलेवरः॥
मूलयोगे कृते तत्र जपेदष्टसहस्रकम्।
नित्यजाप्ये च होमे च यत्र सङ्ख्या न चोदिता॥
तत्रेयं गणना प्रोक्ता अष्टोत्तरसहस्रकम्।
जलपूतं हविर्द्रव्यं गृहीत्वा तर्पयेत् ततः॥
विधाय तर्पणं देव प्रदक्षिणमनुव्रजेत्।
स्तुत्वा प्रणम्य कल्पोक्तस्तवेन स्तावयेत् ततः॥
इति वीरकुलं देव देववन्द्यं मनोहरम्।

(कालीकल्पे)

रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तिं प्रपूजयेत्।
अकृत्वा कथमीशान मद्भक्तः कौलिको भवेत्॥

(मेरुतन्त्रे)

कुलं तु गोपयेद्देवि नारिकेलरसाम्बुवत्।
गुरुं प्रकाशयेद्धीमान् मन्त्रं यत्नेन गोपयेत्॥

(कुलार्णवे)

वेदशास्त्रपुराणानि स्पष्टा वेश्याङ्गना इव।
इयं तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुलवधूरिव॥
सुगुप्तं कौलिकाचारमनुगृह्णन्ति देवताः।
वाञ्छासिद्धिं प्रयच्छन्ति नाशयन्ति प्रकाशनात्॥

(मेरौ)

न दिवा सेवयेन्नारीं तद्योनिं न निरीक्षयेत्।
स्त्रियं शतापराधां वा पुष्पेणापि न ताडयेत्॥
दोषान् न गणयेत् स्त्रीणां गुणानेव प्रकाशयेत्।

तथा।

कन्याः कुमारिका नग्ना उन्मत्ता अपि योषितः।

न निन्देत जुगुप्सेत न हसेन्नावमानयेत् ॥
एकवृक्षं श्मशानं च समूहं योषितामपि ।
नारीं च रक्तवसनां दृष्ट्वा वन्देत भक्तितः ॥

तथा ।

तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलवृक्षेषु सर्वदा ।
तत्पत्रेषु न भोक्तव्यमर्कपत्रे विशेषतः ॥
न स्वपेत् कुलवृक्षाधो न चोपद्रवमाचरेत् ।
दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्याच्छेदयेन्न कदा च न ॥
श्लेष्मान्तककरञ्जार्कनिम्बाश्वत्थकदम्बकाः ।
विल्वो वटोऽदुम्बरश्च चिञ्चा चेति दश स्मृताः ॥
प्रायश्चित्तं भृगोः पातं सन्यासं व्रतधारणम् ।
तीर्थयात्राभिगमनं कौलः पञ्च विवर्जयेत् ॥

प्रायश्चित्तादिकं तन्त्रोक्तभिन्नम् ।

(रौद्रे)

वीरभावं महेशानि सर्वथा न प्रकाशयेत् ।

(वीरचूडामणौ)

पूजाकाले महेशानि यदि कोऽप्यत्र गच्छति ।
दर्शयेद्वैष्णवीं मुद्रां विष्णुन्यासं तथा स्तवम् ॥
अन्तः शाक्ता बहिः शैवाः सभायां वैष्णवा मताः ।
नानारूपधरा वीरा विचरन्ति महीतले ॥

(भावचूडामणौ)

यद्देशे विद्यते वीरस्तत्कुलं वाऽपि भैरव ।
न च मारीभयं तत्र न च राजभयादिकम् ॥
सुमङ्गलं सदा तत्र धनपुत्रविवर्धनम् ।
लक्ष्मीस्तत्र महादेव सुस्थिरा भवति ध्रुवम् ॥

मन्त्रः स्वप्नप्रबोधिन्या अवश्यं वृक्षमूलके ।
योजनीयः प्रयत्नेन न च विघ्नः प्रजायते ॥
नान्यवीरस्य तद्योग्यं ग्रहणैर्दैवतैरपि ।
योगिनीभिर्न लुप्तं च तन्न पापेन लिप्यते ॥
यत्र तत्र कुजे वारे श्मशानगमने कृते ।
पूजाफलं भवेत् तत्र सप्तवासरसम्मितम् ॥
चतुर्दश्यां गते तत्र पक्षपूजाफलं भवेत् ।
न गच्छेन्नार्यतः स्थाने पशुरेव न संशयः ॥
नास्त्यस्मादधिकं देव इति चिन्तापरायणः ।
मदेन द्रव्यभोक्ता च भवेत् कुलपरायणः ॥
साधके क्षोभमापन्ने मम क्षोभः प्रजायते ।
तस्माद्यत्नाद्वीरवरो भवेद्भोगयुतः सुखी ॥
भोगेन मोक्षमाप्नोति भोगेन कुलसाधनम् ।
विना हेतुमनास्वाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वर ॥
न पूजा मम संपर्कं न ध्यानमनुचिन्तनम् ।
तस्माद्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
नात्र प्रच्युतिदोषोऽस्ति नापरं दोषभूषणम् ।
यद्यद्वदति निद्राति यत् करोति यदर्चति ॥
तत्सर्वं कुलरूपं च ध्यात्वा च विहरेत् सुखी ।
एकाकी निर्जने देशे श्मशाने पर्वते वने ॥
शून्यगेहे नदीतीरे निःसङ्गो विहरेन्मुदा ।
वीराणां जपकालस्तु सर्वकालः प्रशस्यते ॥
सर्वदेशे सर्वपीठे कर्त्तव्यं च न संशयः ।

यदि विप्रो भवेद्भ्रष्टः कुलधर्मपरायणः ॥
तदा तेन विधानेन कर्त्तव्यं कुलतोषणम् ।
अपरापुष्पगर्भे तु कुलस्थानं मनोहरम् ॥
सर्वदेवमुखं तत्र महाकामकलात्मकम् ।
हयारिकुसुमे देवः स्वयमस्ति सदाशिवः ॥
तन्मध्ये लघुमादाय पुष्पमध्ये तु चन्दनम् ।
रक्तं वा कुसुमं दत्वा ध्यात्वाऽऽत्मानं शिवात्मकम् ॥
योजयेच्छिवशक्त्योस्तु ऐक्यं संभावयेद्धिया ।
क्षणं विचिन्त्य तत्रैव संपूज्य परमेश्वरीम् ॥
जप्त्वा तदेव कुण्डाख्यं द्रव्यं परमदुर्लभम् ।
यत्रापराजितापुष्पं जपापुष्पं च भैरव ॥
करवीरे रक्तशुक्ले द्रोणपुष्पं च तिष्ठति ।
तत्र देवी वसेन्नित्यं तद्यन्त्रे पूजयेन्मम ॥
दत्ते चैव जपापुष्पे पट्टवस्त्रफलं लभेत् ।
ब्रह्महत्यादिकं पापं क्षणान्नश्यति निश्चितम् ॥
अपरायास्तु माहात्म्यं वक्तुं न हि महेश्वर ।
वीरसाधनकार्यं च कर्त्तव्यं वीरपूरुषैः ॥
दिव्यैरपि च कर्त्तव्यं पशुभिर्न च पामरैः ।
वरं पामरकार्यं च न पशोरिति निश्चितम् ॥
यद्यन्न मत् पुरा प्रोक्तं संकेतं मन्त्रसाधने ।
अञ्जनं गुटिकादिं च कुर्याद्वीरो महाबलः ॥
दिव्ये वीरे न भेदोऽस्ति यद्भेदं तत् तु कथ्यते ।
शान्तो विनीतो मधुरः कलालावण्यसंयुतः ॥

दिव्यस्तु देववत् प्रायो वीरश्चोद्धतमानसः ।

(कुलरत्नावल्याम्)

दिव्यवीरौ सुरेशानि शक्तिसेवापरायणौ ।
वामिकौलिकभेदाभ्यां प्रत्येकं द्विविधौ स्मृतौ ॥

(भावचूडामणौ)

विभूतिभूषणैर्वाऽपि चन्दनैर्वा विलेपितः ।
आकारगोपनो वाऽपि त्यक्तो वा कुलभैरव ॥
रक्तचन्दनदिग्धो वा वैष्णवो वाऽप्यवैष्णवः ।
अपमाने तु पूजायां हृष्टः पुष्टः सदा भवेत् ॥
देवनिन्दापरो वाऽपि तत्र पूजापरोऽपि वा ।
पूजा च तत्तद्रहितः कुलाकुलमते स्थितः ॥
निजभावसमायुक्तो देववद्विरहेत् क्षितौ ।
स्वकुलान्ते पुरश्चर्या कार्या रात्रौ न चान्यथा ॥
वेदहीने द्विजे देव यथा न श्रुतिसंकथा ।
विष्णुभक्तिं विना देवीभक्तिर्न प्रभवेद्यथा ॥
शाक्तज्ञानं विना मुक्तौ यथा हास्याय कल्पते ।
गुरुं विना यथा तन्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥
पतिहीना यथा नारी सर्वकर्मविवर्जिता ।
कुलं विना देवविधौ कदाऽपि मम साधने ॥
नाधिकारीति कौलेय तस्माद्भावपरो भवेत् ।
अविनीतं कुलं यस्य स क कथं मम पूजकः ॥
तस्माद्यत्नात् तथा कार्यं यथा स्याद्विनयान्वितम् ।
भावाभावे कुले शास्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥
तेन भावविशुद्धश्च साधकः कौलिको भवेत् ।

इति वीरभावक्रमः ।

अथ पशुभावस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

पशुभावं प्रवक्ष्यामि शृणु वत्स समाहितः ।
यथाविधि पशोर्विद्यां गृहीत्वा भावतत्परः ॥
प्रथमं पूर्वसेवार्थं यत्नतः शुद्धिमाचरेत् ।
नमस्य भोजनं कुर्यान्न स्त्रियं मनसा स्मरेत् ॥
न परद्रव्यलोभी स्यान्न भोगे मानसं भजेत् ।
सिन्धुतीरे पर्वते वा कानने च सुरालये ॥
विल्वमूले विविक्ते च पुण्यक्षेत्रे च शोभने ।
न शूद्रदर्शनं कुर्यात् कौटिल्यं यत्नतस्त्यजेत् ॥
देवता शुभवर्णा तु ध्यातव्या सुसमाहितैः ।
त्रिसन्ध्यं देवपूजा तु त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ॥
रात्रौ मन्त्रं च मालाश्च स्पृशेन्नैव कदा चन ।
न मन्त्रमुच्चरेद्भुक्त्वा मौनी स्यात् सर्वकर्मसु ॥
पर्वकाले स्त्रियं नैव गच्छेत् साधकसत्तमः ।
पुष्पं गन्धं जलं चैव स्वयमानीय पूजयेत् ॥
मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठीं परिवर्जयेत् ।
ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ॥
पुराणश्रवणे श्रद्धा वेदवेदार्थतत्परः ।
न रात्रौ भोजयेद्विद्वान् ताम्बूलं परमेश्वर ॥
गुरुणा यद्यदादिष्टं तत्सर्वं यत्नतश्चरेत् ।
स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ॥
स्पृष्ट्वा तथा समाघ्राय पञ्चगव्येन शुध्यति ।
रक्तवस्त्रं न गृह्णीयाद्देवीभक्तिपरायणः ॥

विष्णुतन्त्रेषु कल्याणि तदनुष्ठानमेव च।
कार्यं वीरकथालापं न कुर्याद्वीरवन्दिते॥
नित्यश्राद्धं गयाश्राद्धं सन्ध्यावन्दनमेव च।
तीर्थस्नानं पीठदेशगमनं धर्मतत्परः॥

(मेरुतन्त्रे)

देवस्थाने गुरुस्थाने श्मशाने च चतुष्पथे।
पादुकासनविण्मूत्रमैथुनानि विवर्जयेत्॥
प्रमत्तामन्त्यजां कन्यां पुष्पितां पतितस्तनीम्।
विरूपां वा मुक्तकेशीं कामार्त्तां च न निन्दयेत्॥
कन्यायोनौ पशुक्रीडां दिग्वस्त्रां प्रकटस्तनीम्।
नालोकयेत् परद्रव्यं परदारांश्च वर्जयेत्॥
धान्यगोगुरुदेवाग्निकुशपुस्तकसंमुखम्।
नैव प्रसारयेत् पादौ न चैतानि विलङ्घयेत्॥
आलस्यमदसंमोहशापपैशून्यविग्रहान्।
असूयामात्मसन्मानं परनिन्दाश्च वर्जयेत्॥

(भावचूडामणौ)

भावस्तु मानसो धर्मः शाब्दः स हि कथं भवेत्।
तस्माद्भावो न वक्तव्यो दिङ्मात्रं समुदाहृतम्॥
यथेक्षुगुडमाधुर्यमशनैर्ज्ञायते प्रभो।
तथा भावविभावस्तु मनसा परिभाव्यते॥

तन्त्रान्तरे।

उत्तमो दिव्यभावः स्याद्वीरभावस्तु मध्यमः।
पशुभावोऽवरः प्रोक्तो भावमेकं समाश्रयेत्॥

इति पशुभावक्रमः।

अथ संप्रदायः ।

(सिद्धान्तसंग्रहे)

संप्रदायानथो वच्मि गौडकाश्मीरकेरलान् ।
सर्वार्थसिद्धिसंकल्पपूजापुष्पार्पणादनु ॥
नैवेद्यान्ते च हवनं ताम्बूलान्ते वलिर्मतः ।
पूजनं वामहस्तेन दक्षहस्तेन तर्पणम् ॥
साक्षाद्दानं मकारणे हृदि देव्या विसर्जनम् ।
गौडाक्षसप्रदायोऽयं सेवितो वाग्मिभिः सदा ॥
विनियोगादर्च्चनार्थं वलिः पीठार्चनादनु ।
होमः पञ्चोपचारान्ते दक्षिणार्च्चनतर्पणे ॥
गव्यं तु ताम्रपात्रस्थं वारुणी स्याद्घृतं विना ।
लवणार्द्रकपिण्याकपलाण्डुमाषपञ्चकम् ॥
लशुनं च महादेवि मांसप्रतिनिधिः स्मृतः ।
मत्स्याभावे तु क्रमुकं ताम्बूलं यच्चदामिषम् ॥
गुडाभावे तण्डुलं वा भर्जितं चणकादिकम् ।
विलिखेत् पञ्चमाभावे शक्तिबीजं त्रिकोणकम् ॥
वामोरौ साधको रक्तं चन्दनेन विधानवित् ।
शक्तिं संपूज्य तत्रैव तद्गायत्रीं शतं जपेत् ॥
स्वयम्भूकुसुमाभावे रक्तचन्दनकं क्षिपेत् ।
हयारिकुसुमं शम्भुः शक्तिः प्रोक्ताऽपराजिता ॥
तयोः समेलनोत्पन्नं गृह्णीयाच्च कुलामृतम् ।

तथा ।

ताम्रे गव्यादिपिण्याकं गृञ्जनं पायसं पयः ।
एते तत्त्वानुकल्पाश्च सहस्रारे विसर्जनम् ॥

काश्मीरसंप्रदायोऽसौ विज्ञेयः कौलिकप्रियः ।

पिण्याकं तिलकल्कः । गृञ्जनं लशुनम् ।

तथा ।

सङ्कल्पो देवताप्रीत्यै तत्त्वानां भावनैव हि ।
आत्मा विद्या शिवः सर्वः पूर्णश्चेति क्रमेण च ॥
पूजा पञ्चोपचारान्ते पूजान्ते च बलिर्भवेत् ।
पूजनं दक्षहस्तेन वामहस्तेन तर्पणम् ॥
होमः समस्तकर्मान्ते हृद्येवोद्वासनं स्मृतम् ।
केरलाख्यः संप्रदायो मुनिभिः समुपासितः ॥

इति संप्रदायक्रमः ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-
स्रोतःशालिनि संनिबन्धनसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।
सन्मुक्तोपमयुक्तिभाजि नवमो रम्यस्तरङ्गोऽगमत्
सर्वोर्वीपतिनाथनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे दशमहाविद्यापुरश्चरणनिरूपणं नाम नवमस्तरङ्गः ।

---

# अथ सरस्वत्यादिमन्त्रास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च प्रदर्श्यन्ते ।

तथा च (शारदायाम्)

अद्रिर्वरुणसंरुद्धो दवाग्वादिनि ठद्वयम् ।
वागीश्वर्या दशार्णोऽयं मन्त्रो वाग्विभवप्रदः ॥
ऋषिः कण्वो विराट्छन्दो देवता वाक् समीरिता ।
शिरःश्रवणदृङ्नासावदनान्धुगुदेष्विमान् ॥
न्यासार्णान् प्राग्वदङ्गानि मातृकोक्तानि कल्पयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

तरुणशकलमिन्दोर्बिभ्रती शुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी संनिषण्णा सिताब्जे ।
निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् ततः ।
पुण्डरीकैः पयोऽभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

हृदयान्ते भगवति वदशब्दयुगं ततः ।
वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत् ॥
मनुं षोडशवर्णाढ्यं वागैश्वर्यफलप्रदम् ।
मनोः षड्भिः पदैः कुर्यात् षडङ्गं जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

शुभ्रां शुभ्रविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां

व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मितां
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्याशी जपेत् सम्यग्वसुलक्षमनन्यधीः ।
दशांशं जुहुयादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तारो माया धरो विन्दुः शक्तिस्तारं सरस्वती ।
ङेन्ता नत्यन्तिको मन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ॥
ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये नवरन्ध्रेषु च क्रमात् ।
मन्त्रवर्णान् न्यसेन्मन्त्री वाग्भवेनाङ्गकल्पना ॥

अथ ध्यानम् ।

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रार्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः सम्बिभ्रतीमादरात् ।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनीं
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः ।
नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहुयात् साधकोत्तमः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाचस्पतेऽमृते भूयः प्लुवः प्लुवेति कीर्त्तयेत् ।
वागाद्यो मुनिभिः प्रोक्तो रुद्रसङ्ख्याक्षरो मनुः ॥
कुर्यादङ्गानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं

बिभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा ।
भालोन्मीलितलोचना कुचभराक्रान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानाऽनिशम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रुद्रलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।
मातृकाकल्पिते पीठे पूजयेत् तां यथा पुरा ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखम् ।
विन्द्वर्घीशयुतो वह्निविन्दुसद्योऽम्बुमान् भृगुः ॥
उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतार्थिनाम् ।
अङ्गानि कल्पयेद्बीजैर्द्विरुक्तैर्जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालङ्कृतां बाहुभिः स्वै-
र्व्याख्यां वर्णाक्षमालां मणिमयकलशं पुस्तकं चोद्वहन्तीम् ।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविनमन्मध्यदेशामधीशां
वाचामीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पायसेनाज्यसिक्तेन संस्कृते हव्यवाहने ॥

अथ चिन्तामणिसरस्वतीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथादौ संप्रवक्ष्यामि चिन्तामणिसरस्वतीम् ।
तारं माया च हसरानैकाराढ्यान् सविन्दुकान् ॥
पुनर्मायां च तारं च वदेत् ङेन्तां सरस्वतीम् ।
हृदयान्तो भवाणोंऽयं मन्त्रस्तु परिकीर्त्तितः ॥
त्रिष्टुप्छन्दो मुनिः कण्वश्चिन्तामणिसरस्वती ।

देवता ह्सैँ च बीजं स्यात् ह्रीँ शक्तिस्त्वङ्गकल्पने ॥
स्वरसंपुटितैः कादिवर्गैः स्यादङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढां मौक्तिकाभां मन्दहास्येन्दुशेखराम् ।
वीणामृतघटाक्षस्रग्दीप्तहस्तां कजस्थिजाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् । 'जपेद्द्वादशलक्षक'मित्युक्त्वा-

सिताब्जै रविसाहस्रं हुनेद्वाऽथ च चम्पकैः ।

अथ पारिजातसरस्वतीमन्त्रः (दक्षिणमूर्त्तिसंहितायाम्)

संपत्प्रदाया भैरव्या वाग्भवं बीजमालिखेत् ।
तारेण परया देवी संपुटीकृत्य मन्त्रवित् ॥
सरस्वत्यै हृदन्तोऽयं रुद्राणों मनुरीरितः ।
ऋषिस्तद्दक्षिणामूर्त्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ॥
पारिजातेश्वरी वाणी देवता परिकीर्त्तिता ।
तृतीयं च द्वितीयं च बीजं शक्तिश्च तारकम् ॥
कीलकं परमेशानि महासारस्वतप्रदम् ।
षड्दीर्घस्वरसंभिन्नबीजेनाङ्गानि विन्यसेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढा वरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा ।
विद्यावीणामृतमयघटाक्षस्रजादीप्तहस्ता
शुभ्राब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥

अथ पुरश्चरणं तन्त्रान्तरे ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं ततो हुनेत् ।
किंशुकैश्चम्पकैर्वाऽपि तिलाज्यमधुलोलितैः ॥
नवाक्षरोऽपि यो मन्त्रस्तत्रादौ प्रणवस्ततः ।

संपत्प्रदात्वाम्भवस्ततो लज्जाबीजमिति ।

(शारदायाम्)

एवमुक्तेषु मन्त्रेषु दीक्षितो यतमानसः ।
एकं यो भजते भक्त्या स भवेद्भुक्तिमुक्तिभाक् ॥
सुसितैर्गन्धकुसुमैः पूजा सारस्वते विधौ ।
दूर्वाबीजाङ्कुरं पुष्पं राजवृक्षसमुद्भवम् ॥
उत्पलानि प्रशस्तानि सिन्धुवाराङ्कुराणि च ।
भजन् सरस्वतीं नित्यमेतानि परिवर्जयेत् ॥
आम्रातं गृञ्जनं विम्बं करञ्जं लशुनं तथा ।
तैलं पलाण्डुं पिण्याकं साङ्गाष्टमपि भोजने ॥
सर्वं पर्युषितं त्याज्यं सदा सारस्वतार्थिना ।
नाचरेन्निशि ताम्बूलं स्त्रियं गच्छेद्दिवा न च ॥
न सन्ध्ययोः स्वपेज्जातु नाशुचिः किञ्चिदुच्चरेत् ।
प्रदोषे तु भवेन्मौनी दिग्वस्त्रां न विलोकयेत् ॥
न पुष्पितां स्त्रियं गच्छेन्न निन्देद्वामलोचनाम् ।
न मृषा वचनं ब्रूयान्नाक्रमेत् पुस्तकं सुधीः ॥
अक्षराढ्यानि पत्राणि नोपेक्षेत न लङ्घयेत् ।
चतुर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्ग्रहणेषु च ॥
संक्रमेषु च सर्वेषु विद्यां नैव पठेन्नरः ।
व्याख्याने संत्यजेन्निद्रामालस्यं जृम्भणां बुधः ॥
क्रोधं निष्ठीवनं तद्वन्नीचाङ्गस्पर्शनं तथा ।
मनुष्यसर्पमार्जारमण्डूकनकुलादयः ॥
अन्तरा यदि गच्छेयुस्तदा व्याख्यां परित्यजेत् ।
निशासु दीपभ्रंशे च पाठं सद्यः परित्यजेत् ॥

ज्ञात्वा दोषानिमान् सम्यग्भक्त्या यो भारतीं भजेत् ।
वाचां सिद्धिमवाप्नोति वाचस्पतिरिवापरः ॥

इति सरस्वतीप्रकरणम् ।

अथ त्वरितामन्त्रः ।

तत्रैव ।

ततोऽभिधास्ये त्वरितां त्वरितं फलदायिनीम् ।
तारो माया वर्मबीजमृद्धिरीशस्वरन्विता ॥
कूर्मस्तदन्तो भगवान् क्ष्स्त्रीँ दीर्घतनुच्छदम् ।
संवर्त्तो भगवान् माया फडन्तो द्वादशाक्षरः ॥
मुनिरर्जुन आख्यातो विराट् छन्दः समीरितम् ।
त्वरिता देवता प्रोक्ता पुरुषार्थफलप्रदा ॥

तथा ।

कूर्माद्यैः पञ्चभिर्वर्णैः पूर्वपूर्वविवर्जितैः ।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामां वर्हिकलापशेखरयुतामाबद्धपर्णांशुकां
गुञ्जाहारलसत्पयोधरभरामष्टाहिपान् बिभ्रतीम् ।
ताटङ्काङ्गदमेखलां गुणरणन्मञ्जीरतां प्रापितां
कैरीतीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं संजप्य मन्त्रज्ञो मन्त्रमेनं जितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयाद्बिल्वैर्मधुराक्तैः समिद्वरैः ॥

तथा ।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री नारीनरनरेश्वरैः ।
मान्यते वत्सरादर्वाग्लक्ष्म्या जितधनेश्वरः ॥

इति त्वरितामन्त्रः ।

अथ नित्यक्लिन्नामन्त्रस्तत्रैव ।

तारो माया वाग्भवान्ते नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
वाङ्माया वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥
द्वाभ्यां द्वाभ्यां पुनर्द्वाभ्यां द्वाभ्यां पञ्चभिरक्षरैः ।
वाद्यं विना समस्तेनाप्यङ्गषट्कमथाचरेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

द्वीपं त्रिकोणविपुलं सुरद्रुममनोहरम् ।
कूजत्कोकिलनादाढ्यं मन्दमारुतसेवितम् ॥
भृङ्गपुष्पलताकीर्णमुद्यच्चन्द्रदिवाकरम् ।
स्मृत्वा सुधाब्धिमध्यस्थं तस्मिन् माणिक्यमण्डपे ॥
रत्नसिंहासने न्यस्तत्रिकोणोज्ज्वलकर्णिके ।
पद्मे संचिन्तयेद्देवीं साक्षात् त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥

नित्यां भजे बालशशाङ्कचूडां
पाशाङ्कुशौ कल्पलतां कपालम् ।
हस्तैर्वहन्तीमरुणां त्रिनेत्रा-
मास्फालयन्तीं कलवल्लकीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रमाज्येन जुहुयात् ततः ।

दशांशमिति शेषः ।

इति नित्यक्लिन्नामन्त्रः ।

अथान्नपूर्णामन्त्रः ।

( मेरुतन्त्रे )

अथातः संप्रवक्ष्यामि अन्नपूर्णामहामनुम् ।
ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ नमः प्रोक्त्वा भगवति पदं वदेत् ॥
माहेश्वरि चान्नपूर्णे स्वाहा विंशतिवर्णकः ।

छन्दोऽनुष्टब्मुनिर्ब्रह्मा ह्यन्नपूर्णा च देवता ॥
ह्रौँ बीजं चापि शक्तिः श्रीँ कीलकं क्लीँ प्रकीर्त्तितम् ।
षड्दीर्घयुक्तहृल्लेखा षडङ्गेषु प्रकीर्त्तिता ॥

अथ ध्यानम् ।

तप्तकाञ्चनसंकाशां बालेन्दुकृतशेखराम् ।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम् ॥
चित्रवस्त्रपरीधानां मीनाक्षीं कलशस्तनीम् ।
नृत्यन्तमीशमनिशं दृष्ट्वाऽऽनन्दमयीं पराम् ॥
सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ।
अन्नदाननरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यां नमस्कृताम् ॥
दुग्धान्नभरितं पात्रं सरत्नं वामहस्तके ।
दक्षिणे तु करे देव्या दर्वीं ध्यायेत् सुवर्णजाम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् सनियमस्तद्दशांशेन होमयेत् ।
रम्यपायससर्पिभ्यामेवं भवति सिद्धिदा ॥

अथ मन्त्रान्तरं (शारदायाम्)

माया हृद्भगवत्यन्ते माहेश्वरि पदं ततः ।
अन्नपूर्णे ठयुगलं मनुः सप्तदशाक्षरः ॥
अङ्गानि मायया कुर्यात् ततो देवीं विचिन्तयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्तां विचित्रवसनां नवचन्द्रचूडा-
मन्नप्रदाननिरतां स्तनभारनम्राम् ।
नृत्यन्तमिन्दुशकलाभरणं विलोक्य
हृष्टां भजे भगवतीं भवदुःखहर्त्रीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

यथाविधि जपेन्मन्त्रं वसुयुग्मसहस्रकम् ।
साज्येनान्नेन जुहुयात् तद्दशांशमनन्तरैः ॥

इत्यन्नपूर्णामन्त्रः ।

अथ प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि परकृत्यानिवारिणीम् ।
देवीं प्रत्यङ्गिरां नाम सर्वापद्विनिवारिणीम् ॥
ॐ अँ कँ चँ तथा टँ तँ पँ ह्मँ भ्रौँ ह्रीँ समुच्चरेत् ।
हुँस उक्त्वा हुँ तथाऽस्त्रं स्वाहान्तं षोडशाक्षरः ॥
मुनिर्विधाता छन्दोष्णिग्देवताः षट् प्रकीर्त्तिताः ।
महावायुर्महापृथ्वी महाकाशस्तथैव च ॥
महासमुद्रनामा च महापर्वत एव च ।
महाग्निश्चेति हुँ बीजं ह्रीँ शक्तिः परिकीर्त्तिता ॥
लज्जया तु षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितयाऽऽचरेत् ।
मन्त्रदेवीँ स्ततो मन्त्री ध्यायेत् सुस्थिरमानसः ॥

अथ ध्यानम् ।

नानारत्नार्च्चिराक्रान्तं वृक्षाम्भःस्रवणैर्युतम् ।
व्याघ्रादिपशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ॥
मत्स्यकूर्मादिबीजाढ्यं नवरत्नसमन्वितम् ।
घनच्छायं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत् ॥
ज्वालावलीसमाक्रान्तं जगत्त्रितयमद्भुतम् ।
पीतवर्णं महावह्निं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ॥
त्वरा समुत्थरावौघमलिनं रुद्धभूदिवम् ।

पवनं संस्मरेद्विश्वजीवनं प्राणरूपतः॥
नदीपर्वतवृक्षादिकलिताग्राससंकुला।
आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा॥
सूर्यादिग्रहनक्षत्रकालचक्रसमन्वितम्।
निर्मलं गगनं ध्यायेत् प्राणिनामाश्रयः पदम्॥

पुरश्चरणमाह।

एवं षड्देवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश।
जपेन्मन्त्रं दशांशेन षड्द्रव्यैर्होममाचरेत्॥
व्रीहयस्तण्डुला आज्यं सर्षपाश्च यवास्तिलाः।
एतैर्हुत्वा यथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत्॥

अथ मालामन्त्रस्तत्रैव।

अथ प्रत्यङ्गिरामालामन्त्रः सिद्धः प्रकीर्त्यते।
ॐ ह्रीँ नमः कृष्णवाससेशतेविश्वसहस्रहिम्॥
सिनि सहस्रवदने महाबले पराजिते।
प्रत्यङ्गिरे परसैन्यपरकर्मपदं वदेत्॥
विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनीति ततो वदेत्।
सर्वभूतेति दमनि सर्वदेवान् वदेत् ततः॥
बन्धयुग्मं सर्वविद्या छिन्धिछिन्धि क्षोभयद्वयम्।
परयन्त्राणीति वदेत् स्फोटयद्वितयं ततः॥
सर्वशृङ्खलाँस्त्रोटय त्रोटय ज्वल चोच्चरेत्।
ज्वालाजिह्वे करालेति वदने प्रत्यमुच्चरेत्॥
गिरे ह्रीँ नम इत्येष सपादशतवर्णवान्।
ब्रह्माऽनुष्टुबमुनिश्छन्दो देवी प्रत्यङ्गिरा मता॥
बीजशक्ती तारमाये कृत्यानाशेति योजनम्।

षडङ्गानां विधिश्चात्र षड्दीर्घान्वितमायया ॥

अथ ध्यानम् ।

सिंहारूढातिकृष्णाङ्गीं ज्वालावक्त्रां भयङ्कराम् ।
शूलखड्गकरां वस्त्रे दधतीं नूतने भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः ।
हुत्वा सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥
ग्रहभूतादिकारिष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपन् जलैः ।
विनाशयेत् परकृतं यन्त्रमन्त्रादिसाधनम् ॥

"अथ मन्त्रान्तरं (सिद्धान्तसंग्रहे)

ॐ यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ।
तां ब्रह्मणाऽपनिर्नुद्मप्रत्यक् कर्त्तारमिच्छतु ॥
ह्रीँ मुन्याद्या विनियोगान्ता मलामन्त्रवदस्य तु ।
षडङ्गानि च पादेन पादाद्यैश्चरणेन च ॥
कुर्याद्धृदादिषड्दीर्घहृल्लेखापुटितेन च ।
शिरोभ्रूमध्यवदनगलबाहुद्वयेष्वथ ॥
हृन्नाभिपार्श्वकट्यन्धुपादेषु पदशो न्यसेत् ।
व्यापकन्तं समस्तेन कृत्वा ध्यायेन्महेश्वरीम् ॥
खड्गचर्मधरां कृष्णां मुक्तकेशीं विवाससम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां भीषाभां सर्वभूषणाम् ॥
ग्रसन्तीं वैरिणं ध्यायेत् प्रेरितां शिवतेजसा ।"

पुरश्चरणमाह ।

अयुतं प्रजपेदेनं मन्त्री प्रयतमानसः ।

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ४ पु० अधिको दृश्यते ।

दशांशं जुहुयात पश्चादपामार्गेध्मराजिकाम् ॥
सर्पिषा च समायुक्तां ततः सिद्धो भवेन्मनुः ।
प्रयोगेषु जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं बुधः ॥
तावतैव तु होमेन परकृत्या विनश्यति ।

इति प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

अथ कुब्जिकामन्त्रः ।

(कुलालिकाम्नायतन्त्रे)

श्रीकुब्जिकोवाच ।

कथं तु लघ्विकानाथ वद मन्त्रपदान्विताम् ।
सर्वज्ञां सर्वदा देव लक्षणेन समन्विताम् ॥
उवाच भैरवो ह्येवं लघ्विकां शृणु लघ्विके ।
किन्तु त्वया न वक्तव्या यावन्नादेशितः शिशुः ॥
चत्रेवीति प्रथमं पदं णिकिणिकि द्वितीयकम् ।
छीँ छाँ पदं तृतीयं च खिमुरघोअचतुर्थकम् ॥
मेनणङङेति पञ्चमं ह्रौँ ह्राँ ह्रीँ षष्ठकं पदम् ।
यै काब्जिकुश्रो सप्तमं त्यैवगभ मोनाष्टमम् ॥
एषा सा समया देवी द्वात्रिंशाक्षरमालिनो ।
पञ्चप्रणवमाद्यन्तनियुक्ता लक्षणान्विता ॥
आदिकूटावसाने च द्विचत्वारिंशमालिनी ।
विलोमेनोच्चरेद्देवि गुरुवक्त्रोपदेशतः ॥
रेफसहमिदं कूटं विद्यायाः सप्तमं स्मृतम् ।
श्रीलोपे सन्नियोक्तव्यं जीवितं कुब्जिके मम ॥
स्वमनीषिकातोऽन्यथा सविद्धिष्टोमरोचिभिः ।
गुप्तं गुप्ततरं कार्यं योगिनीहृदयनन्दनम् ॥

यस्माद्भस्मारमित्येवं सर्वस्वं योगिनीकुले ।
अथ चेत् सर्वपीठेषु मातेयं समयात्मिका ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण विह्वलं तु जगत्त्रयम् ।
जायते नात्र संदेह इति माता सुरक्षिता ॥
हृदयाद्यस्त्रपर्यन्तमेकोच्चारेण सुव्रते ।
सिद्धिमार्गे यथा ब्रूमि विलोमेन विलोमतः ॥

यत्राअ यैर्वाणाकक्को च्च्वेवि णिकिणिकि ययात्रत्रने केरि-ताहंमजलकु छाँ छीँ यच्चावकयैपारूहुबखीमुरघोअ मे नणञङ यैखाशि खेशिरवंव ह्रीँ ह्राँ ह्रौँ सेरशि यैपादीलकु यैकाञ्जिकुश्री य-यादह यैलामत्कहत्यैवगभ मोन ।

पञ्चादशाक्षरं हृदयं शिरश्चैव त्रयोदश ।
शिखारुद्राक्षरा ज्ञेया कवचैकोनविंशतिः ॥
तिथिसङ्ख्या भवेन्नेत्रमस्त्रं चैव चतुर्दश ।
पञ्चप्रणव आद्यन्तो यथा विद्या तथाऽन्तिमा ॥
एतत्कौलिकभाषायां कथितं ते सप्रत्ययम् ।
सस्फुटं गुरुवक्त्रस्थं विलोमस्थं न सिध्यति ॥
कौलिकेऽदः समाख्यातं सिद्धमार्गे सुदुर्लभम् ।

अथ ध्यानं (परातन्त्रे)

वृषभे संस्थितं देवं स्वर्वर्णरूपशोभितम् ।
एकवक्त्रं त्रिनेत्रं च भुजाष्टादशधारिणम् ॥
परशुं डमरुं बाणं खड्गमङ्कुशवज्रकम् ।
शङ्खं च वेणुवाद्यं च वरदं दक्षिणे करे ॥
वामे खट्वाङ्गशूलं च धनुः फलकपाशकम् ।

घण्टां कपालं वेणुं च अभयं भयनाशनम् ॥
पट्टेन बन्धितं जानुवामोरुस्था च कुब्जिका ।
एकवक्त्रा त्रिनेत्रा च करुणावरवर्णिता ॥
द्विभुजा वरदा देवी सिंहस्थाऽभयसव्यसु ।
नानाभरणभूषाङ्गी खण्डेन्दुकृतशेखरा ॥
वर्व्वरा केशपाशेन चारुपीनघनस्तनी ।
एवं येध्या कुजा माता पश्चिमाम्नायनायिका ॥

अथ पुरश्चरणम् । (कुलालिकाम्नायतन्त्रे)

अक्षराक्षरसन्तानं योजयेल्लक्षसङ्ख्यया ।
लघ्वीशगुणतुल्योऽसौ हर्त्ता कर्त्ता स्वयं प्रभुः ॥
खेचरीणां पदं सो हि पश्यति ह्यविचारतः ।
निराचारेण योगेन चिन्तयन्तो महेश्वरीम् ॥

इति कुब्जिकामन्त्रः ।

अथ गङ्गामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये रुद्रशीर्षनिवासिन्याः परान् मनून् ।
तारो नमः शिवायै च नारायण्यै पदं वदेत् ॥
दशहरायै गङ्गायै स्वाहान्तो विंशदर्णकः ।
व्यासो मुनिः कृतिश्छन्दो गङ्गा देवी प्रकीर्त्तिता ॥
त्रिवह्निवेदबाणाग्निनेत्रवर्णैः षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वाभरणभूषिताम् ।
रत्नकुम्भसिताम्भोजवरदाभयसत्कराम् ॥
चामरैर्वीजमानां च श्वेतच्छत्रोपशोभिताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेद्दशांशेन जुहुयात् सघृतैस्तिलैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि वामाचाराघनाशनम् ।
बहिर्यजनकर्त्तारः सिद्धाः स्युर्यत्प्रभावतः ॥
तारो नमो भगवति वाग्भवं च हिलिद्वयम् ।
मिलिद्वयं च गङ्गे मां पावयद्वितयं वदेत् ॥
स्वाहान्तस्तारको वर्णो मनुः पापप्रणाशनः ।
ईश्वरोऽस्य मुनिश्छन्दोऽमितं गङ्गा च देवता ॥
रामवेदाङ्गवह्न्यङ्गनेत्रार्णैरङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्ताम्बरां रक्तवर्णां शूलकुम्भवराभयान् ।
करैः संदधतीं स्मेरां कच्छपस्थां सुरादिभिः ॥
तद्रूपाभिः स्वपापस्य नाशाय सुनिषेविताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः प्रोक्तः पद्मैर्दशांशतः ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मरुदादिकनिर्जले ॥
देशे गत्वा जलार्थं तु पुरश्चर्यां समाचरेत् ।
होमादिसर्वं निर्वृत्य गङ्गामावाहयेत् ततः ॥
तत्र कूपादिकं कृत्वा भवेत् तदमृतोपमम् ।
कल्पस्थायितयाऽगाधं समस्तगदनाशनम् ॥

तथा ।

इयमादिमसप्तार्णं त्यक्त्वोक्ता तु नवाक्षरी ।
प्राग्वन्मुन्यादिकं बाणवेदत्रित्रित्रिबाहुभिः ॥
मन्त्रार्णैः स्युः षडङ्गानि पुरश्चर्यार्णलक्षकम् ।

होमद्रव्यादिकं प्राग्वत् सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥
प्रयोगं जलमध्ये तु स्थित्वा जप्त्वाऽयुतं मनुम् ।
ऽयहाद्वर्षाकालेऽपि वृष्टिर्भवति भूयसी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तारो हिलिमिलिद्वन्द्वे गङ्गे देवि नमो मनुः ।
तिथिवर्णोऽस्य मुन्यादिः पूजा पूर्ववदीरिता ॥
त्रिद्वित्र्यक्षिकृताब्ध्यर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ।
एतस्य भजनाज्जन्तोर्नातीर्थे मरणं भवेत् ॥

पुनर्मन्त्रान्तरमाह ।

तारो लज्जा रमा हार्दं ततो भगवती पदम् ।
सम्बुध्यन्तं गङ्गदयिते नमो हुँ तथाऽस्त्रकम् ॥
अष्टादशार्णमन्त्रोऽयं मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ।

इति गङ्गामन्त्रः ।

अथ मणिकर्णिकामन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मणिकर्णीमनुद्वयम् ।
तरो वाक् ह्रीँ रमा कामस्तारोऽयं मणिकर्णिके ॥
नम ॐ तिथिवर्णोऽयं मन्त्रः परमदुर्लभः ।
मुनिर्व्यासोऽतिशक्करी छन्दः स्यान्मणिकर्णिका ॥
देवता चन्द्रनेत्राक्षिद्वीषुत्र्यर्णैः षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

बीजपूरं दक्षहस्ते वामेन्दीवरमालिका ।
बद्धाञ्जलिः श्वेतवस्त्रा त्र्यक्षा चन्द्रनिभानना ॥
पश्चिमाभिमुखी स्मेरा पद्मस्था पद्ममालिका ।
नानालङ्कारभूषाढ्या ध्येया श्रीमणिकर्णिका ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पुण्डरीकैस्त्रिमध्वक्तैर्यजेत् तां गङ्गया समम् ॥

इति मणिकर्णिकामन्त्रः ।

अथ वाग्मतीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाग्मत्याश्च मनुद्वयम् ।
वाग्बीजं प्रथमो मन्त्रो नारदोऽस्य मतो मुनिः ॥
छन्दोऽनुष्टुब्देवता तु वाग्मती परिकीर्त्तिता ।
बीजपूर्वैश्च षड्दीर्घैः षडङ्गविधिरीरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्वेताम्बरां श्वेतवर्णां श्वेतगन्धानुलेपनाम् ।
सुधाकुम्भं च पद्मं च वीणां पुस्तकमेव च ॥
करैर्दधन्तीं मीनस्थां मुक्ताभरणभूषिताम् ।
एवं ध्यात्वा कर्णिकायां यजेद्देवीं षडस्रके ॥
रुद्रधारां मणिमतीं फल्गुं विष्णुमतीं तथा ।
प्रभावतीं भानुमतीं भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥

अथ पुरश्चरणन् ।

लक्षत्रयंजपेन्मन्त्रं पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ।
तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धो मन्त्रः प्रजायते ॥
सद्योजातस्य बालस्य जिह्वायां बीजमालिखेत् ।
मधुना स्वर्णलेखन्या सोऽष्टवर्षः कविर्भवेत् ॥
वाग्मत्यां वाऽथ गङ्गायां पुरश्चर्यां करोति यः ।
द्वितीयामप्रतिग्राही भिक्षाशी चाथ मौनवान् ॥

ब्रह्मचारी भूमिशायी श्वेताम्बधरः शुचिः ।
वाक्सिद्धिं लभतेऽवश्यं दाता भोक्ता त्वयाचकः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

रमात्रपावाग्बीजानि वदेद्वङेऽन्ता च वाग्मती ।
नमो ममेति च पदे धारणां च ततो धियम् ॥
वाचमद्भुतां प्रदेहि स्वाहान्तस्तत्त्ववर्णकः ।
सुन्यासादिकं तथा पूजा पुरश्चर्या च पूर्ववत् ॥

इति वाग्मतीमन्त्रः ।

अथ चन्द्रमन्त्रः ।

(शारदायाम्)

अथोच्यते चन्द्रमसो मनुः सर्वसमृद्धिदः ।
स्वङ्गीशस्थो भृगुर्विन्दुमनुः स्वरसमन्वितः ॥
सोमाय हृदयान्तोऽयं मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।
ऋषिरुक्तो भृगुश्छन्दः पङ्क्तिः सोमोऽस्य देवता ॥
दीर्घभाजा स्वबीजेन मनोरङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पूर्णेन्दुविम्बाननं
मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः ।
हस्ताभ्यां कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितं
स्वस्याङ्कस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धिं भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रसलक्षं जपेन्मन्त्रं साधको विजितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् पायसेन ससर्पिषा ॥

अथ मन्त्रान्तरं (मेरुतन्त्रे)

ॐ आँ श्रीँ श्रुँ सविन्दुः स सोमायेत्यग्निगेहिनी ।

दशाक्षरश्चन्द्रमन्त्रो जप्यश्चायं नृपायुतम् ॥
होमादिकप्रयोगाँश्च सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

इति चन्द्रमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथ भौममनुं वक्ष्ये सर्वरोगनिवारणम् ।
अँ च अङ्गारको ङेऽन्तो हृदन्तश्चाष्टवर्णकः ॥
ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्री भूमिपुत्राः प्रकर्त्तिताः ।
अङ्गषट्कं त्वस्य मनोर्निजबीजेन संमतम् ॥

अथ ध्यानम् ।

नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षाष्टकं जपः प्रोक्तः खदिरोद्भवकैर्हुनेत् ।
साज्यैः संतर्पणं रक्तचन्दनाद्यैः समाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भूमिमन्त्रस्य सिद्धिदम् ।
ॐ हाँ हँसः खँ ख इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥
मुनिर्विरूपो गायत्री छन्दो देवो धरात्मजः ।
षड्भिर्वर्णैः षडङ्गानि मनोः कुर्वीत साधकः ॥

अथ ध्यानम् ।

जवाकुसुमसंकाशं शक्तिं शूलं गदां वरम् ।
मेषसंस्थं रक्तवस्त्रं तं वन्देऽहं धरात्मजम् ॥

अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः ।

रसलक्षं जपेद्धोमं समिद्भिः खदिरस्य च ।

इति तत्रैवोक्तत्वात् ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ क्राँ क्रीँ क्रौँ सविन्दुः सकुजायेत्यग्निगेहिनी ।
दशाक्षरो भौममन्त्रो जप्यश्चायं नवायुतः ॥

पुनर्मन्त्रान्तरमाह ।

ॐ श्रीँ क्लीँ ह्रीँ समुच्चार्य्य ङेऽन्तो भौमो हृदन्तकः ।
दशाक्षरो मनुः प्रोक्तो विरूपाक्षो मुनिर्मतः ॥
गायत्री छन्द उदितं देवता मङ्गलो भवेत् ।
ह्रीँ बीजँ श्रीँ च शक्तिः स्यात् कीलकं क्लीँ प्रकर्त्तितम् ॥
कालादिकं समुच्चार्य्य नियोग ऋणनाशने ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन अङ्गुल्यादिषडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ततो ध्यायेद्रक्तवर्णं रक्तमाल्यांशुकावृतम् ।
कण्ठे कमलमालाढ्यं करयोः शक्तिशूलकम् ॥
मङ्गलानां मङ्गलं च सर्वकामफलप्रदम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं जुहुयात् करवीरजैः ।
जवाप्रसूनैः पुरुभिर्मधुरत्रितयान्वितैः ॥
रक्तचन्दनगन्धाढ्यैर्यजेदरुणभूषणम् ।
विधिना भूमितनयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥

इति कुजमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि बुधमन्त्रं महाद्भुतम् ।
बुं ङेऽन्तं बुधशब्दं च हृदयान्तः षडर्णकः ॥
बुधमन्त्रोऽस्य मुन्याद्या ब्रह्मपङ्क्तिबुधा मताः ।

षडङ्गानि स्वबीजेन विन्यस्यैवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताब्जं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेद्वर्णसाहस्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ब्राँ ब्रीँ ब्रूँ सबिन्दुः सबुधायेत्यग्निगेहिनी ।
दशाक्षरः सौम्यमन्त्रो जपो लक्षैकसङ्ख्यया ॥

इति बुधमन्त्रः ।

अथ बृहस्पतिमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि गुरुमन्त्रं गुरुत्वकृत् ।
बृँ बृहस्पतये हृच्च मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥
छन्दोऽनुष्टुब्मुनिर्ब्रह्मा देवः प्रोक्तो बृहस्पतिः ।
बृँ बीजं पतये शक्तिर्बीजेनैवाङ्गकल्पनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

सुवर्णाभं पीतवस्त्रं रक्तस्वर्णाम्बरादिकम् ।
किरन्तं दक्षहस्तेन तद्राशिं वामपाणिना ॥
स्पृशन्तं सम्यगपरं विपणौ कनकादिकम् ।
नानालङ्कारशोभाढ्यं विद्यासागरपारगम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपित्वाऽशीतिसाहस्रं हुत्वा धेनुघृतेन वा ।
धर्माधर्मादिपीठे तं पूजयेदङ्गदिग्ग्रहैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ज्राँ ज्रौँ ज्रूँ सबिन्दुः सचतुर्थ्यन्तो बृहस्पतिः ।

वह्निस्त्रीविश्ववर्णोऽयं जप्यः पञ्चदशायुतम् ॥

इति बृहस्पतिमन्त्रः ।

अथ शुक्रमन्त्रः ।

तत्रैव ।

वस्त्रं मे देहि शुक्राय हृदयान्तः शुभादिकः ।
एकादशाक्षरो मन्त्रो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥
ब्रह्मा मुनिर्देवता तु शुक्रो दैत्यादिपूजितः ।
षड्भिः पदैः षडङ्गानि ततो देवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

शुक्रं नमाम्यापणस्थं मुक्ताभरणभूषिणम् ।
स्वर्णवासोरत्नधाराविमुग्धान्तःकरद्वयम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं जुहुयाद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रौँ सविन्दुः सशुक्रायेत्यग्निगेहिनी ।
दशाक्षरः शुक्रमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥
उदुम्बरसमिद्भिश्च होमयेत् सकलापदः ।
भूपैः कृता विनश्यन्ति स्त्रीसौख्यमुपजायते ॥

इति शुक्रमन्त्रः ।

अथ शनैश्चरमन्त्रः ।

तत्रैव ।

शनैश्चराय हृदयं शमाद्यश्चाष्टवर्णकः ।
मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रशनैश्चरसमाहयाः ॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे शनैश्चरं वक्रदंष्ट्रं नीलविभूषणम् ।

वामजानुस्थितं वामकरं दक्षे वरं दधत् ॥

'(मार्त्तण्डभैरवतन्त्रे)

नीलाद्रिशोभाञ्चितदिव्यमूर्त्तिः खड्गी त्रिदण्डी शरचापहस्तः ।
शम्भुर्महाकालशनिः पुरारिर्जयत्यशेषासुरनाशकारी ॥

इति ध्यानान्तरमुक्तम् ।'

अथ पुरश्चरणं (मेरौ)

जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ।
षडङ्गग्रहदिक्पालसायुधैः परिपूजनम् ॥
न शनैश्चरभक्तानामापदो न दरिद्रता ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ स इत्युक्त्वा शनैश्चरपदं वदेत् ।
ङेऽन्तं स्वाहा द्वादशार्णो जपः प्रयुतसंमतः ॥
हुनेच्छमीसमिद्भिश्च क्लीवाः सर्वेऽस्य वश्यगाः ।

इति शनैश्चरमन्त्रः ।

अथ राहुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अपरं तु मनुं वक्ष्ये राहवे नम उच्चरेत् ।
राँ पूर्वकः षडर्णोऽयं वर्णैरेवाङ्गकल्पनम् ॥
मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रराहवः परिकीर्त्तिताः ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्वकायं कृताञ्जलिम् ।
विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कार*मन्वहम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्रं तु होमयेद्गोघृतेन च ।

' ' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तक एवोपलभ्यते ।

* मण्डितम्-इति २-३-४ पु० पा० ।

ग्रहाशाधिपशस्तैश्च पूजावृत्तिरुदीरिता ॥
राहोरुपासको भूपः संग्रामे विजयी भवेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ साँ सीँ सौँ सविन्दुः सराहवे त्वग्निगेहिनी ।
दशाक्षरो राहुमन्त्रो जप्यश्चायं दशायुतः ॥
दूर्वाभिर्होमयित्वा च द्विजान् संतर्प्य सिध्यते ।

इति राहुमन्त्रः ।

अथ केतुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

कैँ केतवे हृदित्येवं केतुमन्त्रः षडर्णकः ।
ब्रह्मा मुनिर्मतश्छन्दः पङ्क्तिः केतुश्च देवता ॥
कैँ बीजं वैँ तु शक्तिः स्याद्बीजेनैव षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रविभूषितम् ।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ सबिन्दुः सकेतवे वह्निगेहिनी ।
दशाक्षरः केतुमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥
होमः कुशैः प्रकर्त्तव्यो घृताक्तैस्तर्पणादि च ।
उपासकानामेतस्य केतवोऽग्रे चलन्ति हि ॥

इति केतुमन्त्रः ।

अथ ग्रहमातृकामन्त्राः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहमातृसुसाधनम् ।

ग्रहमातरि तुष्टायां किं ग्रहैर्दुरितैरपि ॥
ग्रहमातरि तुष्टायां सुग्रहैः किं प्रयोजनम् ।
मङ्गला पिङ्गला धन्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥
उल्का सिद्धा संकटा च विकटा गर्भपालिका ।
रुद्रनक्षत्रतश्चाष्टौ जन्मधिष्ण्यक्रमाद्दशाः ॥
फलं नामानुरूपं स्यादेकोपचयतो द्वयोः ।
पिङ्गला सूर्यजननी महाधिव्याधिकारिणी ॥
तुष्टा चेच्छत्रुवर्गस्य रुष्टा कुर्याच्च साधके ।
ब्जौँ बीजं तु समुच्चार्य पिङ्गले वैरिवारिणि ॥
प्रसीद फडिति प्रोक्तस्त्रयोऽग्निशक्तिवर्णकः ।
दीर्घषट्कयुजा पूर्वबीजेन च षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

पिङ्गवर्णां पिङ्गकेशीं पिङ्गनेत्रां धनुःशरान् ।
हस्ताभ्यां दधतीं पद्मयुगलं तां भजाम्यहम् ॥
अथ पूजाविधिं वक्ष्ये सर्वासामेव तन्त्रतः ।
जवापुष्पाणि शस्तानि धूपो गुग्गुलुसम्भवः ॥
घृतप्रदीपो मधुरा नैवेद्याः पायसादयः ।
अलङ्कारास्तथा रक्तास्तथा वस्त्राणि चन्दनम् ॥
स्वर्णालङ्करणैश्चापि सद्द्रव्यैर्बहुपञ्चकैः ।
तर्पयेत् परमेशानि तत्तन्मन्त्रैः सहस्रधा ॥
सुवर्णपत्रे निश्छिद्रे हस्तायामे मनोरमे ।
कृत्वा यन्त्रं तथोक्तं तु योगिनीं तत्र पूजयेत् ॥
तत्तन्मन्त्रवरं जप्त्वा विघ्नशान्त्यै सहस्रशः ।

सप्ताहेन प्रजायेत त्रिविधोत्पातवारणम् ॥
ततश्च कुण्डं विधिवत् कृत्वा च चतुरस्त्रकम् ।
अथ वा स्थण्डिले शुद्धे सुलिप्ते गोमयाम्बुभिः ॥
चतुर्हस्तप्रमाणेन योजयेत् स्थिरमानसः ।
योगिन्यग्निं तु संस्थाप्य कृत्वा पूर्वोदिताः क्रियाः ॥
अन्यासां दशवारं तु विरुद्धायाः सहस्त्रधा ।
विल्वपत्रैस्तत्फलैश्च कमलैर्नागकेशरैः ॥
जुहुयात् पायसान्नेन तथैव कुलवस्तुना ।
सहस्त्रमयुतं वाऽपि लक्षं वा कामनाक्रमात् ॥
अथ पूजां प्रवक्ष्यामि मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।
इच्छां ज्ञानं क्रियां शक्तिं त्रिषु कोणेषु पूजयेत् ॥
मन्मथान् पञ्च तदधः पञ्चकोणेषु पूजयेत् ।
षडङ्गं पूजयेत् पश्चादष्टपत्रेऽन्ययोगिनीः ॥
तद्वाह्यभूपुरे लोकपालानस्त्राणि पूजयेत् ।
पूजाप्रकारो होमश्च सर्वासामयमेव हि ॥
विशेषः पुनरत्रास्ति शत्रूच्छेदाभिचारके ।
खड्गचर्मधरामुग्रां ध्यायेत् षड्भुजधारिणीम् ॥
गरुडासनमासीनां वैरिनिग्रहकारिकाम् ।
लक्षमेकं प्रजप्यादौ जपेल्लक्षं हि तर्पयेत् ॥
सर्वशत्रुविनाशः स्याद्दुःखं नाप्नोति कुत्र चित् ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि चन्द्रमातुश्च साधनम् ॥
मायाद्यो वह्निजायान्तो मङ्गले मङ्गलालये ।
एकादशाक्षरो मन्त्रो मङ्गलायाः प्रकीर्त्तितः ॥

कृत्वाऽऽद्येन षडङ्गानि दीर्घषट्कयुजा तथा ।
ध्यायेदेनां त्रिनयनामुद्यदादित्यसन्निभाम् ॥
दरस्मेरमुखाम्भोजां सिन्दूरसुन्दुराधराम् ।
पद्मद्वयं धनुर्बाणान् दधतीं भुजपल्लवैः ॥
सगुञ्जन्मञ्जुमञ्जीरकाञ्चीगुणविराजिताम् ।
एवं ध्यात्वा महेशानि पूर्ववत् परिपूजयेत् ॥
ततो लब्धमनुं जप्त्वा तारमायापुरःसरम् ।
योगिनीक्षेत्रवटुकगणाधिपबलिं हरेत् ॥
सर्वासामेव पूजान्ते मङ्गलैव प्रसीदति ।

अथ पुरश्चरणमाह ।

योगिन्यास्तु प्रसादार्थं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ।
दुर्योगिन्यनुकूलार्थं जपेत् तत्सङ्ख्यकायुतम् ॥
अदृष्टप्रतिबद्धस्य शुभायास्तु फलस्य च ।
प्राप्तये प्रजपेत् तावत्सहस्रं प्रत्यहं जपम् ॥
प्रकर्त्तव्यो वर्णशतं यावद्दुष्टा तु योगिनी ।
तुष्टाया वर्णदशकं रोगिणं चाभिमन्त्रयेत् ॥
वर्णतुल्येन मन्त्रेण यस्याः सेवापरो भवेत् ।
तस्याः पीडानिवृत्तिः स्याद्वर्णाभ्यन्तर्गतैर्दिनैः ॥
एवं विधिर्नवानां तु विज्ञेयः सुरसत्तमाः ।
योगिनी तुल्यफलदा वाममार्गे च दक्षिणे ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि भ्रामरीं भौममातरम् ।
क्षीँ भ्रामरि पदं चोक्त्वा जय तान्मे अधीश्वरि ॥
भ्रामय क्षीँ षोडशार्णो मन्त्रोऽस्याः परिकीर्त्तितः ।

पिङ्गलावत् सर्वमस्याः सिद्धये शर्करान् दश ॥
मन्त्रयित्वाऽनया मार्गे दशदिक्षु च संत्यजेत् ।
प्रातस्ततो व्रजेन्मार्गं मार्गस्थाः सर्व एव हि ॥
सर्वे मोहं समायान्ति व्याघ्राः सर्पाश्च तस्कराः ।
शुल्किनो दुष्टभूपाश्च नित्यमेवं समाचरेत् ॥
उपानत्कतले यस्य लिखित्वा नाम च व्रजेत् ।
योजनैकं जपेन्मन्त्रं स भ्रमेच्च वसुन्धराम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रिकां बुधमातरम् ।
ह्लूँ बीजं तोयभूयोगाज्जातमादौ समुच्चरेत् ॥
भद्रिके मे मम भद्रं देहीति च पदं पुनः ।
वदेच्च परभद्राणि नाशय द्वितयं ततः ॥
स्वाहान्तो जिनवर्णोऽयं भद्रिकाया मनुर्मतः ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥
मङ्गलावच्छुभानां स्याद्ध्यानं दुष्फलदायिनी ।
पिङ्गलावत् समुद्दिष्टं जपाद्यं प्रोक्तवर्त्मना ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि धन्याख्यां गुरुमातरम् ।
श्रीधनदे समुच्चार्य धन्ये स्वाहाऽष्टवर्णकः ॥
षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ।
नास्ति धन्यासमा काचिदिह लोके फलप्रदा ॥
पुरश्चर्यात्रयं कृत्वा प्राग्जन्मार्जितपातकम् ।
संस्तम्भ्य धन्या ददते धन्यत्वं साधकाय तु ॥
बृहस्पतीश्वरात् पश्चात् काश्यां धन्यां विलोकयेत् ।
पुरश्चर्यां तत्र कृत्वा वैश्यो धन्यः प्रजायते ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि सिद्धां शुक्रस्य मातरम् ।
ह्रीँ सिद्धे मे सर्वमानं समुक्त्वा साधयद्वयम् ॥
हृदयान्तो मित्रवर्णः सिद्धाया मनुरीरितः ।
बीजेनैव षडङ्गानि जपाद्यं प्रोक्तवच्चरेत् ॥
नास्ति सिद्धोपासकानां कर्मासिद्धिस्तु कुत्र चित् ।
उपासका ये सिद्धायाः येनाम्नायेन जायते ॥
तदाम्नायकदेवानां पाकेऽस्याः सर्वमेव हि ।
षट्कर्म सिद्ध्यते तस्य मनोराराधनं विना ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि चोक्त्वा मन्दस्य मातरम् ।
ॐ मम रोगं नाशय भञ्जयैकादशाक्षरः ॥
सर्वरोगापहो मन्त्रो मार्जनात् सप्तघस्रतः ।
उल्कामन्त्रो यस्य सिद्धो न गदास्तस्य मन्दिरे ॥
शीतलायां महामार्यां महिषं लक्षणान्वितम् ।
उल्काप्रीत्यै तमुत्सृज्य नगरे भ्रामयेत् पुनः ॥
नानावाद्यैः परिवृतं वस्त्रादिभिरलङ्कृतम् ।
उत्सृजेत् तं यमाशायामुपद्रवशमो भवेत् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि संकटां राहुमातरम् ।
ह्रीँ संकटे च रोगं मे परमं नाशयद्वयम् ॥
षोडशार्णस्तु मन्त्रोऽयं सर्वदुःखापनोदनः ।
कारागृहे जपेल्लक्षं बन्धमोक्षः प्रजायते ॥
वीरेश्वरादुदक् काश्यां संकटा यत्र संस्थिता ।
तत्र षोडशलक्षाणि जप्त्वा होमस्तु दूर्वया ॥
तस्य सिद्धो भवेन्मन्त्रस्तन्मुखाद्यदि निःसरेत् ।

अमुकस्यामुकं कष्टं गतं तद्धतमेव हि ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि विकटां केतुमातरम्।
तारो नमो भगवति विकटे वीरपालिके॥
प्रसीदयुगलं मन्त्रः प्रकृत्यर्णः प्रकीर्त्तितः।
काश्यां वीरेश्वरासन्ना पश्चिमे विकटा स्थिता॥
तत्र मन्त्रमिमं जप्त्वा ग्रहतप्ताश्च बालकाः।
उदरं चापि बन्ध्यायाः प्रसवत्यास्तथा शिरः॥
पित्रादिभिस्त्यक्तबालास्तथा मातृविवर्जिताः।
साधकस्य करस्पृष्टा नीरोगाश्चिरजीविनः॥

इति ग्रहमातृकामन्त्राः।

अथ दिक्पालमन्त्राः।

तत्रादौ शक्रमन्त्र उक्तस्तत्रैव।

इमिन्द्राय नमश्चेति शक्रमन्त्रः षडक्षरः।
पङ्क्तिश्छन्दो मुनिर्ब्रह्मा देव इन्द्रः प्रकीर्त्तितः॥
मायेति शक्तिँ रिँ बीजं बीजेनैव षडङ्गकम्।

अथ ध्यानम्।

पीतवर्णं सहस्राक्षं वज्रपद्मकरं विभुम्।
सर्वालङ्कारसंयुक्तं नौमीन्द्रं दिक्पतीश्वरम्॥

अस्य पुरश्चरणं तत्रैव।

प्रजपेल्लक्षमेकं तु तिलाज्याभ्यां हुनेत् ततः।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगं कर्त्तुमर्हति॥

अथाग्निमन्त्रः (शारदायाम्)

व्याहृतित्रयमग्नेः स्याज्जातवेद इहावह।
सर्वकर्माणि संभाष्य साधयाग्निप्रिया ततः॥
ताराद्योऽयं मनुः प्रोक्तः पञ्चविंशतिवर्णवान्।

ऋषिर्भृगुर्भवेच्छन्दो गायत्रं देवताऽनलः ॥
विभक्तः पञ्चभिः षड्भिश्चतुर्भिः पञ्चभिस्त्रिभिः ।
द्वाभ्यामङ्गक्रिया प्रोक्ता वर्णैर्मूलमनोः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

अंसासक्तसुवर्णमाल्यमरुणस्रक्चन्दनालङ्कृतं
ज्वालापुञ्जजटाकलापविलसन्मौलिं समुक्ताम्बरम् ।
शक्तिस्वस्तिकदर्भमुष्टिकजपस्रक्स्रुकस्रुवाभीवरान्
तद्दोर्भिर्बिभ्रतमञ्चितत्रिनयनं रक्ताभमग्निं भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

गुरोर्लब्धमनुर्मन्त्री चतुर्दश्यामुपोषितः ।
जपेद्भानुसहस्राणि शुद्धाचारो जितेन्द्रियः ॥
अमावास्यादिने विप्रान् भोजयेन्मधुरोत्तरैः ।
भक्ष्यैर्भोज्यैर्यथाशक्ति दद्यात् तेभ्योऽत्र दक्षिणाम् ॥
भुक्त्वा भोगं समानीय होमद्रव्याणि शोधयेत् ।
अपरं दिनमारभ्य होमं कुर्यादतन्द्रितः ॥
क्रमाद्वटसमिद्व्रीहितिलराजीहविर्घृतैः ।
प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयादनिशं सुधीः ॥
दशाहमेवं निर्वर्त्य विधानेन विधानवित् ।
दत्वा पूर्णाहुतिं सम्यगेकादश्यां द्विजोत्तमान् ॥
संपूज्य तर्पयेद्वित्तैर्यथाविभवमादरात् ।
गुरवे दक्षिणां दद्यादरुणां गां पयस्विनीम् ॥
वासांसि धनधान्यादि दत्वा संप्रीणयेद्गुरुम् ।

अथ यमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

ॐ क्रौँ ह्रौँ आँ च तद्बीजं ङेऽन्तं वैवस्वतं वदेत् ।

धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमो वदेत् ॥
चतुर्विंशतिवर्णोऽयं यममन्त्रोऽखिलेष्टदः।
सिद्धीषिविष्वङ्गयुग्माणैः षडङ्गानि स्मरेद्यमम् ॥
मेघश्यामं प्रसन्नास्यं नानालङ्कारसंयुतम्।
महिषस्थं दण्डधरं संस्तुतं पितृभिर्वृतम् ॥
नानारूपधरैर्दूतैः श्वेतवस्त्रं भजेद्यमम्।

अथ पुरश्चरणम्।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदाज्यान्वितैस्तिलैः।

अथ नैर्ऋतमन्त्रस्तत्रैव।

ॐ क्षँ निर्ऋतये रक्षाधिपतये पदं वदेत्।
धूम्रवर्णाय खड्गेति हस्ताय प्रेतवाहनः ॥
ङेऽन्तस्ततश्च हृदयं त्रिंशदर्णो मनुर्मतः।
ॐ क्षमाद्यैर्हृदन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम्।

किरीटिनं च पिङ्गाक्षं धूम्राभं प्रेतवाहनम्।
नानारक्षोगणैः सेव्यं खड्गचर्मधरं भजे ॥

पुरश्चरणं तत्रैव।

जपेत् त्रिंशत्सहस्राणि गुञ्जाज्याभ्यां हुनेत् पुनः।

अथ वरुणमन्त्रस्तत्रैव।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं वरुणदैवतम्।
तारं वँ वरुणायेति जलाधिपतये वदेत् ॥
वदेच्च शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय संवदेत्।
मकरेति वाहनाय नम एकत्रिवर्णकः ॥
त्रिष्टुप्छन्दो वशिष्ठर्षिर्देवता वरुणो मतः।
ॐ वमाद्यैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम् ।

श्वेतांशुकं दधद्धस्तैः पाशाङ्कुशवराभयान् ।
स्वच्छारविन्दवसतिर्मुक्ताभरणभूषितः ॥
तुन्दिलश्च प्रसन्नास्यो वरुणो निधिदोऽस्तु मे ।

पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्रं तु होमः पञ्चाक्षकैर्मतः ।

अथ वायुमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वायुमन्त्रं महाद्भुतम् ।
तारं यँ वायवे प्राणाधिपतये पदं वदेत् ॥
कृष्णवर्णायाङ्कुशेति हस्ताय मृगवाहना- ।
य नमो गोद्विवर्णोऽयं वायोर्मन्त्र उदीरितः ॥
गणकोऽस्य मुनिश्छन्दो निवृद्वायुश्च देवता ।
पञ्चाङ्गानि मनोरस्य ॐ यँ बीजादिकैः पदैः ॥

ध्यानम् ।

कृष्णवर्णं धावमानं मृगस्थं वेगवत्तरम् ।
पाशाङ्कुशकरं प्रेतकृत्यापरिमलान्वितम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्राणि लाजाज्याभ्यां च होमयेत् ।
सिद्धमन्त्रस्तु तत्कालं भवेद्भूमौ बलाधिकः ॥

अथ कुवेरमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजराजमनून् शुभान् ।
यक्षाय च कुवेराय वदेद्वैश्रवणाय च ॥
धनधान्याधिपतये धनधान्यपदं वदेत् ।
समृद्धिं मे देहि वदेद्दापयाग्निप्रियान्तकः ॥
पञ्चत्रिंशद्वर्णमितो विश्रवा मुनिरीरितः ।

छन्दस्तु बृहती त्र्यब्धीष्वष्टाष्टाङ्गैः षडङ्गकम् ॥

ध्यानम् ।

गारुत्मतनिभं शान्तं मुकुटादिविभूषितम् ।
वरं गदां च दधतं तुन्दिलं यक्षसेवितम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् तिलैः ।
धर्मादिपीठे प्रयजेदङ्गलोकेशहेतिभिः ॥
शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये ।
विल्वमूलोपविष्टेन जप्तो लक्षं धनर्द्धिदः ॥
अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये ॐ श्रीँ ॐ ह्रीँ समुच्चरेत् ।
श्रीँ ह्रीँ क्लीँ श्रीँ क्लीँ च वित्तेश्वराय नम इत्यपि ॥
षोडशार्णोऽस्य मुन्यादि प्राग्वत् त्रिद्विद्विनेत्रकैः ।
पञ्चाक्षिभ्यां षडङ्गं स्याद्ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये कुवेरस्य गजाक्षरम् ।
तारो वैश्रवणायेति स्वाहा पञ्चाङ्गमत्र तु ॥
स्वाहान्तैः प्रणवाद्यैस्तु पञ्चभिर्मन्त्रवर्णकैः ।

ध्यानमाह ।

धनपूर्णं स्वर्णकुम्भं तथा रत्नकरण्डकम् ।
हस्ताभ्यां बिभ्रतं खर्वकरपादं च तुन्दिलम् ॥
धराधस्ताद्रत्नपीठोपविष्टं सस्मिताननम् ।

पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः पूजा प्राग्वन्महाधनी ।
सेवनादस्य भवति यक्षिण्याद्यास्तथा वशाः ॥

अथेशानमन्त्रस्तत्रैव ।

प्रणवं हंसमुच्चार्य ईशानाय वदेत् ततः ।

विद्याधिपतये चेति स्फटिकेति वदेत् ततः ॥
वर्णाय शूलहस्ताय ङेऽन्तश्च वृषवाहनः ।
नमोऽन्त एकत्रिंशद्भिर्वर्णैर्मन्त्र उदाहृतः ॥
ॐ ह्मायैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ।
शक्तीनां मन्त्रो ये च ता विद्याः परिकीर्त्तिताः ॥
पुरुषाणां च ते मन्त्रा विद्यास्तु पुरुषं विना ।
भवन्ति नैव फलदा यथा नारी नरं विना ॥
पुंसां योगो यत्र नोक्तस्तत्रेशानं प्रयोजयेत् ।

अस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपस्तन्त्रान्तरे प्रोक्तः ।

अथ ब्रह्ममन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मणो मन्त्रमुत्तमम् ।
तारं पाशं ब्रह्मणे च लोकाधिपतये वदेत् ॥
रक्तवर्णायोर्ध्वलोकपालकाय वदेत् ततः ।
पद्महस्ताय च पदं ङेऽन्तं स्याद्धंसवाहनः ॥
नमोऽन्तो बाणरामार्णो मन्त्रोऽयं परिकीर्त्तितः ।
तारपाशादिकैः षड्भिः पदैरङ्गहृदन्तकैः ॥
नास्य पूजा तु मच्छापाज्जपोऽस्य परिकीर्त्तितः ।
वर्णलक्षजपादेव निग्रहानुग्रहक्षमः ॥
दशपत्रे यजेदेनं प्रागीशान्तर्दले सुराः ।
न तत्र मम शापोऽस्ति शापः केवलपूजने ॥

अथानन्तमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शेषस्य मनुमद्भुतम् ।
तारं मायामनन्ताय नागाधिपतये वदेत् ॥
गौरवर्णायातलादिसप्तलोकेश्वराय च ।

चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमोऽन्तकः ॥
एवं चत्वारिंशदर्णो मन्त्रोऽनन्तस्य कीर्त्तितः ।
मन्त्रं प्रतिचतुर्दश्यां चतुर्दशशतं जपेत् ॥
दुग्धं हुनेदिन्द्रविप्रान् भोजयेच्च चतुर्दश ।
कुर्याच्चतुर्दशीं भक्त्या धनधान्ययुतो भवेत् ॥
राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं विद्याकामस्तु पण्डितः ।
भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां विशेषात् पूजनं मतम् ॥

इति दिक्पालप्रकरणम् ।

अथ गायत्रीपुरश्चरणादि ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्यामि मन्त्रेशीं गायत्रीं वेदमातरम् ।
यया तु सगुणं ब्रह्म गीयते प्रतिपाद्यते ॥
निर्गुणं यां विना मुक्तिर्न कस्यापि प्रजायते ।
महामायास्वरूपायां महाकालः स्वयं यजेत् ॥
यत्प्रभावादहं त्वं च जातकाल इवापरः ।

सगुणब्रह्मेति । सूर्यमण्डलमध्यस्थगुणत्रयात्मकतेजोरूपमित्यर्थः ।
तदुक्तं (बृहत्सिद्धान्तसारे)

अदित्यमण्डलगतं यत् तेजस्त्रिगुणात्मकम् ।
तदेतत् सगुणं ब्रह्म ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्—इति ॥

निर्गुणमिति । गुणत्रयोपाधिरहितमित्यर्थः ।
यां विनेति । गुणब्रह्माभिधानद्वारा निर्गुणब्रह्मप्रतिपादिकाया अस्या एव मुक्तिहेतुत्वादिति भावः ।

(शारदायाम्)

प्रणवाद्या व्याहृतयः सप्त स्युस्तत्पदादिकाः ।
चतुर्विंशत्यक्षरात्मा गायत्री शिरसाऽन्विता ॥
सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽयं समुदाहृतः ।

ब्रह्मा देव्यादिगायत्री परमात्मा समीरिताः ॥
ऋष्याद्याः प्रणवस्यैते मुनिभिः परिकीर्त्तिताः ।
यमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकाश्यपान् ॥
विश्वामित्रवशिष्ठाख्यौ व्याहृतीनामृषीन् विदुः ।
गायत्र्युष्णिगथानुष्टुब्बृहतीपङ्क्तयः पुनः ॥
त्रिष्टुब्जगत्यौ छन्दांसि कथितानि मनीषिभिः ।
सप्तार्च्चिरनिलं सूर्यो वाक्पतिर्वरुणो वृषः ॥
विश्वे देवाः क्रमादासां देवताः परिकीर्त्तिताः ।

(मेरुतन्त्रे)

गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रोऽतितापसः ।
गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृता ॥

तन्त्रान्तरे ।

अग्निर्मुखं शिरो ब्रह्मा हृद्विष्णुरलिकं शिवः ।
साङ्ख्यायनश्च गोत्रं स्यात् त्रैलोक्यं चरणत्रयम् ॥

(शारदायाम्)

शिरसोऽस्या मुनिर्ब्रह्मा छन्दो देव्यादिका स्मृता ।
गायत्री परमात्मा तु देवता कथिता बुधैः ॥

(मेरुतन्त्रे)

व्याहृतिः सप्तभूराद्या हृन्मुखांसोरुयुग्मके ।
जठरे च क्रमात् न्यसेन्न्यासोऽयं प्रथमः स्मृतः ॥
पादाङ्गुल्याद्यसन्धौ च सन्धौ स्याद्गुल्फपादयोः ।
गुल्फजान्वोस्तथा सन्धौ तथा जानूरुसन्धिषु ॥
लिङ्गे नाभौ च हृदये कण्ठे वर्णान्न्यसेत् क्रमात् ।
कराङ्गुलीमूलसन्धौ मणिबन्धे च कूर्परे ॥
भुजमूले मुखे नासिकायां चापि कपोलयोः ।

नेत्रकर्णभ्रूशिरसि चूडाधोवामकर्णके ॥
दक्षकर्णे मुखे मस्तके च वर्णान् क्रमान् न्यसेत् ।
गायत्र्या अक्षरन्यासो द्वितीयः संप्रकीर्त्तितः ॥
पदानि दश गायत्र्याः शिरोभ्रूमध्यदृङ्मुखे ।
कण्ठहृन्नाभिगुह्येषु जान्वोरङ्घ्र्योरथ न्यसेत् ॥
शिरोदेशे तु गायत्र्याः शिरोन्यासस्तृतीयकः ।
हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम् ॥
शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम् ।
नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम् ॥
अयं षडङ्गन्यासस्तु चतुर्थः परिकीर्त्तितः ।
पज्जानुकटिनाभौ च हृदये कण्ठभालयोः ॥
क्रमाद्व्याहृतयो न्यस्याः परब्रह्मेति शीर्षकम् ।
पुनर्व्याहृतिन्यासोऽयं पञ्चमः परिकीर्त्तितः ॥
तत्सवितुर्हृदयाय वरेण्यं शिरसे तथा ।
भर्गो देवस्य च शिखा धीमहि कवचं स्मृतम् ॥
धियो यो नो नेत्रमुक्तमस्त्रं शेषेण कीर्त्तितम् ।
अयं न्यासस्तु षष्ठः स्यात् षडेते पापहारकाः ॥
प्राणायामत्रयं कृत्वा ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकुशाञ्छुभ्रं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

ध्यानान्तरमुक्तं तन्त्रान्तरे ।

ब्रह्माणी चतुराननाऽक्षवलयं कुम्भं करैः स्रुक्स्रुवौ
बिभ्राणारुणकान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका ।
हंसारोहणकेलिरम्बरमणेर्बिम्बाश्रिताभूषिता
गायत्री हृदि भाविता भवतु नः सम्पत्समृद्ध्यै सदा ॥
मध्याह्ने चान्यसन्ध्यायां ध्यानभेदमथ ब्रुवे ।

तथा ।

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा
खट्वाङ्गत्रिशिखाक्षसूत्रवलयाभीतीर्दधानाऽम्बिका ।
विद्युत्पुञ्जजटाकलापविलसद्बालेन्दुमौलिः सदा
सावित्री वृषवाहनासिततनुर्ध्येया यजूरूपिणी ॥
वृद्धा नीलघनप्रभापरिलसत्पीताम्बराभूषिता
दिव्यैराभरणैरथाङ्गकमले शङ्खं गदां बिभ्रती ।
तार्क्ष्यस्कन्धगतासमस्तजगदाराध्या परा वैष्णवी
ध्येया चैव सरस्वती भगवती सामस्वरूपा सदा ॥

अस्याः पूजायन्त्रमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

पद्ममष्टदलं लेख्यं ह्रीँ कारं कर्णिकास्थितम् ।
द्वौ द्वौ स्वरौ दिग्विदिशं प्रतिपत्रे समालिखेत् ॥
किञ्जल्केषु तदग्रेषु गायत्र्यर्णाँ स्त्रिशस्त्रिशः ।
तद्बहिर्वृत्तयुगलान्तराले तु समालिखेत् ॥
ककाराद्याँस्तथोमापोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म- ।
भूर्भुवः सुवरोमिति यन्त्रे सर्वार्थसिद्धिदम् ॥

(शारदायाम्)

प्राणायामं पुरा कृत्वा गायत्रीं सन्ध्ययोर्जपेत् ।

सप्तव्याहृतिसंयुक्तां गायत्रीं शिरसाऽन्विताम् ॥
त्रिरुच्चरन् धिया प्राणान् धारयेद्यमानसः ।
प्राणायामोऽयमाख्यातः समस्तदुरितापहः ॥
व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं दीक्षितो जपेत् ।

अथास्याः पूजाविधिः ( मेरुतन्त्रे )

ततस्तु पूजयेद्देवीं दशावरणसंयुताम् ।
आदौ संपूज्य देवेशीं कोणाग्रे पूजयेत् ततः ॥
त्रिकोणस्याग्निकोणात् तु प्रादक्षिण्येन देवताः ।
ब्राह्मीं माहेश्वरीं वैष्णवीमिति प्रथमावृतिः ॥
तस्याग्रतस्त्वष्टदिक्षु क्रमादष्टौ प्रपूजयेत् ।
आदित्यमुखाँश्च रविं प्रज्ञां भानुं प्रभां तथा ॥
भास्करं चापि सन्ध्यां च द्वितीयावरणं त्विदम् ।
ततोऽर्चयेदष्टदलकेशरेष्वङ्गषट्ककम् ॥
गायत्र्याश्च तृतीयोक्तं दलमध्ये यजेदिमाः ।
प्रल्हादिनीं प्रभां नित्यां विश्वम्भरां विलासिनीम् ॥
प्रभावतीं जयां शान्तां चतुर्थावरणं त्विदम् ।
ततो यजेद्दलाग्रेषु कान्तिं दुर्गां सरस्वतीम् ॥
विश्वरूपां विशालां च ईशानीं व्यापिनीं क्रमात् ।
विमलां च प्रोक्तमिदं पञ्चमावृत्तिपूजनम् ॥
तदग्रिमे त्वष्टदले एताः पूज्याश्च शक्तयः ।
तमोऽपहारिणीं सूक्ष्मां विश्वयोनिं जयावहाम् ॥
पद्मालयां परां शोभां पद्मरूपां तु षष्ठकम् ।
भवेदावरणं चाग्ने ब्राह्म्याद्याः सप्त मातरः ॥
अष्टमा त्वरुणा प्रोक्ता सप्तमावरणं त्विदम् ।

रविः सितः कुजो राहुः शनिश्चन्द्रो बुधो गुरुः ॥
अष्टमावरणं चैतच्चतुरस्रे दिगष्टके ।
दिक्पाला नवमे प्रोक्तास्तदस्त्राणि च दिङ्मिते ॥
एवं सपूजयेद्देवीं तस्या मुद्राः प्रदर्शयेत् ।

मुद्रास्तु तत्रैवोक्ताः ।

गायत्र्या अथ वक्ष्यन्ते चतुर्विंशतिमुद्रिकाः ।
जपादौ दर्शयेत् तासां देवताश्च तथा फलम् ॥
सुमुखं संहतौ हस्तावुत्तनाकुञ्चिताङ्गुलो ।
प्रल्हादिनी तत्र शक्तिः साधकानन्ददायिनी ॥
संपुटौ पद्मकोशाभौ करावन्योन्यसंहतौ ।
तस्य शक्तिर्नित्यविश्वा विश्वस्यापि प्रियङ्करी ॥
विततं संहतौ हस्तावुत्तानावायताङ्गुली ।
हृदया नाम तच्छक्तिः सर्वेषां हृदयङ्गमा ॥
विस्तीर्णं संहतौ पाणी मिथो मुक्ताङ्गुलिद्वयम् ।
शक्तिस्तु विमला तस्याः प्रभावादनघो भवेत् ॥
द्विमुखाख्या हस्तयोस्तु सम्मुखं सक्तयोर्द्वयोः ।
कनिष्ठयोरेव योगः शक्तिस्तस्याः सदा विधा ॥
त्रिमुखाख्या हस्तयुग्मं संसक्तानामिकाद्वयम् ।
संयुक्तं शेषमङ्गुल्यो भिन्नाः शक्तिः प्रभाती ॥
चतुर्मुखा हस्तयुग्मं संसक्तं मध्यमायुतिः ।
शेषाङ्गुल्यस्तु संभिन्ना लोला शक्तिः प्रकीर्त्तिता ॥
मुद्रा पञ्चमुखी तद्वत् तर्जन्योर्यत्र संयुतिः ।
अपराङ्गुलयो भिन्नाः शक्तिः शान्तिश्च शान्तिकृत् ॥
भवेत् षण्मुखमुद्रा सा संपूर्णाङ्गुलियोजनम् ।

कनिष्ठाद्वितयं हित्वा शक्तिर्दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥
अधोमुखं नाम मुद्रा न्युब्जौ हस्तावधोमुखौ ।
आकुञ्चिताग्रौ संयुक्तौ शक्तिरस्याः सरस्वती ॥
व्यापिकाञ्जलिकं नाम मुद्रा हस्तौ तु तादृशौ ।
विशेषोऽत्र तु चोत्तानौ विश्वरूपाऽत्र देवता ॥
शकटं नाम मुद्रा सा बद्धाग्राङ्गुलिकौ करौ ।
अधोमुखौ बद्धमुष्टी विशाखा शक्तिरत्र तु ॥
यमपाशं बद्धमुष्ट्योः करयोर्ग्रन्थिते यदा ।
तर्जन्यौ तत्र तलगे वामा ज्ञेयाऽत्र देवता ॥
ग्रन्थिताख्याऽन्योन्यसन्धिलग्नाश्चाङ्गुलयो यदि ।
उत्तानौ चोच्छ्रिताङ्गुष्ठा वामा शक्तिः समीरिता ॥
सम्मुखोन्मुखमुद्रा तु सम्बद्धोर्ध्वाङ्गुली करौ ।
दक्षिणाधोमुखो वाम ऊर्ध्वमाप्यायनी भवेत् ॥
विलम्बा नाम सा मुद्रा चोत्तानोन्नतकोटिकौ ।
यस्यां करौ तु विमला तस्याः शक्तिः प्रकीर्त्तिता ॥
मुष्टिकं तु यदा मुष्टी भवतोऽन्योन्यसंयुते ।
उत्तानौ तु करौ तत्र शक्तिः प्रोक्ता तमोमयी ॥
मत्स्यस्तु सम्मुखीभूतौ युक्तानामकनिष्ठिकौ ।
ऊर्ध्वसंयुक्तवक्राङ्गुल्यः शेषाः शक्तिर्हिरण्मयी ॥
कूर्मस्त्वधोमुखो वामस्तादृग्दक्षेण पृष्ठके ।
समाक्रान्तस्तस्य शक्तिः सूक्ष्मा सूक्ष्मार्थसाधिनी ॥
वाराही दक्षिणस्योर्ध्वे वाममुत्तानकं करम् ।
स्थापयित्वाऽधोमुखं तन्नामयेद्विश्वयोनिका ॥

सिंहाक्रान्तं नाम मुद्रा हस्तौ चेदायताङ्गुली ।
दत्तौ श्रवणयोरूर्ध्वं शक्तिरस्या जयावहा ॥
महाक्रान्तं नाम मुद्रा प्राग्वदाकुञ्चिताग्रकौ ।
करौ कर्णस्थितौ शक्तिः प्रोक्ता पद्मालयाभिधा ॥
मुद्गरं किं चिदूर्ध्वं तु गतयोर्वामतर्जनी ।
धृता दक्षिणहस्तेन परा शोभाऽत्र देवता ॥
पल्लवाख्या भवेन्मुद्रा त्वङ्गुल्यः पल्लवीकृताः ।
देव्यग्रे दर्शयेच्छक्तिर्गदारूपीति कीर्त्यते ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

चतुर्विंशतिलक्षाणि पुरश्चरणमुच्यते ।
क्षीरौदनतिलान् दूर्वाः सिद्धौदनसमिद्वराः ॥
पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ।
तर्पणादि ततः कृत्वा गुरून् संतोष्य यत्नतः ॥
प्रयोगानाचरेद्विद्वाँस्तदनुज्ञापुरःसरम् ।

इति गायत्रीपुरश्चरणविधिः ।

अथ व्याहृतीनां व्याख्या ।

(प्रपञ्चसारे)

भूःपदाद्या व्याहृतयो भूशब्दस्तदि वर्त्तते ।
तत्पदं सदिति प्रोक्तं षण्मात्रत्वात् तु भूरतः ॥
भूतत्त्वात् कारणत्वाच्च भुवःशब्दस्य सङ्गतिः ।
सर्वश्रीकरणात् स्वार्थतया च स्वरितीरितम् ॥
महत्त्वाच्च महःशब्दो महस्तेन समीरितः ।
तदेव सर्वजननात् तस्मात् तु व्याहृतिर्जनः ॥
तपो ज्ञानतया चैव तथा तापतया स्मृतम् ।

सत्यं परत्वादात्मत्वादनन्तज्ञानतः स्वयम् ॥

व्याहृतीनां प्रणवैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनामन्तःसम्बन्ध उच्यते ।
अकारो भूरुकारस्तु भुवो मार्णः स्वरीरितः ॥
बिन्दुर्महस्तथा नादो जनः शक्तिस्तपः स्मृतम् ।
शान्तिः सत्यमिति प्रोक्तं सत् तत् परतरं पदम् ॥

अथ गायत्रीव्याख्या पूर्वकं प्रणवस्याहृषोणां गायत्र्यैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनां गायत्र्यैक्यमथोच्यते ।
अत्रापि तत्पदं पूर्वं प्रोक्तं तदनुवर्ण्यते ॥
तद्‌द्वितीयैकवचनमनेनाखिलवस्तुनः ।
सृष्ट्यादिकारणं तेजोरूपमादित्यमण्डले ॥
अभिधेयं सदानन्दं परं ब्राह्माभिधीयते ।
यत् तत् सवितुरित्युक्तं षष्ठ्येकवचनात्मकम् ॥
धातोरिति समुत्पन्नं प्राणिप्रसववाचकात् ।
सर्वासां प्राणिजातानामिति प्रसवितुः सदा ॥
वरेण्यं वरणीयत्वात् सेवनीयतया तथा ।
भजनीयतया सर्वैः प्रार्थनीयतया स्मृतम् ॥
पूर्वस्याष्टाक्षरस्यैवं व्याहृतिर्भूरिति स्मृता ।
पापस्य भर्जनाद्भर्गो भक्तस्निग्धतया तथा ॥
देवस्य वृष्टिदानादिगुणयुक्तस्य नित्यशः ।
प्रभुत्वेन प्रकाशेन दीप्यमानस्य वा तथा ॥
ध्यै-च्चिन्तायामतो धातोर्निष्पन्नं धीमहीत्यदः ।
निगमाद्येन *दिव्येन विद्यारूपेण चक्षुषा ॥

---

* देवेशि इति ४ पु॰ पा॰ ।

दृश्यो हिरण्मयो देव आदित्ये नित्यसंस्थितः ।
हीनतारहितं तेजो यस्य स्यात् स हिरण्मयः ॥
यः सूक्ष्मः सोऽहमित्येवं चिन्तयामः सदैव हि ।
द्वितीयाष्टाक्षरस्यैव व्याहृतिर्भुव ईरिता ॥
धियो बुद्धिर्मनोरस्य च्छान्दसत्वात् समीरितम् ।
कृतश्च लिङ्गव्यत्यासः सूत्रात् सुप्तिङुपग्रहात् ॥
यत् तु तेजोनिरुपमं सर्वदेवमयात्मकम् ।
भजतां पापनाशस्य हेतुभूततयोच्यते ॥
न इति प्रोक्त आदेशः षष्ठ्यसौ युष्मदस्मदोः ।
तस्मादस्माकमित्यर्थः प्रार्थनायां प्रचोदयात् ॥
तृतीयाष्टाक्षरस्यापि व्याहृतिः स्वरितीरिता ।
एवं दश पदान्यस्यास्त्रयश्चाष्टाक्षराः स्मृताः ॥
षडक्षराश्च चत्वारः स्युश्चतुर्विंशदक्षराः ।
इत्थम्भूतं यदेतस्य देवस्य सवितुर्विभोः ॥
वरेण्यं भजतां पापविनाशनकरं परम् ।
भर्गोऽस्माभिरभिध्यातं धियस्तन्नः प्रचोदयात् ॥
उक्त्वैवमत्र गायत्री पुनस्तच्छिर उच्यते ।
आपो ज्योती रस इति सोमाग्न्योस्तेज उच्यते ॥
तदात्मकं जगत् सर्वं रसस्तेजोद्वयं स्मृतम् ।
अमृतं तदनाशित्वाद्बृहत्वाद्ब्रह्म गद्यते ॥
यदानन्दात्मकं ब्रह्म सत्यज्ञानादिलक्षणम् ।
तद्भूर्भुवः स्वरित्युक्तं सोऽहमित्योमुदाहृतम् ॥
एतत तु वेदवत् स्यात् तु वेदस्य शिर उच्यते ।

लक्षणैरिति निर्दिष्टो वेदसारेषु निष्ठितः ॥
फलार्थी फलमाप्नोति मोक्षार्थी मोक्षमृच्छति ।

इति व्याहृतीनां व्याख्या ।

अथ प्रणवमन्त्रः ।

( प्रपञ्चसारे )

अथ प्रणवसंज्ञकं प्रतिवदामि मन्त्रं वरं
सजापमपि सार्चनं सहुतक्लृप्ति सोपासनम् ।
अशेषदुरितापहं विविधकामकल्पद्रुमं
विमुक्तिफलसिद्धिदं विमलमानसैः सेवितम् ॥
आद्यः स्वरः समेतोऽमरेण सधसप्तमश्च विन्दुयुतः ।
प्रोक्तः स्यात् प्रणवोऽत्र त्रिमात्रिकः सर्वमन्त्रसमवायी ॥
मन्त्रस्यास्य मुनिः प्रजापतिरथ च्छन्दश्च देव्यादिका
गायत्री गदिता जगत्सु परमात्माख्यस्तथा देवता ।
अङ्गीवैर्युगमध्यगध्रुवयुतैरङ्गानि कुर्यात् स्वरै-
र्मन्त्री जातियुतैश्च सत्यरहितैर्वा व्याहृतीभिः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

विष्णुं भास्वत्किरीटा*ङ्गदवलयगलाकल्पहारोदराङ्घ्रि-
श्रोणीभूषं सुराजन्मणिमकरमहाकुण्डलामण्डिताङ्गम् ।
हस्तोद्यच्चक्रशङ्खाम्बुजगदममलं पीतकौशेयवासो-
विद्योतद्भासमुद्यद्दिनकरसदृशं पद्मसंस्थं नमामि ॥

अस्य पुरश्चरणं कोटिजपः ।

तदुक्तं तत्रैव ।

दीक्षितो मनुमिमं शतलक्षं संजपेत् प्रतिहुनेच्च दशांशम् ।
पायसैर्घृतयुतैश्च तदन्ते विप्रभूरुहभवाः समिधो वा ॥

---

* भास्वत्कलापा–इति० ४. पु० पा० ।

सर्पिःपायसशालोतिलसमिधाज्यै हि योऽनले जुहुयात् ।
ऐहिकपारत्रिकमपि स तु लभते वाञ्छितं फलं न चिरात् ॥

पूजाविधिमुक्त्वा—

इत्थं मन्त्री तारमनुर्जाप्यहुतार्च्चा-
भेदैरङ्गीकृत्य च युञ्ज्यादपि योगान् ।
यैः संलब्ध्वा चेह समग्रां श्रियमन्ते
विष्णोर्धाम प्राप्य स योगी लभते सत् ॥

इति प्रणवपुरश्चरणम् ।

अथ वैदिकमृत्युञ्जयमन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

मृत्योर्भयं तु सर्वेषां सर्वदा सर्वकर्मसु ।
तस्मिन् जिते तु देवादिमोक्षान्तं साधयेज्जनः ।
तदर्थं संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम् ॥
उपासना तस्य न स्याद्वंशेऽल्पायुश्च रोगभाक् ।
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।
वशिष्ठोऽस्य मुनिश्छन्दोऽनुष्टुब्देवस्त्रियम्बकः ॥
त्रिचतुर्वसुगोपञ्चत्रिभिर्वर्णैः षडङ्गकम् ।

ध्यानमाह ।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशसंस्थं शिवं
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥

पुरश्चरणम् ।

जपेल्लक्षमिमं मन्त्रमेवं ध्यायेज्जितेन्द्रियः ।

जुहुयाद्दशभिर्द्रव्यैरयुतं घृतसंप्लुतैः ॥

दशद्रव्याणि तत्रैवोक्तानि ।

विल्वं पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपौ ।
पायसं दधि दूर्वां च तथैकेन सहस्रकम् ॥
तर्पयित्वाऽभिषिञ्च्याथ ब्राह्मणाँस्तोषयेद्गुरुम् ।
एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेऽयं महामनुः ॥

इति वैदिकमृत्युञ्जयपुरश्चरणम्

अथ रुद्राध्यायपुरश्चरणविधिः

तत्रैव ।

श्रीविष्णुरुवाच ।

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ।
कालस्त्वमसि लोकानां महामाया त्वियं परा ॥
आवयोः के तुष्टिकरा मन्त्राः सूक्तानि तद्वद ।
येन भुक्तिश्च मुक्तिश्च क्लेशो नैव च नैव च ॥

श्रीशिव उवाच ।

विष्णो गोप्यं त्वया पृष्टं न वाच्यं तान्त्रिके द्विजे ।
तन्त्रे मे तामसं रूपं त्वया पृष्टं तु सात्त्विके ॥
भोगमोक्षैकनिलयं चतुर्वेदोत्तमोत्तमम् ।
मन्त्रं स्तोत्रेश्वरं तन्मे जानीहि शतरुद्रियम् ॥
छन्दांस्यनुष्टुबादीनि अघोरोऽस्य मुनिर्मतः ।
देवताऽस्य भवेद्रुद्र आदित्यः परपूरुषः ॥

(पद्धतौ)

श्रीरुद्रप्रीतये शतरुद्रियजपे विनियोगः ।

अथ कराङ्गन्यासौ तत्रैव ।

ॐ अग्निहोत्रात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ दर्शपौर्णमासात्मने तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ चातुर्मास्यात्मने मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ निरूढपशुबन्धात्मने अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ ज्योतिष्टोमात्मने कनिष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ चत्वारिंशच्छतसहस्रात्मने करतलपृष्ठाभ्यां नमः ।

एवं हृदयादिन्यासः ।

महान्यासस्तु विस्तरभयादुपेक्षितः ।

अथ ध्यानम् ।

आपातालनभःस्थलान्तभुवनब्रह्माण्डमाविस्फुर-
ज्ज्योतिस्फाटिकलिङ्गमौलिविलसत्पूर्णेन्दुवान्तामृतैः ।
अस्तोकाप्लुतमेकमीशमनिशं रुद्रानुवाकान् जपन्
ध्यायेदीप्सितसिद्धयेऽद्भुतपदं विप्रोऽभिषिञ्चेच्छिवम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

पार्थिवोक्तप्रकारेण लिङ्गपूजां ततश्चरेत् ।
आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः ॥
आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर ।

आत्वावहन्तु हरयः सचेतसश्चेतैरश्वैः सह केतुमद्भिः ।
वाताजलैर्बलवद्भिर्मनोजवैरायाहि शीघ्रं मम हव्याय शर्वों नमः ।

एतु ते रुद्रभावसं तेन परो मूजवतोऽतीहि अवततधन्वा पिनाकवसः कृत्तिवासा अहिंसन्नः शिवोऽतीहि ।

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्याँ आविवेश ।

प्रसन्नो भव देवेश सुमुखो भव शङ्कर ।
शान्तो भवस्व चात्र त्वं मम चाभिमुखो भव ॥

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ यावत् पूजावसानकम् ।
तावत् त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन् सन्निधो भव ॥
अभिषेकं ततः कुर्यादमृतैः पञ्चभिः क्रमात् ।
पश्चाच्छुद्धोदकेनाथ ततः पूजनमाचरेत् ॥
रौद्रीं धारां ततः कुर्यात् प्रोच्यते तद्विधानकम् ।
नमस्ते रुद्राग्नाविष्णु इत्यध्यायद्वयेन च ॥
आवर्त्तनमिति प्रोक्तं गङ्गास्नानफलप्रदम् ।
आवर्त्तनाभिषेकं तु यः कुर्यात् प्रत्यहं नरः ॥
तस्य दैनन्दिनं पापं दैवजं नाशमाप्नुयात् ।
सन्ध्यावन्दनतः क्षीणं तच्चेत् प्राग्जन्मजं हरेत् ॥
एकः पाठो नमस्तस्य अनुवाकः परस्य च ।
एवं भवा नमस्ते स्युरग्नाविष्णुस्तथैककम् ॥
इयं रुद्री समाख्याता रौद्रपापनिकृन्तनी ।
अनया प्रत्यहं यस्तु कुर्याल्लिङ्गेऽभिषेचनम् ॥
जन्मजन्मकृतं पापं वर्षे वर्षे प्रणश्यति ।
सप्तजन्मकृते पापे नष्टे लक्ष्मीर्विवर्धते ॥
वंशश्च स्थिरतामेति यशो याति दिगन्तरम् ।
सूते चास्य यथा रूपं तथा तोये प्रणश्यति ॥
रुद्रीभिरेकादशभिर्लघुरुद्रः प्रकीर्त्तितः ।
अनेन सिक्तं यैर्लिङ्गं ते न पश्यन्ति भास्करिम् ॥
एकादशभिरेतैस्तु महारुद्रः प्रकीर्त्तितः ।
निर्धनानां द्विजानां च महापातकनाशनः ॥
अनेन विहितो होमः सोमयागफलं स्मृतम् ।

अनधिकाराद्दीक्षायां कलौ पक्षस्त्वयं मतः ॥
एकादशमहारुद्रैरतिरुद्रः प्रकीर्त्तितः ।

तथा ।

शाखायां यस्य तु यथा स्वाध्यायौ पठिताबुभौ ।
पठनीयौ तथा तेन शाखाभेदं न कारयेत् ॥
न रुद्रो यस्य शाखायां तैत्तिरीयं पठेत् स तु ।
शाखा तु यजमानस्य ब्राह्मणद्वारतः कृते ॥
अथ वा तैत्तिरीया स्यान्नान्या शाखा प्रयुज्यते ।
शाखामिश्रं कृतं कर्म यजमानं विनाशयेत् ॥
धनलोभात् परार्थं यो विप्रो मामभिषिञ्चति ।
स तु चाण्डालवर्ज्जयो निर्धनः सप्तजन्मसु ॥
कुटुम्बिना तु यत्नेन धनार्थं यच्च पूजनम् ।
कृते चेज्जपदानाभ्यां तद्दशांशोऽस्य निष्कृतिः ॥

तथा ।

रुद्रो न यस्य शाखायां परिशिष्टान्वितं स तु ।
पठेद्रुद्रं तैत्तिरीयं लुप्तशाखस्तमेव हि ॥
मन्त्रः प्रयोगसहितो रुद्राध्यायोऽथ वक्ष्यते ।
असंस्कृताय नो वाच्यं तान्त्रिकाय कदा च न ॥

तत्रादौ ।

ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव-इत्यारभ्य माहिंᳲसीः पुरुषं जगत्-इत्यन्तानां पुरश्चरणप्रयोगः ।

दशलक्षं जपेद्विद्वानृच एता जितेन्द्रियः ।
लक्षमेकं प्रजुहुयात् प्रत्यृचं योऽञ्जलिप्रभम् ॥
यवगोधूमकं क्षौद्रतिलाज्यदधिसंयुतम् ।
यत्किञ्चित् कार्यमुद्दिश्य तस्य सिद्धिः प्रजायते ॥

एवमेव सहस्रं चेदेकादशदिनं हुनेत् ।
ग्रामगं बालमरकं नश्यते नात्र संशयः ॥
कुमारमरकं ग्रामे द्वादशाहेन नश्यति ।
होमः पञ्चदशाहं तु राष्ट्रोपद्रवनाशनः ॥
होमाद्विंशतिरात्रेण देशोपद्रवनाशनम् ।
पृथिव्युपद्रवो नश्येन्मासमात्रेण होमतः ॥
गवामुपद्रवे जाते गोष्ठमध्ये तदा हुनेत् ।
वैकङ्कतसमिद्भिर्वाऽयुतं शान्तिः प्रजायते ॥
अयुतद्वयहोमेन महाशान्तिर्भवेद्ध्रुवम् ।

शिवेन वचसा—इत्यादि ।

जपेदयुतसङ्ख्याकं शापमोक्षः प्रजायते ।
शिशिरे तु जले प्रातर्लक्षं जप्त्वा सुखी भवेत् ॥

अध्यवोचत्—इति ।

लक्षमेकं पुरश्चर्या होमः स्याच्छ्वेतसर्षपैः ।
व्याधिसंक्रामणी चेयं प्रयोगान्तरमुच्यते ॥
सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा सर्षपानातुरस्य तु ।
चतुर्दिक्षु क्षिपेद्रक्षा दशदिग्भ्यः प्रजायते ॥
सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा पथि गच्छँस्तु सर्षपान् ।
दशदिक्षु क्षिपेन्नित्यं पथि क्षेमः प्रजायते ॥
ब्रह्मराक्षसयक्षाद्यैः पिशाचप्रेतभूतकैः ।
आविष्टसर्षपैस्ताड्यः सप्तवाराभिमन्त्रितैः ॥
पुनः पुनर्मन्त्रपाठपूर्वकं ते धनार्थिनः ।
धनं गृहीत्वा गच्छन्ति करे तं द्रुतमेव च ॥

शिखामाक्रम्य च यजेत् ताडयेद्गौरसर्षपैः ।
रात्रिं समस्तां स्कन्दादिग्रहपीडा विनश्यति ॥
अनेन मन्त्रयित्वा तु दद्याच्छास्त्रोक्तमौषधम् ।
तत्कालं तद्गुणाय स्यादन्यथाऽसौ यथाविधि ॥
अभिमन्त्र्य जलं दद्यात् सर्वसत्त्वभवां रुजम् ।
हरेत् सर्वग्रहाणां च सर्षपैस्ताडनात् तथा ॥
सर्वभूतोद्भवां पीडां भस्मधारणतो जयेत् ।
दिवसे च तथा रात्रौ त्रिशूलमभिमन्त्रयेत् ॥
सहस्रैकं सहस्रकं क्षिपेन्नागह्रदे तु तत् ।
त्रिशूलं बान्धवोपेता नाशं गच्छन्ति पन्नगाः ॥
भस्माभिमन्त्रितं कृत्वा पन्नगाक्रान्तमन्दिरे ।
क्षिपेत् तत्तालशब्देन पन्नगोत्सादनं भवेत् ॥

असौ यस्ताम्र-इत्यादि ।

उदयास्तमये सूर्यमेताभ्यामुपतिष्ठते ।
अष्टोत्तरशतं त्र्यब्दमक्षयान्नोद्भवो भवेत् ॥
सहस्रमभिजप्तेन क्षीरेण स्नापयेच्छिवम् ।
अब्दैकेन प्रसन्नः स्याद्घृतस्नानाच्च वर्षणम् ॥
अतसीनां तु पुष्पाणि हुनेदयुतसङ्ख्यया ।
अवशो वश्यतां याति सविता वरदो भवेत् ॥
अर्कवृक्षोद्भवैर्दुग्धैराप्लुतानां तु होमयेत् ।
अयुतं चार्कसमिधां सक्तुं च सजलं ददेत् ॥
होमान्ते भगवान् सूर्यो वृष्टिं मुञ्चति नान्यथा ।
मन्त्रद्वयं तु भजतामिष्टां सिद्धिं प्रयच्छति ॥